ॐ श्री परमात्मने नमः

सुन्दर समाज का निर्माण

लेखक

स्वामी रामसुखदास

॥ श्री हरि ॥

नम्र निवेदन

प्रस्तुत पुस्तक मे हमारे श्रद्धेय स्वामी जी श्री रामसुखदास जी महाराज के द्वारा वि स २०३८ मे बीकानेर चातुर्मास तथा वि म २०३६ मे जयपुर चातुर्मास के अवसर पर दिये गये कुछ सर्वोपयोगी प्रवचनो का सग्रह किया गया है। इस साहित्य के प्रेमी पाठक-गरण पूज्यवर स्वामी जी से परिचित है ही। आपके सिद्धान्तो, उपदेशो तथा वचनो से असख्य नर-नारी आध्यात्मिक लाभ उठा चुके हैं और उठा रहे है।

वर्तमान समय मे प्रस्तुत प्रवचनो की उपादेयता गृहस्थियो, भाइयो, बहिनो, साधको, विद्यार्थियो अर्थात् समाज के सभी वर्गों के लिये है। आवश्यकता केवल लाभ लेने के निश्चय की है। इन बातो को पढने सुनने मात्र से भी लाभ तो होता ही है, पर काम में लेने से बहुत विशेष लाभ होता है। अत. पाठको से निवेदन है कि इन प्रवचनो मे कही गयी बातो के अनुसार जीवन बनाने की चेष्टा करे व परम लाभ प्राप्त करें।

—प्रकाशक

प्रकाशक—गोविन्द भवन कार्यालय,
गीता प्रेस, गोरखपुर

सम्वत्–२०४०
प्रथम सस्करण–१८,०००
सम्वत्–२०४२
द्वितीय सस्करण–१०,०००

मूल्य—दो रुपये पचास पैसे

*

मिलने का पता—
गीता प्रेस, पो० गीता प्रेस,
गोरखपुर (उ० प्र०)

*

विजयलक्ष्मी प्रिटिग वर्क्स दिल्ली-११००९२

॥ श्री हरि ॥

नम्र निवेदन

प्रस्तुत पुस्तक मे हमारे श्रद्धेय स्वामी जी श्री रामसुखदास जी महाराज के द्वारा वि स २०३८ मे बीकानेर चातुर्मास तथा वि स २०३६ मे जयपुर चातुर्मास के अवसर पर दिये गये कुछ सर्वोपयोगी प्रवचनो का सग्रह किया गया है। इस साहित्य के प्रेमी पाठक-गण पूज्यवर स्वामी जी से परिचित है ही। आपके सिद्धान्तो, उपदेशो तथा वचनो से असख्य नर-नारी आध्यात्मिक लाभ उठा चुके है और उठा रहे हैं।

वर्तमान समय मे प्रस्तुत प्रवचनो की उपादेयता गृहस्थियो, भाइयो, बहिनो, साधको, विद्यार्थियो अर्थात् समाज के सभी वर्गो के लिये है। आवश्यकता केवल लाभ लेने के निश्चय की है। इन बातो को पढने सुनने मात्र से भी लाभ तो होता ही है, पर काम में लेने से बहुत विशेष लाभ होता है। अत पाठको से निवेदन है कि इन प्रवचनो मे कही गयी बातो के अनुसार जीवन बनाने की चेष्टा करे व परम लाभ प्राप्त करें।

—प्रकाशक

॥ श्री हरि ॥

विषय-सूची

प्रधान विषय	पृष्ठ स

।। श्री हरि ।।

प्रवचन—१

समाज की जिम्मेवारी-बडो पर

समाज की जिम्मेवारी समाज मे बडे कहलाने वालो पर होती है। जैसे, घर मे कोई समस्या आती है, तो घर मे जो मुख्य होते हैं, उन पर ही उसकी जिम्मेवारी होती है। ऐसे समाज की जिम्मेवारी जो समाज मे बडे कहलाने वाले होते हैं, उनकी होती है। उस जिम्मेवारी का पालन कैसे किया जाय ? -इसमे एक मार्मिक बात है कि अपने कर्तव्य को समझा जाय। आज बडे-बडे अनर्थ होते हैं, उनमे बाह्य हेतु बताये जाते है, वे भी ठीक हैं, परन्तु मूल मे विचार कर हम देखते है, तो जो साधु और ब्राह्मण हैं, ये अपने कर्तव्य का ठीक पालन नही कर रहे हैं। इससे बहुत अनर्थ हो रहे है और अगाडी भी कितने होगे, इसका कोई पता नही। गीता मे कहा है—

> 'यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जन ।
>
> स यत्प्रमाण कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ।। (गीता ३/२१)

श्रेष्ठ पुरुष जो जो आचरण करते है, दूसरे मनुष्य वैसा ही आचरण करते है। स यत्प्रमाण कुरुते' श्रेष्ठ पुरुष जिसको प्रमाणित कर देते है, लोकस्तदनुवर्तते' लोग उसका अनुसरण करते है। तात्पर्य निकला कि जैसे श्रेष्ठ पुरुष करते है, वैसे ही

अन्य-पुरुष करते है और वे जैसा कहते हैं, वैसा ही अन्य लोग करते हैं।

'लोकसग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुं महसि' (गीता ३/२०)

श्रेष्ठ पुरुष लोक-सग्राहक होते है। यह लोकसग्रह क्या होता है ? दो तरह से लोक-सग्रह होता है। श्रेष्ठ पुरुषो के आचरण से और श्रेष्ठ पुरुषो के वचन से। उन दोनो मे देखा जाय तो 'यत् यत् आचरति श्रेष्ठ' यहा पर 'यत्' 'यत्' दो पद दिये है और 'तत्' 'तत्' 'एव' तीन पद दिये है। 'स यत्प्रमाण कुरुते लोकस्तदनुवर्तते' यहा 'यत्' व 'तत्' दो ही पद है। आचरण मे पाँच पद है। इसका आशय क्या निकला ? जहाँ मनुष्य के आचरणो का असर पाच गुणा पडता है, वहाँ वचनो का असर दो गुणा पडता है।

मूल मे कमी हमारे भीतर है। कहाँ से शुरू हुई ? साधु आश्रम मे हम आ जायें, कपडे बदल लिये मन मे फूँक भर गई कि बस हम तो साधु-बाबाजी हो गये। अब तुम गृहस्थ हो तो हमारी सेवा करो। तुम चेला हो, हम गुरुजी हैं। ऐसे केवल भेष बदलने मात्र से बडे हो गये। बडे हो नही गये, अपने को बडा मान लिया। यह अपने आपको बडा मानने का काम करना है ही नही भारतीय सस्कृति मे। दूसरो को बडा मानने का हमारा सिद्धात है। अपने को बडा मानने वाला अभिमानी होता है। आसुरी-सम्पत्ति सब की-सब अभिमान की छाया मे ही पुष्ट होती है और रहती है। जैसे, बहेडे की छाया मे कलियुग निवास करता है। ऐसे 'अह' अभिमान (अपने को बडा मानना) की छाया मे ही सम्पूर्ण आसुरी सम्पत्ति निवास

करती है। साधु-मात्र बन जाने से अपने को बडा मान लिया। बाबाजी हो गये। ब्राह्मण के घर जन्म लेने मात्र से अपने को बडा मानने लग गये कि हम बडे हैं। अब ब्राह्मण के घर जन्म लेने मात्र से क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र इनको बडी हीन दृष्टि से देखने लग गये। साधु मात्र होने से गृहस्थियो को हीन दृष्टि से देखने लग गये। तो ये जो रहे मुख्य, ये समाज मे, हो गये अभिमानी। होना तो चाहिये था नम्र! कोई बडा होता है, वह अभिमान के कारण नही, नम्रता के कारण बडा होता है। साधु और ब्राह्मण बडे हुए हैं, किस वास्ते हुए? किस कारण से हुए?

श्रेष्ठ गुण निराभिमानता

"त्यागो गुणो गुणशताद्‌धिको मतो मे",
विद्याविभूषयति त यदि किं ब्रवीमि।
शौर्यं हि नाम यदि तत्र नमोऽस्तु तस्मै,
तच्च त्रय न च मदोऽस्ति विचित्रमेतत्॥

सबसे पहले त्याग है। मैंने एक दिन सुनाया भी था। लोग कहते हैं ब्राह्मणो के हाथ मे पुस्तकें रही तो लिख दिया कि ब्राह्मण सबसे ऊँचा। तो यह बात है नही। वास्तव मे ब्राह्मण ऊँचा है, यह ब्राह्मणो ने अपने हाथ से अपने को ऊँचा बनाया हो ऐसी बात है नही। जो पुरुष अपनी बडाई करेगा, वह तो पतित हो जायेगा गिर जायेगा वह। जो अपने मन मे भी अपने को बडा मानता है, वह गिर जाता है। क्योकि अपने मन से बडा तो हो ही गया, अब तो गिरना ही बाकी रहा। अपने को

बडा न माने, यह बात थी। उनमे त्याग मुख्य था, त्याग। ब्राह्मणो के लिए नौ धर्म बताये, "शमो दमस्तप शौच "।" क्षत्रियो के लिये सात बताये, वैश्य के लिये तीन बताये, शूद्र के लिये एक। ब्राह्मण नौ के पालन करने से जिस पद को प्राप्त होता है, शूद्र एक के पालन से उस कल्याण पद को प्राप्त हो जाता है। इनकी तो उदारता रही है, त्याग रहा है सदा ही। अभिमान नही रहा है। अभिमान नही करते थे।

> यत प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदततम्।
> स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धि विन्दति मानव ॥
>
> (गीता १८/४६)

ब्राह्मण अपने कर्मों के द्वारा चारो ही वर्णों मे रहने वाले परमात्मा का पूजन करे। सबका 'अभ्यर्च्य' मे अन्वय है। पूजन की दृष्टि से बात कही। कथा सुनावे, व्याख्यान दे शिक्षा दे, गुरु बने तो अपने मे बडप्पन का अभिमान न रखे अपितु उनसे प्यार करे। छोटे जितने होते हैं, सब के सब प्यार के पात्र होते हैं। ये ठेठ (आरम्भ) से ब्राह्मण और साधु अपने से छोटो को प्यार करना शुरु करेंगे तो क्षत्रिय और वैश्य भी अपने से छोटो से प्यार करेंगे तो हरिजन आदि का तिरस्कार अपमान नही होगा। पर आप तो अभिमान करके दूसरो का तिरस्कार करते है और कहते हैं कि उनका आदर करो।

व्याख्यान देने के अधिकारी

आप लोगो से मैं नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ। मै जो

बातें कहता हूँ वे शास्त्रो की, सन्त-महात्माग्रो की ऋषि मुनियो की, भगवान की बातें हैं। मैं मेरी बात नही कहता हूँ। मेरी बात कोई दीखे तो उसको आप मानना मत। शास्त्रों की दीखे तो आपको, मेरे को, सबको ही मानना है। इसका अर्थ यह नही है कि मैं कहने लग गया, वह तो बडा हो गया, आप सुनने वाले छोटे हो गये। ऐसी बात नही है। छोटा बडा नही। सनकादिको मे एक वक्ता बन जाते हैं, तीन श्रोता बन जाते हैं। ऐसी कथा आती है। दशम स्कन्ध मे ८७ वें अध्याय मे जहाँ वेदो का वर्णन आता है न, जहा वेद-स्तुति करते हैं, वेद-स्तुति का सवाद सनकादिको का है। तो वे छोटे, बडे थोडे ही हो गये। भगवच्चर्चा करनी है अपने नो ठीक तरह से।

अगर इनमे छोटा बडा देखा जाय तो वडे सुनने वाले होवे हैं, बडा सुनाने वाला नही होता है। सुनाने वाला तो नौकर है। उसको समय पर हाजिर होना पडेगा। सुनने वाले मालिक हैं आवें न आवें, थोडे आवें, देरी से आवें, बीच मे उठ जायँ, पर सुनाने वाला ऐसा कर सकता है क्या? आवे न आवे, देरी से आवे और बीच मे उठ जाय। कैसे हो सकता है? वह तो दास है सबका! वहम पडता है कि मैं बडा हू। वास्तव मे बडा नही है। अगर भगवत्सबधी बातें विशेपता से कहता है तो उसका लाभ जितना वक्ता को होता है, उतना श्रोता को नही होता है। वक्ता जितनी बात कहता है न, उतनी उसको सोचनी पडती है। कहनी पडती है। घटा भर बोलता है तो उस विपय को समाधि की तरह ठीक करना पडता है और उसमे मन लगाना पडता है। मन जितना अधिक लगता है बुद्धि मे बात उतनी ही पकड मे आती है। बुद्धि मे

वात जितनी अधिक आती है उतनी उसके आचरणो मे आती है। और, लोगो के सामने अच्छी वात कहनी पडती है, क्योकि इज्जत अपनी रखनी है। इज्जत के लिये भी कहता है तो अच्छी बातें कहेगा, तो अच्छी वाते फुरणा होगी उसका आचरण अच्छा होगा। सुनने वालो पर थोडे ही है जिम्मेवारी इतनी।

वहुत सी बातें हैं, अब थोडे समय मे मैं क्या कहूं? वास्तव मे कहने वाले को लाभ वहुत होता है। कहने वाले के सिद्धान्त बुद्धि मे आते हैं, बुद्धि के द्वारा मन की कल्पना मे आते हैं। मन की कल्पना के बाद शब्दो में आते हैं। जितना शब्दो से आता है विषय, उतना लोगो के कानो तक नही पहुंचता और कानो तक पहुंचता है, उतना उनका मन नही पकडता है। जितना मन पकडता है, उतनी बुद्धि मे उस विषय की स्थिरता नही होती। बुद्धि मे जितना जंचता है, उतना उनके आचरण मे नही आता। तो सुनने वालो के आचरण अच्छे होते हैं तो वक्ता मे अच्छाई कितनी पहले आई? और कहां तक पहुंची वह? इतने पर भी सुनने वालो का सुधार होता है तो कहने वाले का कितना सुधार होगा?

मेरे तो महापुरुषो के सामने ऐसी बातें हुई हैं। मैंने ऐसा निवेदन किया कि मेरा बोलने का मन नही करता। कहने का, व्याख्यान देने का मन नही करता। पर उन्होने कहा, करो, उन्होने प्रेरणा दी विशेषता से। लोगो को तो, 'व्याख्यान देना है—हमे मिले मौका', ऐसी बात होती है। मेरे भी बोलने की मन मे आई है कि मैं सुनाऊं, परन्तु मैंने विचार किया है, तो विचार के द्वारा सुनाने की बात बढिया नही लगी हमे।

मैंने सन्तो से यह बात सुनी है कि ससार मे सबसे नीचा अगर काम है, तो व्याख्यान देने का है। ऐसा सन्त-महात्माओ से मैंने सुना है अपने कानो से। सबसे नीचा काम है यह। सबसे ऊँचा काम टट्टी-पेशाब फेंक देना, झाड़ू लगा देना, सफाई कर देना। सबसे ऊँचा काम है यह। जो कहता है मैं सेवा करता हू तो सेवा मे जितना नीचा काम होगा, उतना करने वाले को लाभ ऊँचा होगा। जितना ऊँचा काम होगा, उतना लाभ नीचा होगा।

आप सोचो, विचार करो। कहने का अधिकारी कौन होता है? कहने का अधिकारी वह होता है, जिसने अपने मे उन बातो को ठीक अनुभव करके देखा है। अनुभव के बिना कहता है तो सन्तो की वाणी मे आता है 'करनी बिन कथनी कथे, **अज्ञानी दिनरात। कूकर ज्यों भुसता फिरै सुनी सुनाई बात।।** कुत्ते का दृष्टान्त क्यो दिया? एक जगह कोई कुत्ता भुसता है तो दूसरे मुहल्ले वाला कुत्ता भी भुसने लगता है, तीसरे मे भी भुसता है सब कुत्ते भुसने लग जाते हैं। उन कुत्तो को पूछा जाय तुम किसको भुसते हो-यह तो पता नही। एक भुसता था सबने शुरु कर दिया। तो जैसे कुत्ता सुनकर भुसने लग जाता है ऐसे कही से सुन लिया, अपने भी कहना शुरू कर दिया। अरे **भाई! बातो को चाबते नहीं, करके देखा नही,** तब तक कहने का क्या अधिकार है? तो हमारे बडा सकोच हो गया। मेरे को तो तैयार किया उन्होने कि तुम बोलो। प्रेरणा की है। लोगो के मन मे आती है कि हम भी बोलें। परन्तु भाई! यह खतरनाक चीज है। बडा बनना खतरनाक है।

हमने देखा अमर कोष मे विद्वान के नाम मे वहा "दोषज्ञ"

नाम आता है। अब 'दोषज्ञ' कोई बढिया है क्या? बढिया तो गुणज्ञ होता है। दोषो का ज्ञान हो उसे 'पडित' कहते हैं। तो दोषो का ज्ञान होगा तो दोषो के साथ सम्बन्ध होगा। सम्बन्ध होगा तो दोष अपने मे आवेंगे ही। मेरे ऐसी श का हुई है। एक जगह सत्स ग की बात है। मैं जिनको अच्छा समझता था, आदरणीय समझता था, मैंने उनके सामने उनकी बाते सुनकर कहा 'किसी का दोष मत देखो, यह बात तो आप कहते हो, और व्याख्यान सुनाने वाला यदि दोष नही देखेगा तो दोष देखे बिना उसका निराकरण कैसे करेगा, और लोगो के आगे कैसे विवेचन करेगा? कहेगा कैसे? चेतायेगा कैसे–ऐसा करो और ऐसा मत करो। इस वास्ते दोष दृष्टि तो करनी पडेगी। उन्होने बडा सुन्दर समाधान किया कि यह दोष दृष्टि नही है यह एक निर्दोष दिदृक्षा (देखने की इच्छा) है। दोष-दृष्टि वह होती है कि दोष देखकर राजी होवे उसकी निन्दा करके प्रसन्न होवे। तब तो वह है दोष-दृष्टि। उनमे जो दोष है, उससे दुख होता है, उन दोषो को कैसे दूर किया जाय, ऐसे भाव से कहता है वह दोष-दृष्टि नही है, क्योकि वह निर्दोष देखना चाहता है। नीयत के ऊपर बात है न।

बड़प्पन का अभिमान

आज हमारे जो आफत आ रही है तरह तरह की–उससे बचने का उपाय क्या है? मूल से साधु और ब्राह्मण किसी को नीचा न माने यहा से शुरू होगा। केवल कपडा रगने मात्र से क्या हो गया? हमारे सतो द्वारा तो बडी तीक्ष्ण आलोचना की गई है। कहने मे सकोच होता है। हमारी निंदा हो जाती है।

भेष पहर भूलो मति भाई, प्राथर ग्रौर गदेडी वाही।

गधे के ऊपर लादते है न भार, तो नीचे ग्राथर होता है उसे 'ग्राथरिया' कहते हैं। ग्राथरिया वदलने से क्या गधेडी बदल गई ? ऐसे कपडा वदलने से क्या वह बदल गया ? यह बात दूसरी है कि गहस्थाश्रम वालो को चाहिये कि भेष धारी ग्रा गया तो रोटी दे दो। यह तो उनका वडप्पन है। पर साधु को ग्रपने मे बडप्पन का ग्रारोप कर लेना तो गलती है न। साधु ग्रपने साधुग्रो की महिमा कैसे कह सकता है ? वैसे ही ब्राह्मण ब्राह्मण जाति की महिमा कैसे कह सकता है ? ऐसे पुरुष-पुरुष जाति की महिमा कैसे कह सकता है ? ग्रगर कहता है तो उसकी नीयत ठीक नही है।

वडप्पन तो ग्रौरो को देने का है, यह लेने का नही है। सेवा करना, सुख पहुँचाना, खटना, परिश्रम करना—यह है ग्रपने लेने का। ग्रौर वडाई, मान-ग्रादर सत्कार ये देने के है, लेने के नही हैं। सेवा करने की है, लेने की नही। भगवान् विष्णु सबसे वडे माने जाते हे इसमे कारण क्या है ? पालन शक्ति है। सवका पालन-पोषण करने का काम हाथ मे लिया है। 'सुहृद सर्वभूतानां' वे प्राणी-मात्र के सुहृद हैं। उनके पापी-पुण्यात्मा का भेद नही है। इस वास्ते वडे हैं। ग्रौर भगवान का निवास है, चरणो मे। इसी वास्ते बडो के चरण छूकर प्रणाम करते हैं। विष्णु भगवान का निवास स्थान कहाँ है ? चरणो मे हैं। इस वास्ते वे वडे है। गीता मे उपदेश दिया—

'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धि विन्दति मानव'

(१८/४६)

अपने कर्मों के द्वारा परमात्मा का पूजन करके मनुष्य सिद्धि को प्राप्त होता है। ब्राह्मण मे 'शमो दमस्तप' आदि जो गुण है, उनके द्वारा वह पूजन करे। और 'परिचर्यात्मक कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्' । 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य' शूद्र का कर्म भी पूजन है। पूजन के द्वारा पूजन करना तो डबल पूजन हुआ कि नही ? उसको नीचा कैसे माना जाय ? अपने मन मे दूसरे को नीचा मानना यह अभिमान का परिचायक है। माता बहनो के लिये लिखा कि तुम पति को परमेश्वर मानो, तो यह माताओ के लिये कहा है, न कि पुरुषों के लिये कहा है कि मैं परमेश्वर हूँ, नही तो ब्याह किए हुए तो सब परमेश्वर हो जायेंगे। कुंवारा बेचारा रह जायेगा बाकी। वह परमेश्वर किसका बने ? यह तात्पर्य नही है।

गोरखपुर के पास एक गाव की बात है—एक बेचारी बुढिया हरिजनो के घर की थी, वह पानी भरने के लिये गई। तो उन्होंने पानी उसका भरा नही। बहुत देर बैठी रही, उसने पानी मांगा, दिया नही। तो उस समय एक यवन भाई ने देखा तो उससे कहा 'तुम क्या करती हो ? तुम हमारे यहाँ आ जाओ सब अधिकार मिलेगा तुम्हें'। वह भोली-भाली ग्रामीण थी बेचारी। उस भाई ने कई प्रलोभन दिये। तो उस माई ने पूछा, 'वहाँ गगाजी हैं क्या तुम्हारे ? यमुनाजी, प्रयागराज आदि हैं क्या' ? ये तो नहीं है। तो हम नही जायेंगे। तो हम ऐसे यवन नही बनेंगे, जहाँ गगाजी नहीं है। तो क्या है यह ? यह है गगाजी के प्रति श्रद्धा भीतर से। मरने पर भी हड्डियां डाली जाय तो कल्याण हो जाय। ऐसा हमारा धम है, धर्म शास्त्र है। धार्मिक जितनी चीजें हैं, इनके प्रति आजकल

अश्रद्धा कराई जाती है और फिर कहते हैं उनका निरादर करते हो तुम। लोग निरादर क्यो करते हैं ? अपने खुद पहले शास्त्रो का, सिद्धान्तो का, धम का निरादर करते है, इससे यह दशा होती है अगाडी। अगर आप ठीक तरह से सिद्धान्त को मानो तो कितनी विचित्र लाभ की बात है।

सज्जनो ! मैंने पुस्तकें देखी हैं, सन्तो से मिला हूँ, मैंने बहुत विचित्र-विचित्र बातें पढी हैं, और सन्तो से सुनी हैं। मेरी एक धारणा बनी है कि केवल पुस्तक पढने से इतना पूरा बोध नहीं होता, जो अच्छे जानकार सन्तो से बातें सुनने से वास्तविक बोध होता है। उसमे मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि ससार मे कितना ही नीच प्राणी क्यो न हो, उसका भी उद्धार हो सकता है, भगवान मिल सकते हैं, वह तत्वज्ञ हो सकता है, जीवनमुक्त हो सकता है। और वह वही हो सकता है, जिसमे अपना अभिमान नही। तो जो आज हरिजन माने जाते हैं, नीचे माने जाते है उनको ज्ञान जितनी जल्दी सुगमता से हो सकता है, उतनी जल्दी सुगमता से अपने आप को श्रेष्ठ मानने वालो को नही हो सकता। कारण क्या ? बडप्पन का अभिमान पतन करने वाला है उस अभिमान को दूर करना ही पडता है।

'दम्भो दर्पोऽभिमानश्च' अभिमान आसुरी सम्पत्ति है, उन नीचे वर्ण वालो के अभिमान काफी दूर हुआ रहता है, इस वास्ते कहा है —

नीच नीच सब तर गये राम भजन लवलीन,
जाति के अभिमान से डूबे सभी कुलीन।

'अभिमान' का यह अर्थ नही कि मैं निंदा करता हूँ। मैं ऊँचे वर्ण को ऊँचा ही मानता हूँ। परन्तु वे ऊचे तभी होंगे, जब ऊचा कार्य करेंगे। काय नीचा करेंगे तो ऊँचापन कितना टिकेगा। वह ठहर नही सकता। जो कार्य अच्छा करेगा तो, वह अपने आपको भले ही नीचा माने, पर दुनिया उसे बड़ा मानने लग जायेगी। जबर्दस्ती बड़ा मानेगी, क्यो वास्तव में वह बड़ा है। जैसे मैंने दृष्टान्त दिया था कि कृष्ण भगवान् घोड़े हाँकने वाले बने, सारथी बन गये। अठारह अक्षौहिणी सेना क्षत्रियो की, उन क्षत्रियो के बीच मे अवतार लेने वाले भगवान् घोड़े हाकते हैं एक साधारण आदमी के। यह कोई बड़ा काम है क्या? बहुत छोटा काम है, उसे स्वीकार किया। भगवान को घोड़ों का कोचवान होते लाज नही आई। आप छोटे-से छोटे बन गये तो क्या हुआ? जिस समय उधर भीष्मजी महाराज शंख बजाते हैं कौरव सेना मे सबसे पहले। तत शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानक गोमुखा' फिर दूसरे शंख बजाते हैं। यहाँ पाण्डव सेना मे 'पाञ्चजन्य हृषीकेशो देवदत्त धनंजय' सबसे पहले कृष्ण भगवान शंख बजाते हैं। तो जो बड़ा होता है उसको वहम नही होता है कि मेरा छोटा आसन हो जायगा। मैं छोटी जगह कैसे बैठूँगा। यह वहम उन्ही को होता है, जो छोटे होते हैं वास्तव मे और बड़ा बनना चाहते हैं। कोई छोटा न मान ले, यह डर लगता है। वे अगर वास्तव मे बड़े है तो भय किस बात का? आप स्नेह करो, प्यार करो। हमारा जो समाज है वह धर्म की प्रधानता को लेकर और मुक्ति का उद्देश्य लेकर है। दूसरो का उद्देश्य प्राय है, अपनी टोली बढ़ाने का है, उनमे धर्म नही है, मुक्ति नही है—यह मैं नही मानता हूँ। मुक्ति सब मे होती है और सबमे अच्छे-अच्छे आचार्य, सन्त-

महात्मा हुए हैं। और अब भी सब मे अच्छे आदमी हो सकते हैं। परन्तु आज जो यह चाल-चलन चल रहा है, यह क्या है ? यह केवल वोट ज्यादा आ जाय हमारे। इस वास्ते टोली बनाने की बात चल रही है। यह तत्त्व नही है, तथ्य की बात नही है, परन्तु भोले-भालो को तो लोभ ही दिया जाय और क्या किया जाय ?

उपयोग की महिमा

तीसरे, ये धनी धन-सग्रह मे लगे है। मेरे को दुःख होता है पर अब किससे कहू ? कोई सुनता नही। धन केवल सग्रह करने के लिये नही है। सज्जनो ! धन उपयोग के लिये है। महिमा वस्तु की नही है, न वर्ण की है, न आश्रम की है, न वस्तु की है, न परिस्थिति की है, न योग्यता की है—महिमा उसके उपयोग की है। सदुपयोग किया जाय तो कल्याण करने वाली हो जाय धनवत्ता भी और दरिद्रता भी, बीमारी भी और स्वस्थता भी, पण्डिताई भी और मूखता भी। दुरुपयोग किया जाय तो पण्डिताई, बडाई, धनवत्ता ये सभी नरको का रास्ता हो जावेगा। तो धन का उपयोग बडा है। मानव शरीर की महिमा गायी गयी तो मानव शरीर के उपयोग की महिमा है। सज्जनो ! शरीर की महिमा नही है।

छिति जल पावक गगन समीरा।
पच रचित अति अधम सरीरा॥

(मानस ४/१०/४)

उत्तरकाण्ड मे आया है

'नर तन सम नहि कवनिउ देही'

(मानस ७/१२०/६)

एक ही ग्रथ मे गोस्वामी जी महाराज ने एक ही लेखनी में, एक जगह उत्तम बताया है और एक जगह अधम बताया है।

'जीव चराचर जाचत तेही', 'नरक स्वर्ग अपवर्ग निसेनी। ज्ञान विराग भगति सुभ देनी'॥ तो यह श्रेष्ठ क्यो है? उसका विवेचन करते हुए कहते हैं—ये छ चीजें मिलती है मनुष्य शरीर से। उन छ चीजो मे एक नम्बर नरक, यह महिमा है। मनुष्य शरीर सबसे बढिया है। क्यो? कि साहब नरक मिल जाय इससे। तो यह महिमा हुई कि निंदा? और बातें भी आई हैं महिमा के प्रसग मे।

सात प्रश्न किये हैं गरुडजी ने भुसु डिजी से। उनमे सबसे पहला प्रश्न है यह। सबसे उत्तम शरीर कौनसा? मनुष्य का। उसकी महिमा मे यह कहते हैं तो अर्थ क्या निकला? दुरुपयोग किया जाय तो नरक मिलेगा। चौरासी लाख योनियाँ मिलेंगी। महान कष्ट पाना पड़ेगा। उपयोग अच्छा किया जाय तो महाराज! स्वर्ग मिल जाय वैराग्य मिल जाय, ज्ञान मिल जाय। भगवान की श्रेष्ठ भक्ति मिल जाय इसी शरीर में, इस वास्ते इस शरीर की महिमा है। अगर यह श्रेष्ठ बातें नही की तो ऐसा शरीर मिलने पर भी नरक ही मिलेगा। इस वास्ते ऐसे ही धन का आप उपयोग करो।

मेरे एक बात का दु ख है, आप कृपा कर दु ख दूर करो। आपने सग्रह करने की ही वृत्ति कर रखी है। केवल सग्रह करना बस, सहस्रपति, लखपति, करोडपति बन जावें हम! खर्च कर नही सकते। अगर लाख रुपये रोकड़ी हो जाय और उन रुपयो से वह व्यापार आदि करता है और लडके काम करते हैं, करते-करते उस लाख रुपये मे से कहीं दो-चार दस

हजार खर्च हो जाय तो बिगडता है मालिक कि तुम रोटी कमा कर खाओगे ? अरे मूलधन खर्च करते हो ? कमाओ, खाओ और कुछ जमा करो । तो मूलधन के क्या तूली लगाओगे ? क्या करोगे बताओ ? कोरा अभिमान बढाओगे। परन्तु अब धुन हो गई, एक ही बस । धन इकट्ठा करना है । सज्जनो ! इकट्ठा करना क्या था ? 'यक्ष वित्त पतत्यध.' यक्षवित्त होता है वह । यक्ष राक्षस हैं न, कुबेर आदि, ये धन इकट्ठा करते है । महाभारत मे कथाए आती है ।

अगस्त्य ऋषि थे, महाराजा से मिलने गये तो महारानियो के पास मे चली गई ब्राह्मणी । उसके साधारण कपडा । रानियो के बडा गहना रत्नो का, बढिया साडिया पहनने के लिये । ब्राह्मणी से रानियो ने कहा कि हमारे तो आप गुरु हो । आपके ऐसी पोशाक ! तो वह सग लग गया । घर पर आये तो ब्राह्मणी ने कहा 'हमारे भी गहना होना चाहिए । आपके जो यजमान हैं, शिष्य है, उनके तो ऐसा बढिया-बढिया गहना है और उनके गुरु के ऐसी बात ! ' महाराज ने समझा कुसग लग गया । फिर राजा के पास गये तो राजा ने सब बता दिया कि 'महाराज ! यह बात है । इतना खर्चा है, कहा से लावें ?' फिर दूसरे के पास गये ऐसे बहुत से राजाओ के पास घूम लिये । सबने आय-व्यय बता दिया । है नही पास में तो कहा से दे ? तो कहा मिलेगा ? एक राक्षस के पास पहुँचे, उसके पास सोना मिला । उससे सोना लेकर आये । पाच-दस दिन लग गये । उधर उतने दिन मे ब्राह्मणी ने, जैसा भोजन मिलता था, वैसा अन्न खाया । जिससे मन शुद्ध हो गया । जब ऋषि सोना लेकर पहुँचे और बताया कि इस तरह से राजाओ के यहा तो धन

मिला नही। एक राक्षस के यहा धन मिला है। अब गहना कराना है, जितना करालो। तो बोली कि मेरे को गहना नही चाहिए। मेरे तो गहना आप हो।

मेरे आपका जितना शृगार है उतना राजा महाराजाओ का शृगार कहा है? राजा महाराजा भी आपके चरणो मे गिरते है। तो इतना सुन्दर गहना है कहाँ? गहना तो आप ही हो, हमे सोना नही चाहिए। पाछा दे आओ, हमे नही चाहिए। तो धन इकठ्ठा करना यक्ष-राक्षसो का काम है। धन कमाओ और अच्छे-से अच्छे काम मे खर्च करो। सत्यता के सहित शुद्ध रीति से कमाओ और उदारता सहित खर्च करो। इसका सदुपयोग करो। अपना जितना धन है, वह उपयोग मे कैसे आवे? वह भी हित मे कैसे लगे? ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहितेरता'

प्राणि मात्र के हित मे रत हो। अपने पास जो कुछ है, धन हो, तन हो, मन हो, विद्या-बुद्धि हो, योग्यता हो, पद हो, अधिकार हो जो कुछ मिल जाय, उसके द्वारा सबका हित कैसे हो? प्राणि-मात्र के हित मे प्रीति होनी चाहिए, सग्रह मे नही। जो कुछ मिला है, अपना सम्पूर्ण के हित मे लगाओ, जिससे कल्याण होगा। तो ऐसा भाव ठेठ से, ऊपर से शुरु करो। अब वहाँ से शुरु करते हैं कि उनकी सेवा करो, उनका आदर करो। मैं तो कहता हूँ छोटा आदर का ही पात्र होता है। अपमान का, तिरस्कार का पात्र होता ही नही कभी। वह अयोग्य है कि योग्य, यह देखा नही जाता। छोटे बालक को योग्य देखा जाता है क्या? प्यार करते हैं, गोदी लेते हैं, तो क्या योग्यता देखते हैं कि कितना पढा-लिखा है, गुणवान है, कि बलवान है, क्या विलक्षणता है? वह छोटा है—यही विलक्षणता है उसमे।

ऐसे जो-जो छोटे है उनका आदर करो, तो ठेठ आदर हो जायेगा। पर आप तो अभिमान वैसा ही रखो और चाहो कि वे हमारा आदर करें, ऐसा कसे हो जायेगा। इसके अतिरिक्त ऐसे भी करो कि दूसरो को अपने देखो मत। आप लोगो से कहना है कि हम लोगो से—साधुओ से, ब्राह्मणो से भूल हो जाय, तो हम भूल कर गये तो आप लोग भी भूल करोगे ? भूल कौनसी बढ़िया बात है भाई। इस वास्ते आप तो उदारता रखो। प्यार करो, स्नेह करो, अपनाओ। आज कहते हैं छूआ-छूत से अनर्थ हुआ है, छूआ-छूत मात्र से नही हुआ है। इसमे स्वार्थ-वृत्ति ज्यादा है। हम तुम्हारे घर भोजन कर लेगे, ऐसे नही कि अन्न, वस्त्र, रुपये, पैसे कपडा तुम्हे दे देगे। उनके घर जाकर छाछ पी लेगे तो, घाटा और डाल दिया उनके। क्या फायदा हुआ ? सहायता करो। मेरे बचपन मे देखी हुई बात है। देहातो की है ऐसी देखी है मैंने। एक मेहत्तर के जवाई आया, वह अपने यजमान के घर जाकर कहता है, 'बापजी आपरो जँवाई आयो है।' तो म्हारो जँवाई मेहतर होसी ? महाराज ! बढ़िया चीज, वस्तु, भोजन सब देते कि ले जाओ, जँवाई का सत्कार-पूजन करो। उनके जँवाई आते थे तो रुपया नारियल देते थे। यह देखी हुई बात है मेरी। जँवाई देवता आया है तो हमारा जँवाई मेहत्तर होगा क्या ? हमारा जवाई मेहतर नही होगा, मेहत्तर-जँवाई होगा, क्योकि हमारे है न ये। इस वास्ते इनका जँवाई हमारा जँवाई। यह प्रेम था।

राजपूतो के, अच्छे-अच्छे ठाकुरो के, जमीदारो के घरो की स्त्रियाँ बाहर नही निकलती थी। मेरे ऐसे शब्द सुने हुए हैं—

'कैसे जाऊँ ? भाभीजी बैठा है।' आदर करती थी ससुर जैसा, इतना आदर करती और वे भी महाराज बडा प्यार, स्नेह रखते थे। बच्चा खेलता हुआ आता, मेहतरानी आई है सफाई (अडवाई) के वास्ते और बच्चा आता है तो 'देखो! कँवरजी ने ले जाओ' म्हारे पास मे आवे।' मन मे बडा भारी आदर था। सुख-दुख में सहानुभूति रखते थे। दुख कैसे मिटे? सुख कैसे हो? गीता कहती है

"आत्मौपम्येन सर्वत्र सम पश्यतियोऽर्जुन।
सुख वा यदि वा दु ख स योगी परमो मत ॥"

(गीता ६/३२)

उनके दुख किस बात का है, वह दूर करो। सुख के प्रलोभन मे आप आ नही सकते। कब? जब धर्म का ज्ञान होगा। धम का ज्ञान कब होगा? जब धर्म बताया जायेगा। धर्म बताया कब जायेगा? जब आप स्वय धर्मात्मा बनोगे तब। अपने आचरण और भाव पहले शुद्ध करो। उनको निर्मल बनाओ। उनके निर्मल करने से दुनिया-मात्र की शुद्धि होगी। सबका भाव ठीक हो जायेगा, बिना कहे सुने आप से आप ही, एक नीयत शुद्ध होने से। इस वास्ते अपने भावो को निर्मल बनाओ।

बालकों पर जिम्मेवारी

बालको के लिये खास बात होती है। वे समझते हैं, हमारी *क्या जिम्मेवारी है? हम तो बालक हैं।* ऐसा कभी न समझें, आप खास करके समाज की नीव हैं नीव। बडी-बडी इमारतें ---ी हैं वे सबकी सब खडी रहती हैं आधारशिला-बुनियाद

]

पर, नीव के ऊपर। वह मजबूत होती है तब ऊपर की इमारत बढिया बनती है। इमारत की नीव के पत्थर जमीन मे रहते हैं देखता कोई नही। ऐसे बचपन को दुनिया नही देखती। दुनिया को दीखता है ऊपर आया हुआ विकसित जीवन, परन्तु वह विकसित जीवन तब होगा, जब बचपन मे ठीक होगा। बच्चो को समझना चाहिए कि हमारे पर अभी जिम्मेवारी क्या है ? आप पढाई करो, बडो की आज्ञा का पालन करो, कहना मानो। आज बहुत बडे दु ख की बात है कि बच्चो मे अनुशासन हीनता आ रही है। मानते ही नही, उद्दण्ड होते चले जा रहे हैं। अब ऐसे बालक हो रहे हैं उनको सिखावो—तो क्या सीखेंगे वे ? वे कहते है हम छोटे कैसे है ? वडप्पन का अभिमान प्रारम्भ से भर जाता है। मैं तो कहता हू कि जो आदमी समझता है कि मैं पढ गया, समझदार हो गया, बडा हो गया, उसकी अगाडी विकास की बात तो होती ही नही, खतम ही हो गई। उसका विकास कैसे हो ? समझदार तो मैं हो गया। हमे तो विद्यार्थी-पना अच्छा लगता है। उमर भर विद्यार्थी रहे। मनुष्य जन्म विद्यार्थी जीवन है यह। चौरासी लाख योनि मे विद्यार्थी जीवन है मनुष्य शरीर।

'एहि तन कर फल विषय न भाई।' (मानस ७/४३/१)

यह ब्रह्मविद्या लेने के लिये विद्यार्थी जीवन है। छोटे बालक तो विद्यार्थी है ही, दोनो तरफ से ही, मनुष्य शरीर की दृष्टि मे विद्यार्थी और अध्ययन की दृष्टि से भी विद्यार्थी।

विद्यार्थियो पर जिम्मेवारी

अभी जो विद्यार्थी अच्छे बनते है, वे ही आगे चलकर अच्छे

पण्डित बनते हैं। बचपन मे श्रेष्ठ बनेंगे वे ही अगाडी चलकर श्रेष्ठ बनेंगे। बच्चो के लिये याद रखने की बात बताता हूँ। जितने-जितने महात्मा हुए हैं जितने महापुरुष हुए हैं वे सबके सब पहले बालक थे बालक। आपको सोचना चाहिये कि हम भी बालक हैं। हम भी वैसे ही बन सकते हैं। तो बडप्पन का जो अभिमान अपने मे है, वह तो नही होना चाहिए, पर महत्वाकांक्षा जरुर होनी चाहिए। अपने जिस जगह हैं, उससे ऊँचे बढें। ऊँचे तभी बढेंगे, जब अपने को छोटा मानेंग। 'जो कुछ थोडा सीखे हैं, किसी के होके सीखे हैं।' उनसे शिक्षा मिली है, उनसे शिक्षा लेनी चाहिए। आचरण अच्छा बनाओ, सेवा करो, खूब उमगपूर्वक, उत्साहपूर्वक। बच्चियों को भी चाहिए कि अपनी माँ की, भाभी की सेवा करें। लडको को भी चाहिए कि अपने माता-पिता की, गुरुजनों की आज्ञा पालन करे, उनकी सेवा करें, उनको सुख पहुँचावें।

'गुरुशुश्रूषया विद्या पुष्कलेन धनेन वा'

अपने पास और क्या है? सेवा ही कर सकते हैं। न तो ऐसा अलौकिक गुण है जिसके बदले मे गुरुजी महाराज सिखा दें। न इतना धन है, जो उनको देकर राजी कर लें। सेवा करें, सेवा करना क्या है? ध्यान देना। बालको! असली सेवा क्या है? पढाई करो तो गुरुजी की सेवा क्या है? जो गुरुजी ने पढा दिया, वह ठीक याद हो सब का सब—गुरुजनो की सेवा हो जायेगी। सभा के बीच में पूछा जायेगा और आप ठीक तडातड (तुरन्त) उत्तर देंगे तो दूर बैठे बैठे गुरुजी खुश हो जायेंगे, प्रसन्न हो जायेंगे, धन से उतने राजी नही होंगे। कितनी बढ़िया

बात है, विद्या तो आपको मिले और सेवा हो जाय गुरुजी की, दोनो बाते बढिया।

नमस्कार की महिमा (उदाहरण मार्कण्डेय)

रोजाना सुबह शाम माता-पिता के चरणो मे नमस्कार करो।

"अभिवादन शीलस्य नित्य वृद्धोपसेविन ।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशो बलम् ।।"

जो रोजाना बडो के चरणो मे नमस्कार करता है और बडो की शिक्षा लेकर चलता है, उसके चार चीजें बढती ह, एक विद्या आती है, एक ससार मे यश कीर्ति बढती है, और एक बल आता है। और एक बात है। उमर बढती है, कितनी विलक्षण बात है।

मृकण्डु ऋषि थे, जिनके मार्कण्डेय हुए। वे नमस्कार करते थे। एक सिद्ध पुरुष वहाँ आ गये, पिताजी ने कहा, 'बेटा ! नमस्कार करो। तो महाराज देखने लग गये सामने ! एक टकटकी लगा कर देखते रहे। पिताजी ने पूछा 'महाराज ! क्या देखते हो ?' बच्चा तो अच्छा है, पर इसकी उमर बहुत थोडी रह गई'। तो ऋषि ने पूछा—महाराज क्या करें ?' उन्होने कहा—'सन्त-महापुरुष आवे ऋषि मुनि आवें उनके चरणो मे नमस्कार करवाओ।' सप्तर्षि आ गये। पिताजी ने कहा 'नमस्कार करो।' (महाभारत की कथा है यह) तो उन्होने नमस्कार किया। उन्होने चिरजीवी बन जाओ' ऐसा आशीर्वाद दे दिया। पिताजी ने पूछा 'महाराज ! आपने आशीर्वाद तो दे दिया है, पर देखा नही कि

कितनी उमर है' । उधर ध्यान दिया तो कहा, 'उमर तो कम रह गई' पूछा—'तो महाराज, आपके वचनो का क्या होगा ? और हाल क्या होगा इसका' ? तो कहा 'भाई ! भगवान शकर की सेवा करो । अब शकर की सेवा मे लगा दिया उसको । समय पर महाराज ! यमराज आये खुद भैंसे पर चढे हुए लाल वर्ण वाले आये, वह डर गया डर कर भगवान शकर को बाहो मे पकड लिया कि महाराज ! यह यमराज आ गया । शकर प्रगट हो गये त्रिशूल लेकर । 'क्यो ? कहा ले जाता है तू इसको' ! 'महाराज ! इसकी उमर खतम हो गई' । 'देख तो सही चोपडी मे कहाँ खतम हो गई' ? देखें तो, बाकी है साहब । शकर करे सो हो जाय । 'हटो यहाँ से' । मार्कण्डेय ऋषि चिरजीवी हो गए । 'सप्तैते चिरजीविन' कितनी विलक्षण बात है । किस बात से ? नमस्कार करने मात्र से ।

नमस्कार से रामदास, कर्म सभी कट जाय ।
जाय मिले परब्रह्म मे, आवागमन मिटाय ॥

'एकोऽपि कृष्णस्य कृत प्रणामो,
दशाश्वमेधावभृथेन तुल्य
दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म,
कृष्ण प्रणामी न पुनर्भवाय ॥
(महा० शान्ति० ४७, ९२)

शाठ्येनापि नमस्कार क्रियते चक्रपाणये ।
बद्ध परिकरस्तेन मोक्षाय गमन प्रति ॥

भगवान को शठता से भी नमस्कार कर ले तो उसका कल्याण हो जाय । नम्रता से सब चीज मिलती है भाई ! इस वास्ते

रोजाना माता-पिता, गुरुजन सबको नमस्कार करो। बडा भाई, बडी बहन है उसको भी नमस्कार करो। जो बडे हैं पूजनीय है आदरणीय हैं उन्हे भी नमस्कार करो। भाई बहनो से कहना है कि यह नियम तो अपने-अपने घरो मे डाल ही दो। आप बडे जब नमस्कार करगे तो ये छोटे आप-से आप नमस्कार करेंगे। 'यधदाचरति श्रेष्ठ'। आपस मे लडाई नही होगी। गृहस्थी मे साथ मे रहना पडता है। हम तो साधु लोग हैं।

> 'मन मिले तो मेला कीजे, चित्त मिले तो चेला।
> ज्ञान मिले तो सतगुरु कीजे, नहीं तो भला अकेला'।।

जरा खट पट होते ही तु बी लेकर चल देंगे, तुम कहाँ जाओगे ? इस वास्ते तुम्हारे को तो प्रेम रखना आवश्यक है, प्रेम रहता है नमस्कार करने से।

देवराणी रोजाना जेठानी के चरणो मे नमस्कार करे तो कभी लड जाय तो, राड कह सकती है क्या ? देवर चरणो मे पडता है रोजाना आकर के भाभीजी के, तो क्या वह कडवी जवान कह सकती है ? लडाई नही हो सकती। हो जाय तो टिक नही सकती। शाम को उनको नमस्कार करो, मिट जाएगी। रात्रि मे खटपट हो तो सुबह नमस्कार करो तो मिट जायेगी। लडाई रखोगे तो नमस्कार नही होगा। नमस्कार करोगे तो लडाई नही रहेगी। यह है नियम। दोनो एक साथ रहेंगी नही। आपके घरो की लडाई मिट जाय। कितनी बढिया बात।

काम धन्धा करे अगाडी होकर के, वह कहे मैं करूँ, म करू। ऐसे ही बालक बालिकाओ को चाहिए कि काम तो हम

करेंगे। बच्चियो को चाहिए कि सब काम सीखें, सब बातें सीखें। कातना सीखें, गूथना सीखें, पीसना सीखें, झाड़ू देना सीखें, रसोई बनाना सीखें। सीखोगे तो, अगाडी जाओगी तो आपकी और आपके माता की, कुटुम्ब की प्रशसा होगी। नही तो महाराज सास गाली देगी, गाली। 'मा राड सिखाई कोनी इनैं' (मां ने इसको सिखाया नही) बताओ घर बैठे मां को गाली मिले। अगर तुम ऐसा सीख जाओ, घर मे ऐसी चतुराई से काम धन्धा करो तो "वाह वाह भई, अच्छे मां-बाप की बेटी है, बहुत ठीक है, अच्छे घराने की लडकी है" ऐसी प्रशसा करेंगे। तो आपकी प्रशसा, आपकी कन्या की प्रशसा, कुटुम्ब की प्रशसा। नही तो सबका नीचापन होगा। ऐसे आदर करो, प्रेम करो। बडो को तो चाहिए छोटो को प्यार करें, छोटो को चाहिए की बडो की आज्ञा मानें, हुकम मानें, आचरण सीखें, अच्छी-अच्छी बातें उनकी सीखें और कही कोई बतानी हो बात तो नम्रता से कह दें।

सुधार का सुन्दर तरीका

हमने सुनी है (पुस्तको मे नही देखी है) एक बार युधिष्ठिरजी महाराज ने किसी ब्राह्मण को कह दिया कि हम आपको परसो दान देंगे, तो भीमसेन ने जाकर के नगाड़े बजाये, युधिष्ठिर ने पूछा, 'नगाड़े किस बात के' ? तो भीमसेन बोला 'बड़े आनन्द की बात है कि परसो तक आप-हम, सब जीते रहेंगे मौज हो गई हमारे। आप सत्यवादी हो, आपने कह दिया कि मैं परसो तक दान देंगे तो कोई मरेगा तो दान कैसे करेगा ? तो खुद भी नही रहोगे तो दान कैसे दोगे ? इस वास्ते अब तीन दिन तक तो मरेंगे नही। बड़े आनन्द की बात है।

युधिष्ठिर ने कहा 'भैया भूल हो गई'। 'अब हित की बात वह दी तो भूल हो गई, तो बडो को शिक्षा कैसे दी जाय ? यह थोडे ही है कि ऐसा कहो, 'आप झूठ बोलते हैं, आपने कैसे कह दिया' ? और खुशी मनाओ।

एक ब्याह करके लडकी आई, अपने घर पर ससुराल मे। तो लडका एक ही था, तो एक लडका एक सास, एक दादी सास। तो वहा जाकर देखा तो दादी सास का अपमान हो रहा है, तिरस्कार हो रहा है। ठोकर मार दे, गाली दे दे छोरी की सासू। यह देखा तो छोरी को बडा बुरा लगा, अब कहूँ कि मा सा ऐसा मत करो तो कहेगी कि कल की छोरी आकर उपदेश देती है, गुरु बनती है। तो ऐसा नही कहा उसने। वह काम धन्धा सब करके दोपहर मे जाकर दादीजी का चरण चम्पी करे, उनके पास बैठे। अब वह ज्यादा बैठे तो सास को सुहावे नही। वह कहती है 'बीनणी! वहाँ क्या करती हो' ? 'बोलो! काम बताओ। काम क्या बतावे ? वहा क्यो जा बैठी', तो बहू ने कहा - "मेरे पिताजी ने कहा है— देखो बाई जवान छोकरो के पास बैठना ही नही कभी, छोरियो के साथ भी नही बैठना, बडे बूढे हो उनके पास बैठना, उनसे शिक्षा लेना'। हमारे घर मे सबसे बूढी ये ही है तो और किसके पास बैठें ? मै उनसे यह पूछती हूँ कि मेरी सास आपकी सेवा कैसी करती है ? क्योकि मेरे पिताजी ने कहा है बेटा हमारे घर की रिवाज नही चलेगी वहाँ, वहाँ तो रिवाज तेरे ससुराल की चलेगी। तो मेरे को यहाँ की रिवाज सीखना है, सीख लूँ"।

सास ने पूछा—बुढिया ने क्या उत्तर दिया ? 'वह बोली कि ठोकर नही मारे, गाली न दे तो मै तो सेवा ही मान लूँ'।

क्या तू ऐसा करेगी' ? मैं नहीं कहती हूँ ऐसा। पिताजी ने कहा है, बड़ो से सीखना'। सासुजी डरने लग गई कि जो आचरण करोगे अभी अपनी सास के साथ, वह तेरे साथ आचरण तैयार होने लग जायगा। डर गई ! उसका आचरण सुधर गया। एक जगह कोने में ठीकरी इकट्ठी पड़ी थी, 'बीनणी, ये ठीकरी क्यों इकट्ठी की हैं' ? आज तो घड़ा मटकी आपणा घणा ही है सासूजी को देवो हो न आप भोजन ठीकरी में, तो मैं बाद में दूं गी ? इस वास्ते पहले ही जमा कर लिया' ! 'तू मेरे को ठीकरी में भोजन करायेगी। मेरे पिताजी ने कहा है तेरे वहां की रिवाज चलेगी'। तो सासू कहती है 'यह रीत थोड़े ही है' 'तो आप देते क्यों हो' ? थाली माँजे' कौन, 'थाली मांज तो मैं दूं गी'। 'तो तू थाली में दिया कर। उठा ठीकरा बाहर फेंक, अपने क्या करना है' ? अब थाली में भोजन देवे। सबको भोजन देने के बाद में जो बाकी बचे, वो खिचड़ी खिचड़ा की खुरचन और दाल बची हुई जिसमें नीचे काकरा बचे, अब ये देवे तो वह देखे। 'बीनणी ! क्या देखें' ? 'देखूं कि बडेरा को भोजन कैसे दिया जाय' ? 'देणे क्या है' ? 'ऐसा भोजन बड़ो को देना चाहिए न'। ,देने की कोई रीति थोड़े ही। तो, पहले कुण (कौन) देवे' ? तो आशा दे दो में दे दूं गी'। 'तो तू पहले भोजन दे दिया कर'। 'अच्छी बात'। रसोई बनते ही चट ताजी खिचड़ी, फुलका, साग ले जाकर मांजी को दे दे।

मांजी तो मन-ही-मन आशीर्वाद देने लगी। जीवन सुधर गया मांजी का, बेचारी की सेवा होने लग गई। अब बाहर साली (बाहर का कमरा) में खटिया डाली हुई उसी पर पड़ी रहती बूढ़ी मांजी। यह टूटी हुई खटिया, बन्दनवार होवे ज्यों

लटके उसमे मूज। तो वह बहू देख रही थी। सासू पूछे कि क्या देखे ? 'निगह करूँ कि माइतो को खाट कैसी दी जाय' ? 'ऐसा दिया थोडा जाता है, टूट जाने से ऐसा हो जाता है। तू बिछा दे दूसरी'। 'आप आज्ञा दो'। अब बढिया निवार का ढोलिया लाकर बिछा दिया। कपडा धोने दिया तो कपडा सागरी-मागरी होयोडा। 'क्या देखती है' ? 'देखती हूँ कि बुड्ढो को कपडा कैसा दिया जाय'। सासू बोली 'फिर वही बात ! ऐसा कोई दिया थोडा जाता है ? यह फट जाता है, तो हो जाता है ऐसा'। बहू ने पूछा, फिर वही रहने दे क्या ? 'तू बदल दे'। अब महाराज ! पथरना, सोडिया, (बिछौना, रजाई) बदल दिया, कपडा बदल दिया। अच्छी तरह से माँजी की सेवा करे। अच्छी तरह से सफाई रखे खूब। अब देखो सासू को शिक्षा कैसे दी जाय ? कितनी चतुराई से दी, अगर उसको वह उपदेश देने लगे तो मान लेगी क्या ?

माँ बाप की सेवा

लडकियो को चाहिए कि ऐसी बुद्धिमानी से अच्छा अच्छा गुण अपने मे लावे और स्वय सेवा करे। सब सेवा करती, सब रसोई बनाती, झाडू देती, बर्तन माँजती, सब काम करने पर भी राजी करना सासू को भी और दादी सास को भी। तो ऐसे काम आप करोगी तो उसका असर पडेगा। कोरी बातो से असर नही पडता। आचरण का असर पडता है। तो ऐसे बच्चो को भी चाहिए अपने घरो मे खूब काम करें, उत्साहपूर्वक काम करे। गाय आदि है तो उसका काम करें, घर का काम करें। आजकल के लडके बडे हो जाते हैं तो स्वय-सेवक बन जाते हैं। लाठी लेकर जाते हैं कि समाज की सेवा करेंगे।

स्वय सेवक हैं वे, अपने ही सेवक हैं वे। जहाँ महिमा होती है, वहाँ काम करेंगे। पिताजी चाहे बीमार पड़े रहो। माँ-बाप बूढ़े हो बीमार हो तो दवाई भी लाकर नहीं देते। क्योंकि घर मे वाह्-वाह करने वाला कोई भी नहीं है। हम स्वय सेवक हैं।

हमारे काम पड़ा है। हरिद्वार ऋषिकेश में रहते हैं तो लड़के आते हैं जवान जवान। 'कैसे आये'? घर से भाग कर आये हैं')। 'अरे कागज तो लिखो कम से कम कि हम यहाँ आ गये हैं। वे लोग ढूँढते होंगे, कितना रुपया लगेगा, कितनी चिंता होगी, क्यो आ गये'? 'सेवा करेंगे'। 'माँ-बाप की सेवा करते।' माँ-बाप तो स्वार्थी हैं, वे तो अपना काम कराते हैं।' तुम परमार्थी यहाँ से आ गये भाई? स्वार्थियो के परमार्थी कैसे जनम गये? अरे! माँ-बाप की सेवा ली है, कर्जा तो उतारा ही नहीं, दान करने को चले। पहले कर्जा तो उतारो। माँ बाप ने किस तरह से पालन किया है। बड़ा किया है, योग्य बनाया है, पढ़ाया है, खर्चा किया है उनकी सेवा छोड़ देते हो। दुनियाँ की सेवा करेंगे। दुनियाँ की सेवा पीछे, पहले माँ-बाप की सेवा। घर वालो की सेवा पहले करो। क्योंकि उनका कर्जा है सिर पर। कर्जा तो उतारो कम से कम तब सेवा होगी। तो ऐसा अभिमान भर गया कि माँ-बाप तो स्वार्थी हैं, हम तो सेवा करते हैं। वे स्वार्थी हैं तो क्या हुआ तुमने तो इससे लिया है। दुनियाँ मे चाहे वे अपना स्वार्थ करते हो पर तुम्हारा तो परमार्थ किया है कि नहीं? तुम्हारी तो सहायता की है कि नहीं? ऐसे माँ-बाप की सेवा करो, आज्ञा का पालन करो।

'आज्ञा सम न सुसाहिब सेवा' मनुस्मृति का दूसरा अध्याय

आप पढो, ये देवता हैं साक्षात्, माँ और बाप। माँ पृथ्वी है, अन्तरिक्ष देवता हैं पिता। इनकी सेवा करने से त्रिलोकी की सेवा हो जाती है, त्रिलोकी तृप्त हो जाती है। इस वास्ते बडो की सेवा करने से भगवान बडे खुश होते हैं। आप भजन करोगे, माँ-बाप का कहना नही मानोगे, गुरुजी का कहना नही मानोगे तो भगवान् स्वीकार नही करगे। कि यह अपने माँ बाप का भी नही हुआ तो तुम्हारा कब तक होगा भाई यह ? क्या भरोसा है इसका ? गुरुजन भी, महाराज उसको पसन्द नही करते, जो माँ-बाप की सेवा नही करता। उनकी सेवा करो।

पढाई का उद्देश्य

पढाई करो तो वहाँ गुरुजनो की सेवा करो। आज लडको में उद्दण्डता आ गई। पहले तो महाराज ! गुरुजन जिसको रखते वह विद्यार्थी रहता और जिसको निकाल देते वह निकल जाता। आज विद्यार्थी बना लेते हैं यूनियन। निकालो हमारे पडितजी को निकालो, गुरुजी को निकालो। आज छोरा रखें जिसको, वह तो गुरुजी रहे और वे निकाल दें तो निकल जाय। उनको समझते हैं नौकर। नौकर से काम होता है विद्या नही ली जाती, विद्या बडो से ली जाती है। इस वास्ते आज देख लो बडी बडी विद्याओ मे, बडी बडी परीक्षाओ मे पास हो जाते हैं, पर ज्ञान नही है। शास्त्री और आचाय हो जायँ, मध्यमा में शास्त्री मे पास हो जाय तो, अभ्यान्तर प्रयत्न और बाह्य प्रयत्न, बता नहीं सकते ठीक तरह से।

ऐसे काम पडा है। एक पण्डितजी कहते थे, इतना भी ज्ञान नही 'सज्ञा प्रकरण' का। पढ गये ऊँचे और पास हो गये।

तो क्या धुन रहती है ? बस पास हो जायें ! अरे भाई ! पास होने के लिये पढ़ाई नहीं होती है। पढ़ाई करने के लिए परीक्षा दी जाती है। पढ़ाई करना परीक्षा के लिए नहीं। परीक्षा के लिए पढ़ाई करता है तो याद नहीं रहती है, अभी परीक्षा है इस वास्ते याद करके दे दी परीक्षा, फिर भूल गये। अरे ! पढ़ाई के लिए परीक्षा होती है, जिससे अपने को सन्तोष हो जाय, गुरुजनों को सन्तोष हो जाय। हमारे संरक्षक महानुभाव हैं, उनको सन्तोष हो जाय, इस वास्ते परीक्षा देते हैं। पढ़ाई तो बोध के लिए करना है। उस तत्त्व को किस तरह से समझा है हमें ! जो पढ़ गये और दूसरों को पढ़ा नहीं सकते तो क्या पढ़े ? ठीक तरह से बुद्धिमान लड़कों को पढ़ा सको आप, तब तो आपने ठीक पढ़ाई की, इस वास्ते अध्ययन पूरा करो, अच्छी तरह से। जिस काम में लगो, उस काम को सांगोपांग ठीक तरह से पालन करो।

मैं तो कहता हूँ बुद्धिमान मनुष्य अपना समय बर्बाद नहीं करता। विद्यार्थी को तो

क्षणशः कणशश्चैव विद्यामर्थं च चिन्तयेत्।'
'क्षणत्यागे कुतो विद्या, कणत्यागे कुतो धनम्।'

एक क्षण भी निरर्थक न जावे। न जाने दे। महाराज ! एक एक क्षण बड़ा कीमती है। याद रखो, बड़ी अवस्था होने पर आपको पूछेंगे कितना बरस पढ़े ? बीच में चाहे पढ़ाई करें, चाहे प्रमाद करें, चाहे बीमार हो गये, चाहे घर पर चले गये, स्कूल में नहीं गये। यह कोई गिनती नहीं करेंगे। अमुक वय से अमुक वर्ष तक इतनी पढ़ाई करी। इतनी पढ़ाई हुई तुम्हारी ? क्या उत्तर दोगे ? नहीं तो भाई, इतना वर्ष पढ़े, हमारे का पूछ ना

इतना पढा है इतने दिनो मे। लोग भी कहेंगे कि इतने दिनों मे इतनी पढाई करली, बडी अच्छी बात। आजकल का कोर्स तो बहुत छोटा है। पढाई बहुत कम होती है, छुट्टियो मे बहुत समय बर्बाद होता है, विशेष बर्बाद होता है, पर आप लोग सजगता से रहोगे कि समय एक क्षण भी खराब नहीं करना हैं। खर्चा अपने शरीर के लिये थोडे-से थोडा करना है।

कलकत्ता मे एक छोरे की मांग पूरी नही हुई, खर्चा ज्यादा किया, मांगा ज्यो नही मिला तो जल कर मर गया। बताओ, माँ-बाप को कितना दु ख होता है। अपने खर्चा क्यो चाहिए ? माँ-बाप दें उतने खर्चे से काम चलाओ अपना। खर्चीला जोवन होने से आदमी परतन्त्र होता है। बचपन मे खर्चीला होने से वहुत ही ज्यादा दु ख पायेगा उम्र भर। सादगी से पढा हुआ उम्र भर सुखी रहेगा। हमारे क्या चाहिए ? साधारण कपडा पहन लिया, रोटी खा ली बस। खर्चा है ही नही फलफैल (फालतू)। इस वास्ते हरेक भाई बहन को यह बात चाहिए। वडो की सेवा करो। ये वडी अवस्था वाले हैं न उनमे भी जो माँ बाप हैं, पूजनीय हैं, आदरणीय है, उनके सामने हम भी बालक ही हैं, इस वास्ते हमे अच्छा काम करना चाहिए, जिससे उनका सेवा बन जाय और वे प्रसन्न रहे। प्रसन्नता लो उनकी, आशीर्वाद लो उनका, जिससे विद्या आदि आवेगी। माता-पिता का सेवा से गुरु सेवा से वडे वडे ऋषि मुनि हो गये, सन्त हो गये, राजा महाराजा हो गये, विद्वान् हो गये।

आज्ञा पालन से लाभ

हमने ऐसे दृष्टान्त सुने हैं, और कुछ-कुछ देखे हैं। कलकत्ता

यें बहुत पुरानी बात है। दो हजार संवत् से पन्द्रह बीस वर्ष पहले की बात है। एक दादू पंथी सन्त थे। मैंने उनसे कहा, 'महाराज, आप भी कुछ सुनाओ' तो खड़ा होकर बोलने लगे। अच्छे पण्डित थे। वाल्मीकि का एक श्लोक बोल दिया, अब अर्थ करने लगे तो श्लोक नहीं उठा। दु खी हो गये। बात क्या है? तो कहा कि 'मैं पढ़ लिख कर अपने गुरुजी के स्थान पर गया। हमारे गुरुजी भजनानन्दी थे, पढ़े लिखे नहीं थे, विद्वान् थे नहीं, मैं पुस्तक लिख रहा था। गुरु महाराज के घर में काम था, 'ईंट-चूना पड़ा है, इतना पत्थर मंगाओ, आदमी बुला लाओ,' ऐसा कहते तो कई बार तो मैंने किया, एक बार कह दिया कि 'यह तो कोई मूर्ख ही काम कर देगा'। गुरुजी ने कहा 'तू मूर्ख हो जा'। तब से यह दशा हो गई। फिर मैं अबगया चरणों में गिरा तो कहा 'इतने वर्षों बाद ठीक हो जायेगा'। अब एक दो वर्ष बाकी है। गुरुजनों को राजी लेने से फायदा होता है, नुकसान नहीं होगा।

एक आत्मानन्दजी थे वे पढ़ लिखे थे, पढ़ाते थे। उनके शिष्य नारायण मुनिजी महाराज, नाम सुना होगा, बड़े प्रसिद्ध सन्त हुए हैं। रतलाम आदि के दरबार उनको मानते थे। बड़े सुन्दर-मूर्ति और भव्य थे। मेरे दर्शन किए हुए हैं। गुरुजी के खाँसी दमे की शिकायत थी, उन गुरुजी की सेवा करते। वे प्रसन्न होकर कहते 'बेटा नारायण अब पढ़ तब पढ़ते, नहीं तो वे सेवा में ही रहते। दमे की शिकायत में तो बापना कम होता ही है। ऐसी सेवा की महाराज! जिससे इतने नामी विद्वान् हो गये फारसी और संस्कृत में। हिन्दू और मुसलमानों की दोनों की सभा में वे सुनाते थे अच्छी तरह से। गुरु सेवा से लाभ होता है, और गुरु का तिरस्कार करने से हानि होती है।

एक कनफटे कृष्णानन्द थे। ये पढ़े नवद्वीप में, पढ करके अपने ही गुरुजी से कहा 'शास्त्रार्थ कर लीजिए मेरे से न्याय के विषय मे'। तो गुरुजी ने कहा—'जा भूंकता फिरेगा कुत्ते की तरह'। उन दिनो महामहोपाध्याय केशवानन्दजी महाराज कनखल मे थे। वहाँ वह आया कि आपसे शास्त्रार्थ करूंगा। आप भारत भूषण हुए हैं और महामहोपाध्याय हैं तो मेरे से बात कर लीजिये। लोगो ने कहा 'अरे कुत्ते को निकालो, कहाँ से आ गया? निकालो इसे'। तिरस्कार करके निकाला। अब नामी विद्वान् था। शास्त्रार्थ मे झड़का दे हरेक को, पर अपमान ही हुआ, तिरस्कार ही हुआ। तो गुरुओ का तिरस्कार करने से तिरस्कार होता है।

आप कहते हो कि हमारी बीनणी काम नही करती तो तुमने दूसरो के घर पर बीनणी कैसी भेजी है? छोरी को सिखावे कि 'तू धन तेरा इकट्ठा कर लेना, वह तेरा तेरे पास रह जायेगा। जब अलग हाओगे तब तो तेरे पास आ जायेगा। काम तू अकेली क्यो करे? सभी करो'। अब ऐसे काम धन्धा तो नही करना, और धन ले लेना, ये दो महान् पतन की बात हैं। वे सिखा-सिखाकर आप छोरियो को भेजते हैं, घरो मे शान्ति होगी कि अशांति? उनको यह सिखाना चाहिए, 'ना बेटा! अपने तो काम करो, जहाँ जाओ, उत्साह से घर का काम-धन्धा करो, उनकी प्रसन्नता लो'।

ऐसे ही लडको को चाहिए कि उदारता रखो भाई। काम धन्धा करो, सेवा करो, चीज वस्तुओ के द्वारा भी सेवा करो, तो कितना बढिया काम होगा। ऐसी बात जानने की कमी नही है करने की कमी है। जानने की कमी तो कोई जानकार है,

वह दूर कर देगा। पर करने की कमी को तो आपको ही दूर करना होगा। उसे काम में लाओ। दूसरों को समझाते समय तो विद्या आ जाती है महाराज !

'पर उपदेस कुसल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे ॥
(मानस ६/७७/२)

'परोपदेस वेलायां शिष्टाः सर्वे भवन्ति हि'
विस्मरन्तीह शिष्टत्व स्वकार्ये समुपस्थिते ॥'

अपना काम आ जाय, तब भूल जाते हैं—यही तो बड़ी गलती की बात है।

'स्वे स्वे कर्मण्यभिरत संसिद्धि लभते नर '।
(गीता १८/४५)

ठीक तरह से बालकों-बालिकाओं को अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए। गुरुजनों की आज्ञा मानना चाहिये। माता-पिता, गुरुजन हैं—य महाराज ! तीन लोक हैं। ऐसा मनुजी ने लिखा है। लड़कों के लिये यहाँ तक लिख दिया कि तीर्थ पर जायें तो उसका फल भी माँ बाप के ही अर्पण करे। अपने लिये धर्म पुण्य आदि कुछ करना ही नहीं है, केवल माँ बाप की सेवा करना है। लड़का समझता है कि हम तो परतन्त्र हैं, आप जितने छोटे हो, आप तब तक स्वतन्त्र हो। बड़े बन जाओगे, तब पराधीन हो जाओगे, समाज के, बहुत से आदमियों के। आप पर उलाहना आयेगा। अभी छोटे हो तो आपको कौन पूछे ? गलती हो गई तो हो गई। इस वास्ते स्वतन्त्रता उसका नाम है, जिसमें पराधीनता न हो।

नारायण, नारायण, नारायण,
(दिनाङ्क ६ अगस्त, १९८१)

॥ श्री हरि ॥

प्रवचन–२

प्रश्न . पुरुषो के पुनर्विवाह का विधान क्यो है ? स्त्रियो के लिए क्यो नही ? ऐसा प्रश्न है ।

पुनर्विवाह के विषय मे पुरुषो और स्त्रियो के लिए एक-सा विधान नही है । शास्त्रो मे पुरुषो के लिए तो पुनर्विवाह का विधान है, पर स्त्रियो के लिए पुनर्विवाह करने का विधान नही है । मनुजी ने लिखा है कि राजा वेन ने स्त्रियो के लिए पुनर्विवाह की जो छूट रखी थी, वह शूद्र वर्ण मे मानी गई और किसी वर्ण मे नही, ऐसी बात मनुजी की आती है ।

विवाह का पवित्र उद्देश्य

वास्तव मे देखा जाय तो विवाह करना कोई खास बात नही है । हमारे शास्त्रो मे लिखा है कि मनुष्य जन्म मिला है परमात्मा की प्राप्ति के लिए । इस वास्ते ब्रह्मचारियो के दो भेद बताये हैं—एक नैष्ठिक ब्रह्मचारी और दूसरा उपकुर्वाण ब्रह्मचारी । ये दो विभाग क्यो किये ? जो जन्म से ही परमात्मा की तरफ लग जायँ और उनके यह बात समझ मे आ जाय और परमात्मा की ओर ही चले वे 'नैष्ठिक ब्रह्मचारी' होते हैं । परन्तु जो विचार के द्वारा मन को नही समझा सके, भोगो की इच्छा का त्याग नही कर सके, तो वे भोगेच्छा का

दरिद्रता तो मन की है। लोग समझते हैं कि धन के अभाव से दरिद्री है, बिल्कुल गलत बात है यह।

को वा दरिद्रो हि विशाल तृष्ण.।
श्रीमांश्च को यस्य समस्त तोष ॥

जो धनवान् ज्यादा है आपकी दृष्टि में, वह दरिद्री ज्यादा है, कसौटी पर कसने पर। जैसे, साधारण आदमी के तो सौ पचास रुपयों की भूख होती है, फिर हजार रुपये चाहता है तो नौ सौ की भूख है। एक हजार हो जाने पर दस हजार चाहने लगता है तो अब नौ हजार की भूख है और दस हजार होने पर लखपति होना चाहता है तो अब नब्बे हजार की भूख है। एक लाख रुपये रोकड़ में हो जायेगा तो अब केवल दस लाख की इच्छा नहीं होगी। अब करोड़पति होने की इच्छा जगेगी, अब निन्यानवें लाख का घाटा है तो उनमें दरिद्री बड़ा कौन हुआ? जिनके धन की ज्यादा भूख, वही दरिद्री ज्यादा। धन से दरिद्रता नहीं मिटती।

'सुन्दर' एक संतोष बिना सठ तेरी तो भूख कभी न भगेगी'।

प्रश्न अशुभ कर्म कामना से कैसे होते हैं?

'काम एष क्रोध एष' जिसमें कामना नहीं होती उसके द्वारा अशुभ कर्म नहीं होते। शुभ कर्म होते हैं—निष्काम भाव से, जिससे अन्त करण शुद्ध, निर्मल होता है। निर्मल अन्तःकरण में जो विचार आदि पैदा होते हैं, उससे अपना कल्याण होता है। कामना रखने से शुद्धि नहीं होती। काम तो कर दिया, पर कामना रखली भीतर, तो शुद्धि होगी कैसे? पदार्थों की, भोगों की, परिस्थिति की इच्छा है न मन में! तो सकाम भाव रखने

से अन्त करण शुद्ध नही होता । इतने अश मे शुद्ध होगा कि जो शुद्ध काम किया है विधि विधान से, उसका जो फल मिलेगा, उस फल को भोग सकता है, इतनी शुद्धि होती है । जैसे इन्द्र बना तो 'शतक्रतु'—सौ यज्ञ करने से इन्द्र बनता है। तो जो इन्द्र बनता है, वह इन्द्र के भोग भोग सकता है । इन्द्रासन पर कुत्ते को बैठा दिया जाय या सुग्रर को बैठा दिया जाय तो वह इन्द्र का भोग क्या भोग सकेगा ? इतनी सी शुद्धि होती है । और दूसरी बात है ही नही । वह इतना काम कर सकता है बस । कोई यदि अशुभ काम नही करे और अगाडी सावधान रहे । परन्तु पहले हम कर्म कर चुके हैं, उनका फल सामने आये तो भोग करके निकाल दो ।

प्रश्न अब हम मुक्ति के मार्ग मे लग गये, केवल अपने कल्याण मे ही लग गये । पहले किये हुए बहुत कर्म तो पडे हैं न ! बहुत हैं वे तो । उनकी गिनती नहीं । उनकी क्या दशा होगी ?

वह केवल परमात्म तत्व की प्राप्ति के लिए ही कर्म करता है, उसी को ही चाहता है तो वे सबके-सब कर्म रोक दिये जायेंगे । वे जबरदस्ती फल नही देंगे । जब हमारी नीयत कल्याण करने की है तो कर्म सब खत्म हो जायेंगे । भक्ति से, ज्ञान से, कर्म (सेवा) से तीनो से ही वे नष्ट हो जाते हैं ।

भक्ति मे साफ कहा—'सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि' । सब पापो से मैं मुक्त कर दूँगा । 'ज्ञानाग्नि सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा' (४/३७) ज्ञानरूपी अग्नि मे समग्र कर्म भस्म हो जाते हैं । ऐसे ही 'यज्ञायाचरत कर्म समग्र प्रविलीयते ।' (४/२३) केवल यज्ञ के लिए कर्म करता है तो समग्र कर्म लीन हो जाते

हैं। कर्म अगाड़ी खत्म हो जायेंगे। जब वह साधन में लगा है तो भजन करते-करते, पूर्ण होने पर सब खत्म हो जायेंगे। अधूरा साधन छोड़ेंगे तो वे कर्म फल देने के लिए आयेंगे। साधन की ठीक तरह से वृत्ति नहीं रहेगी तो वह योगभ्रष्ट की स्थिति को प्राप्त होता है। ऐसे योगभ्रष्ट भी दो तरह की गति वाला होता है। एक तो स्वर्गादि में जाकर पीछे लौटने पर श्रीमानों के घर जन्म लेता है और एक सीधा ही योगियों के कुल में जन्म लेता है उसका जन्म श्रेष्ठ बताया है। 'एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्मयदीदृशम्—(गीता ६/४२) ऐसा जन्म दुर्लभतर है। तो जिन योगियों की सूक्ष्म वासना रहती है, वे स्वर्गादि में जाते हैं और वहाँ श्रीमानों के घर जन्म लेते हैं। जिनकी वासना नहीं रही है और साधन करते हैं साधन में कुछ कमी रह जाती है, अन्त में विचलित हो जाते हैं तो वे योगियों के कुल में जन्म लेते हैं वहाँ वे मुक्त हो जाते हैं।

मन भगवान् में कैसे लगे

प्रश्न हम मन भगवान् में लगाना चाहते हैं ध्यान जप करने बैठते हैं तो पुराने भोगे हुए भोगों के संस्कार आते हैं। सुख मिल जाय ऐसी इच्छा भी होती है। इसका कैसे मिटायें?

इसको लोग कहते हैं मन की चचलता। साधन करते हैं मन नहीं लगता। इसका नाम चचलता है। पहले भोग भोगे हैं, उनके संस्कारों से वे पुराने भोग याद आते हैं, अगाड़ी भविष्य में कुछ करना चाहते हैं उसकी याद आती है। पाठ में बैठे हैं, जप कर रहे हैं, नित्य-नियम कर रहे हैं तो घड़ी की तरफ देखते हैं कि अमुक जगह जाना है, क्योंकि मन नहीं

लगता। बार-बार याद आती है, भूतकाल-भविष्यकाल की बातें याद आती हैं। इसमे मन लगता नहीं, इसको चित्त की चचलता कहते हैं। क्या करें होता नही। इसमे खूब ध्यान देवें। थोडा विस्तार करता हूँ।

आपका मन नही लगता तो सबसे पहले मुख्य बात तो यह कहने की है कि आप साधन न छोडे। बहुत भाई कहते हैं 'क्या करे, राम-राम मे मन तो लगता नहीं'। इसमे एक मार्मिक बात है, कृपा करके ध्यान दें और धारण कर लें, तो बहुत ज्यादा आपकी कृपा मानूँगा। मन पहले लग जाय, पीछे भजन होगा—ऐसा कभी नही होगा। भजन करते-करते ही मन लगेगा, इस वास्ते मन लगाने के उद्देश्य से नाम जप-कीतन करते रहो। हरदम साधन मे लगे रहो, विचार करते रहो। भजन करते रहने मे मन नही लगता ता भी लाभ होगा।

एक धनी आदमी ने एक आदमी को रखा कि तुम बैठो यहा पर, दिन भर, जरूरी होगा, तब काम कहेगे। कभी एक-दो बार काम कह दिया। दिन भर बीत गया, शाम तक वह बैठा ही रहा। शाम को कहता है 'बाबू पैसे लाओ।' वह पूछता है पैसे किस बात के? दिन भर तो बैठा ही था'। 'बाबू! दिन भर बैठा था इस बात के, उसको पैसे देने पडते हैं। इस वास्ते जब एक मनुष्य के कहने से बैठ जाय तो बिना काम किये पैसे मिलते हैं। आप भजन करने बैठ जायेंगे अच्छी नीयत से तो क्या ठाकुरजी इतने भी ईमानदार नही हैं? क्या आपका यह प्रयास निरर्थक जायेगा? आप अपनी तरफ से मन लगाने की चेष्टा पूरी करें। नाम जप करे, कीर्तन करे, अपनी तरफ से गलती न करे। फिर मन नही लगेगा, इसका दोष आप पर है

ही नहीं। मन नहीं लगाते हो, वह दोष आपका होगा। बि
गलती किये हमारे को दोष कैसे लगेगा ? दुनिया में
हत्याएँ होती हैं, उनकी हमे हत्या लग जायेगी क्या?
करना चाहते नही और करते नही, परन्तु होती है तो
का फल आपको नहीं मिलेगा। हाँ विघ्न है जरूर मगर
परन्तु उससे डरो मत।

मन न लगने में कारण –

वास्तव मे कारण कुछ नहीं है, काम धन्धा करते हो
समय नही मिलता है चिन्तन करने के लिए। भजन ध्यान
लगे तो उसमे तो मन लगता नही। मन को मिल जाता है
इस वास्ते सोचने लगता है, आपकी पोल खोलता है। या
होती है ? जो भीतर इकट्ठी पड़ी थी, वह निकलती है।
कुछ नहीं होती, पुरानी बात है अथवा अगाड़ी करेंगे, वह
याद आती है। अभी वर्तमान की है ही नही। अब ध्यान
समझना है इस बात को। पहले की बात याद आती है
पुरानी बात है, अभी नही है। भविष्य का चिन्तन होता है
भविष्य में होगा, अभी नही है। अभी नहीं है, उसकी
चिन्ता करते हो ? यह बात याद रखना की अभी नहीं
पहले थी, अभी नही है या अगाड़ी होगी, अभी नहीं है।
अभी नही है, उसकी कोई चिन्ता नही। अभी है ही नहीं
उसका अभाव है। उसका क्या फल होगा ?

दूसरी बात और ध्यान देने की है कि आप चिन्तन
हो पुराना अथवा भविष्य का। जो चिन्तन होता है, व
परमात्मा जरूर हैं। है, उसको तो आप मानते नहीं। नहीं

उससे श्राप परेशान हो रहे हैं। 'नही है' यह तो 'नही' है, ऐसा मान लो और इस चिन्तन मे परमात्मा हैं। भूतकाल का चिन्तन है तो उसमे परमात्मा हैं। भविष्य का चिन्तन है तो उसमे परमात्मा हैं। वर्तमान मे भजन करते हो तो परमात्मा हैं। हरदम अखण्ड परमात्मा हैं। इस तरफ लक्ष्य रखो। यह खास उपाय है।

भोगे हुए संस्कार कैसे नष्ट हों

फिर समझ लो। पुरानी कोई भी बात याद आ जाय, घटना याद आ जाय, मन विचलित हो जाय, तो मन रस लेने लगता है तब तो नया कर्म हो जाता है। याद आने मात्र से कर्म नहीं होता। इस वास्ते उसकी परवाह मत करो। यह भोगे हुए सस्कार हैं, वे समय मिलने पर उद्भूत होते हैं, पर होते हैं, नष्ट होने के लिए। आप उनमे सहमत हो जाते हैं तो ये नये कर्म हो जाते हैं। आप सहमत न हो तो मिट जायेगे, मिटने के लिये ही उत्पन्न होते हैं। इस वास्ते वह घटना अभी नही है। अगाडी करना है उसको भी आपने विचार करके पकड रखा है। पकडने के कारण से भविष्य की बातें याद आती हैं। वह भी अभी नही है।

उसको आप कह दो कि अभी यह काम कर रहे हैं। उसको अभी छोड दो, फिर करेंगे विचार—ऐसा करके उसका त्याग कर दो। फिर याद आ जाय तो फिर छोड दो। भविष्य वाली बात भी आपकी पकडी हुई है। वह भी है नही। परमात्मा सब मे है, अभी भी है, भूतकाल वाली घटनाओ मे भी है, भविष्य वाली घटनाओ में भी है। दोनो का चिन्तन अभी हो

रहा है तो इस समय मे भी है। परमात्मा इन सबमे है, यह बात याद रखो। भजन करते हुए जो याद था जाय उसमें परमात्मा है, एकदम सच्ची बात। परमात्मा की तरफ लक्ष्य होने से सकल्प विकल्प नष्ट हो जायँगे। जो है, वह सच्ची बात हो जायेगी। जो नहीं है, वह तो सच्चा है ही नहीं, उसकी अभी केवल फुरणा मात्र-याद मात्र है, वह मिट जायेगी। इस वास्ते परमात्मा इसमे है यह ठोस बात है। इस बात को पकड़ लो, अब दूसरी बात आपसे आप मिट जायेगी।

बुरे संस्कार क्यों पड़ते हैं

अगर मन से भोगो का चिन्तन करते हुए उसमें सुख लेने लगोगे तो नया सस्कार पड़ जायेगा। चाहे भोगों को भोगते समय मन लगाकर भोगो और चाहे चिन्तन करते हुए मन लगा कर चिन्तन करो। दोनो मे नये सस्कार पड़ेंगे। वे सस्कार अगाड़ी और तग करेंगे, फिर याद आयेंगे। इस वास्ते उनमे सुख-दु ख लो मत। अच्छा आया, चाहे मन्दा आया, पकड़ो मत। चाहे अच्छा आवे, चाहे मन्दा आवे उनमे, अपने मन को राजी मत होने दो। मन राजी होता है, तब वे सस्कार पड़ जाते हैं।

मन तो लाख की तरह, मोम की तरह है। उसको ऐसा माना है मधुसूदनाचार्य ने और कहा है कि लोहा साधारणतया कठोर है, परन्तु ताप मे तापक द्रव्य हो जाते हैं तो पिघल जायेगा। ऐसे ही चित्त कठोर होता है, परन्तु ताप का संग होने से पिघल जाता है। अब यह तापक कौन है ? तो बताया है— 'काम क्रोध भय स्नेह हर्ष शोक दयादयः।
तापकाश्चित्तजतुनस्तच्छान्तौ कठिनं तु तत्।

काम, क्रोध, भय, स्नेह, हर्ष, शोक, दया आदि ये सात तापक हैं जिससे चित्त पिघलता है। कामना बहुत ज्यादा होती है और भोग मिलता है तो भोगते समय उसके बडे सस्कार पडते हैं। वर्षो तक तीस, चालीस, पचास बर्ष हो जायें, तब भी मानो अभी ही हुई हो, ऐसी घटना दीखेगी, क्योकि पिघले हुए चित्त मे सँस्कार पड गये। अब वह कठोर बन जाय, तब भी सस्कार वैसे ही पडे हुए है। जितना अधिक चित्त पिघलेगा, उतना ही जोरदार सस्कार पडेगा। ऐसे ही क्रोध के समय कोई घटना घटी है तो वह ज्यादा समय तक याद आयेगी। कारण कि उस समय चित्त पिघल गया उसमे क्रोध के सस्कार पड गये। ऐसे कोई बडा भारी भय लगा तो भय लगते ही चित्त पिघलता है, उसमे भय के सस्कार पड जाते है तो बहुत वर्षो तक भय की याद आती है। ऐसे ही मित्र से अधिक स्नेह होता है और जब आपस मे मिलते है तो उसके भी सस्कार पडते हैं। ऐसे ही हर्ष-शोक हो जाता है, उसके सस्कार पडते है। अधिक हर्ष होता है तो किसी के मिलने का तो वह सस्कार पडता है। दया आती है बहुत विशेषता से तो वे भी सस्कार चित्त पर पड जाते है।

बुरे सस्कार कैसे मिटे ?

इस वास्ते कहा है—

'काठिन्य विषये कुर्याद् द्रवत्व भगवत्पदे'

(भक्ति रसायन १/३२)

साधक को चाहिये कि विषयो के सम्बन्ध मे तो चित्त को कठोर बनाये रखे और भगवत्सम्बन्धी बातो मे, तात्त्विक बातो मे मन को द्रवित करे। द्रवित चित्त मे वे सस्कार पड जायें। अब

हम इसके ग्राहक ही नही है, हमारे को यह करना ही नही है। हमे इस मार्ग मे जाना ही नही है। बहुत बडा भारी बल है इसमे। बडी ताकत है। साधन करने वाले भाई बहनो को चाहिये, कुछ भी याद आ जाय अच्छी-मन्दी याद आ जाय तो कह दो, **'अभी यह है ही नहीं, आगाडी ऐसा करना ही नहीं है, इस मार्ग मे हमें जाना है ही नहीं'**, तो स्वाभाविक चित्त शान्त हो जायेगा, स्वत' ही शान्त हो जायेगा।

मनुष्य तो समझता है कि चित्त खराब है। चित्त खराब नहीं है। खराब स्वय होता है। चित्त तो अन्त करण है। करण कर्त्ता नही होता। कर्त्ता करण नही होता। अन्त करण, बहि-करण करणो की क्या शुद्धि, क्या अशुद्धि ? कर्त्ता की अशुद्धि ही करण मे मालूम होती है। इस वास्ते गीता ने कहा—

'इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते। और 'इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ'—विषय, इन्द्रियां, मन और बुद्धि—ये इसके अधिष्ठान (वास-स्थान) हैं 'रसोऽप्यस्य पर दृष्ट्वा निवर्तते'।

इसका यह आशय नही है कि तत्त्व की प्राप्ति बिना यह मिटता नही। मानो जहाँ परमात्मा की प्राप्ति होगी, वहाँ ही रस मिटेगा, यह व्याप्ति नही है, किन्तु परमात्मा की प्राप्ति होने पर रस रहेगा नही, यह भाव है। रस की निवृत्ति पहले भी हो सकती है। जोरदार वैराग्य होगा तो रसबुद्धि मिट जायेगी। इस वास्ते वह रस बुद्धि भीतर है, वह कर्त्ता मे रहती है, वही मन मे, बुद्धि मे, इन्द्रियो मे, विषयो मे प्रतीत होती है, है खुद मे। खुद के जब तेजी का वैराग्य होगा, पक्का विचार

होगा कि हमें इस मार्ग में जाना ही नहीं है, यह जितना दृढ़ता से निश्चय हो जायेगा, उतनी ही इसकी निवृत्ति हो जायेगी। थोड़ा दीखे तो उसकी परवाह मत करो, यह चला जायेगा। दर्पण में मुख दीखता है तो ज्ञान रहता है कि वास्तव में दर्पण में मुख नहीं है। इसी तरह से सकल्प-विकल्प आते जाते हैं, वे दीखते हैं, पर हमारे में नहीं हैं।

आप में नहीं है तो ये कहाँ है ? मन, बुद्धि, अहंकार में है। आपका जो शुद्ध स्वरूप है, उसमें हैं ही नहीं—यह पक्की बात है। यह शुद्ध स्वरूप है। साधक की दशा कभी सात्त्विक कभी राजस, कभी तामस होती है। ऐसे ही जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति—ऐसी अवस्थाएँ आती हैं, दशाएँ होती हैं। ऐसे परिस्थिति आती है तो परिस्थितियाँ बदलने वाली होती हैं। ये घटनायें बदलने वाली होती हैं। इनका सम्बन्ध आने और जाने वाला होता है, इस वास्ते भगवान् ने कहा—

'आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व'। (२/१४)

ये आने जाने वाले हैं, इनको तुम सह लो। आओ इसमें तुम कुछ घबराओ मत। ये तो अन्तःकरण में आते हैं। आप में नहीं आते हैं। यह बात थोड़ी बारीक है, परन्तु इसको आप ध्यान देकर बड़ी सुगमतापूर्वक समझ सकते हो।

समता कैसे रहे ?

गीता में समता की बड़ी भारी महिमा गाई है। 'समत्वं योग उच्यते', समता का नाम ही योग है। 'सम दुःख सुख' स्वस्थ' बहुत बखान किया है। ज्ञानयोग में, कर्मयोग में व भक्ति योग में भी समता का खूब वर्णन है। यह समता कैसे

हो ? बहुत सीधी बात, बडी सरल बात, सब भाई समझ सकते हैं। ध्यान दें आप लोग। आपके सुखदायी घटना घटती है उस समय आप रहते हो कि नही ? आप अगर नही रहते तो सुख-दु ख का अनुभव कौन करेगा ? ऐसे दु खदायी से दु खदायी घटना घटती है तो उस समय भी आप रहते हो कि नही ? आप नही रहते तो दु खदायी घटना का अनुभव कौन करेगा ? सुख और दु ख तो बदलते हैं पर आप बदलते हो क्या ? तो

'पुरुष प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते'

'पुरुष सुखदु खाना भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते' (१३/२०)

सुख-दु ख भोगने मे हेतु बनता है कौन ? 'पुरुष प्रकृतिस्थ'। सुख के साथ, दु ख के साथ--दोनो मे आप वही रहे। सुख-दु ख दोनो के विभाग का ज्ञान आपको कैसे हुआ ? आपको ज्ञान होता है, तो सुख के समय भी आप रहते हैं और दु ख के समय भी आप रहते हैं। आप सुख-दु ख के साथ मिल जाते हैं तो सुखी-दु खी हो जाते हैं। नही तो 'सम दु ख सुख स्वस्थ' अगर 'स्व' मे स्थित रहे तो सुख-दु ख समान रहेगे। आप पर असर नही डालेंगे। आप पर असर तभी डालते हैं, जब आप उनमे तल्लीन हो जाते हैं, एक हो जाते हैं। तो 'सम दु.ख सुख स्वस्थ' और 'पुरुष प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते'। इसमें उसका साथ मत करो।

आपका स्वरूप सम है, हरदम आप रहते हो। सुखदायी, दु खदायी घटना घट जाय तो उन दोनो मे आप रहते हो। अपनी तरफ देखो, अवस्था की तरफ मत देखो। परिस्थिति की तरफ मत देखो। क्रियाओ की तरफ मत देखो। अपने आपकी तरफ देखो, तो वे मिट जायेगें। यह देखने की विद्या थोडा-

का अभ्यास करने से हाथ लगती है और वह हाथ लग जाय, अभी। मैंने कह दिया इतने मात्र से। साधक है बुद्धिमान है, तो उसके हाथ लग जायेगी। नहीं तो समय पाकर आ जायगी। सच्ची बात है यह।

अब इसमें थोड़ा-सा विस्तार करके और बात बतावें। ध्यान दें कि आप और आपकी अवस्था, आप और आपकी परिस्थिति, आप और आपकी दशा, आप और आपकी वस्तुएँ। ये दो हैं, एक नहीं है। यह खास जानने की बात है। आप एक रहते हैं, परिस्थिति बदलती है, घटना बदलती है, दशा बदलती है, व्यक्ति बदलते हैं वस्तुएँ बदलती हैं। आप एक रहते हो। तो आपकी ये चीजें हैं नहीं। न आप में हैं, न आप इनमें हो, न आपका सम्बन्ध है। तीनों बातें नहीं हैं। उनमें आप नहीं, आप में ये नहीं, आपके साथ इनका नित्य-सम्बन्ध नहीं। अगर नित्य-सम्बन्ध हो तो सुखी आदमी को दु:ख कैसे होगा? सुख में ही स्थित रहेगा। दु:खी होने वाला सुखी कैसे हो जायेगा? दु:ख में ही स्थित रहेगा। परन्तु 'आगमापायिनोऽनित्या', भगवान् कहते हैं—"भैया, ये तो आने-जाने वाले हैं। आना हुआ, सम्बन्ध हुआ, सम्बन्ध विच्छेद हुआ। नित्य रहते ही नहीं। 'तांस्तितिक्षस्व'—अपने में विकार क्यों लाते हो? आप सुख दु:ख के जानने वाले हो। सुख को भी जान लिया, दु:ख को भी जान लिया। तो जानने वाले तो आप एक ही रहे न!

बड़ी भयंकर घटना घटी। किसी आदमी का जवान बेटा मर गया, उसका समाचार आया कि अमुक जगह गया था, लड़का मर गया। और एक समाचार आया कि जो आपका दूसरा लड़का रहता था, उसके लड़का जन्म गया। दोनों के

जन्म का समाचार मिलने पर खुशी हुई। बेटा मर गया तो दुःखी हुए। ये सुख-दुःख दो हुए न, परन्तु आपका जानना जो है, बेटे की मृत्यु का ज्ञान और पोते के जन्म का ज्ञान—इस ज्ञान मे क्या फर्क आया? जानना मात्र तो एक ही हुआ न। जानने के विषय दो हुए। जानना एक हुआ। जब विषय दो होने पर जानने मे ही फर्क नही तो जानने वाले मे फर्क कैसे आया? आप मे फर्क नही है। आप पोते के साथ लग कर खुशी मनाते हैं बेटे के साथ चिपक कर 'बेटा मर गया'—इसका शोक मनाते है। ऊपर से भले ही शोक मनावो चाहे उत्सव मनावो, मन मे समझो कि बेटा न तो पहल था, न अब है और न हमारे साथ अगाडी रहेगा। यह पोता पहले नही था, अब जन्मा है, साथ यह भी नहीं रहेगा। यह अपनी आयु लेकर आया है। हम भी अपनी आयु लेकर आये हैं। हमारा-इसका सम्बन्ध नही है। सच्ची बात यह है। सच्ची बात को तो पकडते नही। झूठी बात को पकडकर सुखी-दुःखी मुफ्त मे होते हैं।

समता स्वतः सिद्ध है

सत्सग द्वारा क्या होता है? पैसे नही मिलते, दुःख मिटता है। आपको असली बात बताई जाती है कि आपके साथ इनका सम्बन्ध नही है। सच्ची बात है, उसको पकड लो तो दुःख मिट जायेगा। लाखो, करोडो, अरबो रुपये मिलने से भी दुःख नही मिटता। दुःख इस बात से मिट जाता है, टिकता ही नही। ये तो आने जाने वाले हैं। बिल्कुल अपना अनुभव है, आप वे ही हो। बाल्यावस्था आई तो आप वे ही हो, जवान अवस्था मे आप वे ही हो, वृद्धावस्था मे आप तो वे ही हो। यह आपका

सा अभ्यास करने से हाथ लगती है और वह हाथ लग जाय, अभी। मैंने कह दिया इतने मात्र से। साधक है, बुद्धिमान है, तो उसके हाथ लग जायेगी। नही तो समय पाकर आ जायगी। सच्ची बात है यह।

अब इसमें थोडा-सा विस्तार करके और बात बतावें। ध्यान दें कि आप और आपकी अवस्था, आप और आपकी परिस्थिति, आप और आपकी दशा, आप और आपकी वस्तुएं। ये दो हैं, एक नही है। यह खास जानने की बात है। आप एक रहते हैं, परिस्थिति बदलती है, घटना बदलती है, दशा बदलती है, व्यक्ति बदलते हैं वस्तुएँ बदलती हैं। आप एक रहते हो। तो आपकी ये चीजें हैं नहीं। न आप मे हैं, न आप इनमे हो, न आपका सम्बन्ध है। तीनो बातें नही हैं। उनमे आप नही, आप मे ये नही, आपके साथ इनका नित्य-सम्बन्ध नहीं। अगर नित्य-सम्बन्ध हो तो सुखी आदमी को दु ख कैसे होगा ? सुख में ही स्थित रहेगा। दु खी होने वाला सुखी कैसे हो जायेगा ? दु ख में ही स्थित रहेगा। परन्तु 'आगमापायिनोऽनित्या', भगवान् कहते हैं—'भैया, ये तो आने-जाने वाले हैं। आना हुआ, सम्बन्ध हुआ, सम्बन्ध विच्छेद हुआ। नित्य रहते ही नहीं। 'तांस्तितिक्षस्व'—अपने मे विकार क्यो लाते हो ? आप सुख दु ख के जानने वाले हो। सुख को भी जान लिया, दु:ख को भी जान लिया। तो जानने वाले तो आप एक ही रहे न !

बडी भयकर घटना घटी। किसी आदमी का जवान बेटा मर गया, उसका समाचार आया कि अमुक जगह गया था, *लडका मर गया।* और एक *समाचार आया कि जो* आपका दूसरा लडका रहता था, उसके लडका जन्म गया। पोते के

जन्म का समाचार मिलने पर खुशी हुई। बेटा मर गया तो दु खी हुए। ये सुख-दु ख दो हुए न, परन्तु आपका जानना जो है, बेटे की मृत्यु का ज्ञान और पोते के जन्म का ज्ञान—इस ज्ञान मे क्या फर्क आया? जानना मात्र तो एक ही हुआ न। जानने के विषय दो हुए। जानना एक हुआ। जब विषय दो होने पर जानने मे ही फर्क नही तो जानने वाले मे फर्क कैसे आया? आप मे फर्क नही है। आप पोते के साथ लग कर खुशी मनाते हैं बेटे के साथ चिपक कर 'बेटा मर गया'—इसका शोक मनाते हैं। ऊपर से भले ही शोक मनावो चाहे उत्सव मनावो, मन मे समझो कि बेटा न तो पहल था, न अब है और न हमारे साथ अगाडी रहेगा। यह पोता पहले नही था, अब जन्मा है, साथ यह भी नही रहेगा। यह अपनी आयु लेकर आया है। हम भी अपनी आयु लेकर आये हैं। हमारा-इसका सम्बन्ध नही है। सच्ची बात यह है। सच्ची बात को तो पकडते नही। झूठी बात को पकडकर सुखी-दु खी मुफ्त मे होते है।

समता स्वत सिद्ध है

सत्सग द्वारा क्या होता है? पैसे नही मिलते, दु ख मिटता है। आपको असली बात बताई जाती है कि आपके साथ इनका सम्बन्ध नही है। सच्ची बात है, उसको पकड लो तो दु ख मिट जायेगा। लाखो, करोडो, अरबो रुपये मिलने से भी दु ख नही मिटता। दु ख इस बात से मिट जाता है, टिकता ही नही। ये तो आने जाने वाले हैं। बिल्कुल अपना अनुभव है, आप वे ही हो। बाल्यावस्था आई तो आप वे ही हो, जवान अवस्था मे आप वे ही हो, वृद्धावस्था मे आप तो वे ही हो। यह आपका

ज्ञान है कि नही ? आपका एक ज्ञान है कि मैं वही हूँ। परि-स्थिति वह नही है। अवस्था वह नही है। पदार्थ वे नही है, घटना वह नही है, स्थिति वह नही है, भाव वे नही है, सकल्प विकल्प वे नही है। आपके सिद्धान्त वे नही हैं, जो बचपन मे थे। वे सबके सब बदले हैं, पर आप नही बदले हो। आप और आपकी परिस्थिति, आप और आपकी अवस्था, आप और आपकी दशा—ये दो हैं। केवल इस बात को आज आप मान लें। समझ लें तब तो निहाल ही हो जायँ। शका हो तो फिर पूछ लेना।

आप और आपकी अवस्था, आप और आपकी परिस्थिति, आप और आपके जन, आप और आपकी वस्तु, आप और आपका घर—ये दो हैं। एक नही है। आप वे ही रहते हो, ये बदलते हैं। ये बदलने वाले अलग हैं। आप एक रहने वाले अलग हैं। ध्यान देकर आप समझें। भाई-बहनो! थोडी बात बारीक है पर बडी सरल और सीधी बात है। यह तो आपको हमारी सब की भोगी हुई है। अवस्थाए बदल गई। खुद आप कहते थे कि मैं बच्चा हूँ। बालक हूँ। आज कह सकते हो कि मैं बालक हूँ ? बालकपना आपने कब छोडा ? कोई तारीख हो तो बताओ कि अमुक तारीख से हमने बचपन छोड दिया। आपने नही छोडा, वह सामने होकर निकल गया। जब बचपन निकल गया तो क्या जवानी टिकेगी ? क्या वृद्धावस्था टिकेगी ? रोगी अवस्था टिकेगी, नीरोग अवस्था टिकेगी ? सकल्प विकल्प टिकेगे ? चाहे बाहर की परिस्थिति हो चाहे भीतर की परि-स्थिति हो। सब बहती है, बहती। दरवाजे पर खडे हो जायँ, मोटरें खूब आवें तो खुशी मनावें कि अहा! मौज हो गई आज! कितनी मोटरे आ गई। दूसरे दिन खडे रहे, मोटर एक

भी नही आई तो रोने लगे। आज तो मोटर नही आई। धूल नही उडी तेरे हर्ज क्या हुआ? अब रोने लग गये सा। ऐसे बेटा, पोता, धन हो गया तो खुश हो गये। चला गया तो दुखी हो गये। यह है नही, था नही, रहेगा नही। अब धूल ज्यादा उड गई तो उससे ज्यादा खुशी। बेटा मर गया, पोता मर गया, धन चला गया! अरे चला गया तो जाने वाला ही गया है। बिना जाने वाला कैसे गया? जो चला गया वह रहेगा कैसे? वह तो जाने वाला ही है।

अपने आप मे स्थित होना

इस वास्ते आप जरा 'स्व' मे स्थित हो जायें। अपने आप मे, जो आप वास्तव मे स्थित है। उसमे तो आप स्थित रहते हैं। अपने आपमे स्थिति स्वत है आपकी। इसको केवल सभालना है। ये **'आगमापायिनो'** आने जाने वाले हैं। आप और आपकी वस्तुएँ अलग है। आप और आपकी परिस्थिति अलग है। आप और आपकी अवस्था अलग हैं। आप और आपकी दशा अलग हैं। इसमे यह परिवर्तन हो रहा है। सकल्प-विकल्प मन मे होते हैं, अन्त करण मे होते है। करण आप नही हो। इनके सकल्प-विकल्प आप मे नही है। आने जाने वाले हैं। आप इनको देखने वाले हो, तभी तो तरह-तरह की घटनाओ का अलग अलग भोग होता हैं, अगर आप नही रहते तो अलग-अलग घटनाओ का भोग कौन करता? पर आप इनके साथ मिलकर के भोगी बन जाते हो। अगर उनके साथ न मिलो तो योगी हो। और मिल गये तो भोगी।

भोगी ही सुख-दुख भोगता है योगी तो 'सम दुख सुख

स्वस्थ ' वह स्वस्थ रहता है। बिल्कुल अलग रहते हो आप। आप तो अलग ही होते हो, हो ही अलग। बनावटीपने में साथ हुए हो। बनावटीपना छोडा और आपकी स्थिति हो जायेगी। बोलो क्या फर्क है इसमे ? यह तो ऐसा ही होता है। आता है और जाता है। यह ता ससार का स्वरूप है। 'सम्यक् प्रकारेण सरतीति ससार '। चलता रहे उसका नाम ससार है। 'गच्छतीति जगत्', जो जाता रहे। वह जाता रहता है आप रहने वाले हो।

मेरी एक प्राथना है। मेरा एक निवेदन है, आप ध्यान दें। मिल भी जाओ दु ख भी हो जाय तो भी यह बात याद रखो कि हम इनके साथी नही है। यह बात सच्ची है। मिलने वाली बात कच्ची है, नही मिलने वाली बात याद रखो तो मिलने पर भी दु ख नही होगा। आज दु खी हो भी जाओ तो घबराओ मत। मेरे पर सुख-दु ख का असर पड जाय तो कोई बात नही। यह असर पड गया, यह चला जायेगा रहेगा नही। इतनी सी बात याद रखो। इसमे क्या कठिनता है, बताओ ? सुखदायी परिस्थिति आई तो आ गई, दु खदायी परिस्थिति भी आ गई। आई और गई। इसमे हमारे क्या लगता है ? केवल इतना सा ख्याल रखो कि ये आने-जाने वाले हैं। हम हैं रहने वाले। हमारे क्या फर्क पडता है इसमे ? आ जाय तो अच्छी बात, चली जाय तो अच्छी बात। आपके फर्क नही पडता। फर्क पड भी जाय तो कोई परवाह नही। पर याद तो रखो कि मैं तो वही रहता हूँ।

सुख के समय मे भी, दु ख के समय में भी आप जो एक रहते हो उसका नाम 'समता' है। समता मे स्थिति स्वत आपकी है। मनुष्य समझता है कि समता बडी कठिन है।

समता कठिन है तो क्या विषमता सुगम है ? विषमता तो आपकी बनाई हुई है । समता तो स्वत सिद्ध है, मिटती नही । उसमे क्या कठिन है ? समता तो स्वत सिद्ध है ।

निर्दोष हि सम ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिता । (५/१९) इस वास्ते 'न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्' (५/२०) । प्रिय को प्राप्त करके राजी मत होओ, अप्रिय को प्राप्त करके दु खी मत होओ । केवल इतनी बात है । आप सुखी-दु खी होते हो, यह गल्ती होती हैं । पहले गल्ती हो जाय तो भी परवाह नही, मिट जायेगी, परन्तु आप न सुख को पकडो, न दु ख को पकडो । आप इनसे अलग हो और ये आने जाने वाले हैं । आने जाने वाले को हम क्यो पकडें ? यह आ गई तो बडी खुशी की बात, नही आई, तो बडी खुशी की बात । हम अपने दरवाजे पर खडे हैं । बेटा पोता बहुत हो गया, तो बडे आनन्द की बात । मर गये तो बहुत अच्छी बात । जनम गये तो जन्म की विधि है वो कर दो । इस प्रकार समता मे आपकी स्थिति स्वत रहती है ।

नारायण, नारायण, नारायण

(दिनाक २७ जुलाई, १९८१)

॥ श्री हरि ॥

प्रवचन—३

परमात्म तत्व की नित्यता

भगवान् की ओर चलने मे इन्द्रियो को, शरीर को, मन बुद्धि की आवश्यकता नही है। परमात्मा की तरफ चलने के लिये 'खुद' की आवश्यकता है। कोई मूक हो, बहरा हो, कैसा ही लूला लगडा क्यो न हो! भगवान् की तरफ खूब मस्ती से चल सकता है। ससार मे योग्यता को लेकर अधिकार होता है। भगवान् के यहाँ केवल चाहना मात्र से अधिकार होता है। यहाँ योग्यता की कोई कीमत नही, कैसा है? कितना पढा लिखा है? कैसा शरीर है? किस वर्ण, देश, आश्रम, सप्रदाय का है कोई जरूरत नही। आपका भाव चाहिये। 'भावग्राही जनार्दन'। खास बाधा क्या है? इसे आप सुनें, जो मैं बार-बार कहता हूँ। उत्पत्ति-विनाश का आदर करने से नित्य-तत्त्व का निरादर हो जाता है। बस, उत्पन्न और नष्ट होने वाली चीजो को हम बडी मान लेते हैं—यही बाधा है। इनका उपयोग बाधा नही। ये वस्तुए बाधा नही। रुपये हो जाय, पदार्थ हो जाय तो कोई बाधा नही। न हो तो कोई बाधा नही। हृदय मे इनका महत्त्व देकर इनको बहुत बडी मान लेते है। ऐसे भगवान् का मूल्य घटा देते हैं, यह बाधा है खास।

यह जो बात समझाने के लिये कही थी कि हम चीजो को ही देखते हैं तो चीजें दो नम्बर मे दीखती है, प्रकाश पहले नम्बर मे है। चीजो के आधीन वह प्रकाश नही है। प्रकाश के अधीन वे चीजे दीखती है। सबसे पहले प्रकाश और पीछे चीजे दीखती है, यह दिया था दृष्टान्त। तात्पर्य यह है कि किसी चीज का हमे ज्ञान होता है, हमे याद आती है तो पहले एक प्रकाश मे एक ज्ञान मे याद आती है। हम पढाई करते हैं, समझते हैं, वह भी किसी ज्ञान मे समझते हैं। वह भी ज्ञान है। हर एक काम आप करेंगे तो पहले उसका ज्ञान होगा। ज्ञान होने से उस विषय मे प्रवृत्ति होती है। वह जो ज्ञान है, वह परमात्मा का स्वरूप है, वह वास्तविक ज्ञान है। सूर्य का, चन्द्रमा का, अग्नि का, तारो का, बिजली का, जुगनू का जो ज्ञान है, यह सब भौतिक ज्ञान—भौतिक प्रकाश है। इससे ऊँचा इन्द्रियो का प्रकाश है। इन्द्रियो के द्वारा हम चीजो को जानते हैं, नेत्र द्वारा देखते हैं, त्वचा से स्पर्श करते हैं, कानो से शब्द सुनते हैं रसना से रस लेते हैं, नासिका से गध लेते हैं, तो यह जो ज्ञान होता है न—शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध का ज्ञान। इस ज्ञान को प्रकाशित करने वाली इन्द्रियाँ हैं। इन्द्रियो को प्रकाशित करने वाला मन है। मन अगर दूसरी जगह रहता है तो वह ठीक नही होता। जैसे, अभी मैं बोला, आपने सुना नही, मन चला गया दूसरी जगह ही। तो क्या कहा ? पता नही। मन नही लगने से जैरामजी की। इस वास्ते इनको प्रकाशित करता है मन। मन को प्रकाशित करती है बुद्धि। बुद्धि को प्रकाशित करता है स्वय और स्वय को प्रकाश मिलता है परमात्मा से। वह ज्ञान हर समय रहता है।

आपको नीद आती है तो भी परमात्मा वैसे के वैसे जागते है। आप जागते हैं तो भी परमात्मा वैसे के वैसे जागते हैं। आपको स्वप्न आता है तो उसमे भी परमात्मा वैसे के वैसे ही जानते हैं। आपके मन मे विचार आते है, उन विचारो को भगवान् जानते हैं। मन मे कुछ भी खटपट होती है, उसको भगवान् जानते हैं। भगवान् सब बातो को जानते हैं। वह ज्ञान है, केवल शुद्ध ज्ञान। उस ज्ञान के अन्तर्गत अनन्त सृष्टि फैल रही है। स्थिति हो रही है और लीन हो रही है। वह प्रकाश है, ज्यो-का त्यो निरतर है। उसी को सच्चिदानन्द कहते हैं। वह सत्य होने से सत् है। ज्ञान होने से चित् है। आनन्द ही आनन्द है। दु ख का लेश भी नही है वहाँ।

राम सच्चिदानद दिनेसा। नहिं तहँ मोह निसा लवलेसा।
(मानस १/११५/५)

लवलेश भी दु ख नही, सन्ताप नही, जलन नही। ऐसा आनन्द स्वरूप है। वह सबसे पहले है और सबके खत्म होने पर भी रहता है, सब सृष्टि के रहते हुए भी वह है, ज्यों का-त्यों रहता है। उसमे कोई परिवर्तन नही होता। उसमे कोई घट-बढ नही होती।

वह ज्योतियों का ज्योति है सबसे प्रथम भासता।
अद्वैत सनातन सर्व विश्व प्रकाशता॥

वह ज्योतियो का ज्योति सबका कारण भगवान् है। इस तरफ लक्ष्य रखो आप।

हरेक काम करते हो तो आपका भी ज्ञान पहले होता है, पीछे वस्तुओ का ज्ञान होता है, तो परमात्मा का ज्ञान पहले है, सबके रहते हुए है और सबके लीन होने पर भी रहता है। सबके मिट जाने पर भी रहता है, बन जाने पर भी, बिगड जाने पर भी, परिवर्तन पर भी वह प्रकाश है, ज्यो-का त्यो रहता है। उस प्रकाश को प्राप्त करना ही जीव का काम है। इसका खास कर्त्तव्य है। उस प्रकाश मे स्थित हो जाय तो बस निहाल हो गये, मनुष्य जन्म सफल हो गया। यह इतनी बात भी आपके हमारे सामने आ गई कि सबका प्रकाश करने वाला, सबका आधार सबका आश्रय, सबको सत्ता स्फूर्ति देने वाला, सबको शक्ति देने वाला, सबकी रक्षा करने वाला, सबकी सहायता करने वाला, सबका भरण पोषण करने वाला परमात्म तत्त्व सब जगह, सब देश मे, सब काल मे सब वस्तुओ मे, सपूर्ण घटनाओ मे, सम्पूर्ण व्यक्तियो मे, सम्पूर्ण अवस्थाओ मे है, ज्यो-का-त्यो परिपूर्ण है। उसमे स्थिति हो जाय तो फिर कुछ भी करना, जानना, पाना, बाकी नही रहेगा।

परमात्म प्राप्ति मे खास बाधा

अब प्रश्न है कि उसमे स्थिति नही होती। उसमे कारण क्या है? सज्जनो! बार-बार सुनना भी अच्छा है, बार-बार कहना भी अच्छा है, पर वास्तव मे उसमे स्थित होना बढिया है। उसे ठीक हृदय-गम करें, उसका आदर करें। उसको महत्व दें। गल्ती क्या हो रही है? अब इस बात को आप लोग विशेष ध्यान से समझे। हम जानते हैं कि लडका पैदा हो जाता है और मर जाता है, धन आता है और चला जाता है, वस्तु

मिलती है और अलग हो जाती है। ये जितनी चीजें हैं इनका भरोसा मन मे कर रखा है, बस यह बडी भारी गलती है। मोटी गलती, सबसे बडी गलती, खास गलती। इन चीजो को आधार मान रखा है, इतने रुपये हो तो मैं ठीक हो जाऊ। रुपये चले जाय तो मेरी क्या दशा होगी? इतना कुटुम्ब नही रहेगा तो मेरी क्या दशा होगी? यह अवस्था नही रहेगी तो मेरी क्या दशा होगी? बीमार हो जाऊगा तो मेरी क्या दशा होगी? अरे भाई! ये सब तो जाने ही वाले हैं। उत्पन्न और नष्ट होने वाली वस्तुओ के आधीन क्या हो गया? यह तो सामने देखते-देखते उत्पन्न और नष्ट होते हैं न। आते हैं और जाते हैं कि नही! ये तो बदलते हैं न। इनके आने जाने मे आप सुखी दु खी क्यो होते हैं? *आ जाय तो* इनका उपयोग करो, चले जाय तो भी उनका उपयोग करो। हमारे चाहिये ही नही। मिल गई है तो अच्छी तरह से काम मे लाओ। सेवा करो, उपकार करो, हित करो। चली जाय तो अच्छी बात। भगवान् की मर्जी। ये तो आने जाने वाले ही हैं।

भगवान् सबसे पहले यह बात बताते हैं गीताजी मे कि भाई! आने जाने वाले हैं। **देहिनोऽस्मिन्या यथा देहे'** शरीर-धारी के इस देह मे **'कौमार यौवन जरा'** कौमार अवस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था आती है। अब बालक से जवान हो गया तो घर मे लोग रोते नही। क्या करें? छोरा जवान हो गया। जवान से बूढा हो जाय तो रोते नही सब मिलकर कि क्या करें यह तो बूढा हो गया। बीमार हो जाता है तो बीमारी कैसे दूर हो? उद्योग करते हैं। पर बीमार क्यो हो गया, क्या करें? पाच, सात, दस मिलकर रोवें। क्यो रोते हो? कि

बीमार हो गया। यह तो होता है। रोने से क्या हो? अपना काम उद्योग करो। इसकी बीमारी दूर कैसे हो? इसको आराम कैसे मिले? इसका दुःख दूर कैसे हो? ऐसा उद्योग करना आपका काम है। उद्योग करने पर यह ठीक हो जाय तो अच्छी बात। न हो तो हम क्या करें इसमे? रोने की जरूरत नही। रोवोगे तो इलाज नही होगा। सेवा नही कर सकोगे। व्याकुल हो जाता है, वह ठीक काम नही कर सकता। तो नुकसान ही होगा। ये तो आने-जाने वाले हैं।

प्रत्येक परिस्थिति में सम रहे

सज्जनो, माताओ बहनो? जरा आप ध्यान दो, थोडी कृपा करो। यहा सत्सग मे कोई पैसे नही मिलते। यहा कोई धन नही मिलता। माल नही मिलता, पर इतना बढिया माल मिलता है कि सदा के लिये सब निहाल हो जाओ। आज अभी इस बात से ऐसा समझ लो, इस बात को मान लो, हृदय मे धारण कर लो कि भाई ससार की वस्तु परिस्थिति, घटना बदलने वाली है। यह तो बदलेगी ही। एक समान किसी की अवस्था नही रही। भगवान राम अवतार धारण करते हैं। उनका शरीर कर्मजन्य नही होता है। हमारी तरह जन्मने-मरने वाले नही है। स्वतन्त्रता से प्रगट होते हैं। उनके भी आप जरा अवस्था देखो। वे कहते हैं—

> "यच्चिन्तित तदिह दूरतर प्रयाति,
> यच्चेतसापि न कृत तदिह उपैति।
> प्रातर्भवामि वसुधाधिप चक्रवर्ति,
> सोह व्रजामि विपिने जटिल तपस्वी॥

हमने मन से भी विचार नही किया कि हम जगल मे रहेंगे। वनवास हो गया, बताओ कितनी विचित्र बात ? और चिन्तन नही किया, वह तो आ गया। जो विचार किया था, वह दूर चला गया। सुबह ही राजा बन जाऊँगा, उसकी जगह चौदह वर्ष का वनवास हो गया। तो विचार कुछ और ही करता है, होता कुछ और ही है। इसमे क्या चिंता करें ? 'तू नर और विचार करे, तेरो विचार धर्यो ही रहेगो। यह तो विचार धरा ही रहेगा भाई ! इस वास्ते विचार करो, पर उसकी चिन्ता मत करो। काम करना है, विचार कर लिया, हो गया तो बडी अच्छी बात। न हो तो बहुत ही बढिया बात। अब मन चाहा न हुआ तो दु खी हो जाते हैं, अमुक से मिलना है, मिलना नही हुआ तो दु खी हो जाते हैं। अपने कोई काम नही हुआ तो दु खी हो गये। दु खी क्यो होते हो भाई ? उद्योग करो, पुरुषार्थ करो, यह भी सिद्ध हो जाय तो बडी अच्छी बात। न हो जाय तो अच्छी बात। यह गीता की शिक्षा है। यह महान् धन है। बडी भारी पू जी है। 'सिद्ध्यसिद्ध्यो समो भूत्वा समत्व योग उच्यते' (गीता २/४८)। प्राणायाम करो, श्वास रोको, मन लग जाय, समाधि लग जाय इसको योग कहते हैं लोग। पर गीता कहती है सिद्धि-असिद्धि मे सम रहो, यह योग है। कितनी बढिया बात। चलते फिरते काम धन्धा करते गृहस्थ मे रहते हुए हानि-लाभ मे दु खी-सुखी नही होना। यह योग है योग। प्राणायाम करके नाक पकड कर करना इतना ऊचा योग नहीं है। समाधि लगाना इतना ऊचा नहीं है।

लोग कहते हैं मन नही लगता। मन लगना, न लगना इतनी ऊची चीज नहीं है। यह ऊची चीज है कि सिद्धि असिद्धि

ने सम रहना। सिद्धि भी टिकने वाली नहीं और असिद्धि भी टिकने वाली नही।

'रज्जब रोवे कौन को हसे सो कौन विचार।
गये सो आवन के नहीं रहे सो जावनहार ॥

जो मर गये, उनके लिये रोवें क्या ? वे तो आने वाले हैं नही। अब इनको लेकर हँसे तो क्या हँसे ? सब जाने वाले है। क्या रोवें और क्या हँसे ? करो तो सेवा करो उत्साहपूर्वक, सबको सुख पहुचाओ। ऊचे-से ऊचा अच्छे-से-अच्छा बर्ताव करो। यह तो है काम करने का। पर यह क्या धन्धा शुरू कर दिया—रोना हसना, राजी होना, नाराज होना। मुफ्त मे यू ही। राजी-नाराज न होकर प्रसन्न रहो। भगवान् जो विधान करे।

'जाहि विधि राखे राम ताही विधि रहिए।
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये'।

भगवान् का नाम लो, प्रसन्न रहो। यह तो आता है और जाता है रहता नही। बनता है, बिगडता है, यह तो ऐसा होता है। एक कहानी आई है। वह कोई खास सिद्धान्त की नही है, पर बात बहुत बढिया है।

चिन्ता मिटाने के विषय में एक कहानी

एक राजकु वर था, उसके साथ पाच सात दस घुडसवार घोडो पर घूम रहे थे। बहुत सी गुजरिया कोई छाछ, कोई दूध, कोई दही ऐसे लेकर बिक्री करने को जाती थी। तो याद आ गई कि भगवान् ने ऐसे ही दही-दूध लूटा था तो अपने भी चलो। फिर उनको दाम दे देंगे एक तमाशा कर लें। राजकुमार

गये और लूट लिया, उनके मटके फोड दिये। बेचारी रोनें लगी। एक उनमे से थी, जिसका छाछ का मटका फोड दिया था, छाछ बिखर गई। वह चिन्ता ही नही करती, वह वैसे ही प्रसन्न है। छाछ का मटका लिये जाती थी, मटका फूट गया, छाछ बिखर गयी। तो भी वैसे ही राजी है। तो राजकु वर ने कहा—'तू रोती नही क्या बात है? तेरे चिंता क्यो नही हो रही है? तो कहा—महाराज मेरी बात लम्बी है। मैं इस छाछ का सोच क्या करू"? **'महाराज कुमार भई गुजरी! अब छाछ को सोच कहा करियें'**। अब छाछ का सोच क्या करू"? क्या बात हुई? तो उसने अपनी कथा सुनाई। राजकु वर ने सब साथियो से कह दिया, सुनो भाई! बात सुनो।

वह कहने लगी—अमुक अमुक शहर के एक सेठ की मैं पत्नी थी और मेरे गोद मे एक बालक था। वे सेठ बाहर देशान्तर मे चले गये कमाने के लिये। वहा के राजा की बुद्धि खराब थी। मेरी अवस्था छोटी और रूप सुन्दर था। उसने मेरे पर खराब दृष्टि कर-ली और कहा—'अमुक दिन तेरे को मिलना पडेगा, आना ही होगा, तुम कब आती हो जवाब दो? तो मैंने कहा—'अभी ठहरो!' अपने पति को याद किया, पत्र दिया कि जल्दी आओ मेरे आफत आ गई, आप जल्दी आओ। वह सेठ बेचारा आ गया तो बोली बात कही और पूछा कि 'मैं क्या करू"?' तो आपस में सलाह की कि कोई बात नही। तुम उसको समय दे दो। और राजा को कह दिया कि अमुक जगह शहर के बाहर आप आ जाओ, पर शर्त यह रहे कि मील भर नजदीक में कोई अन्य व्यक्ति न रहे।' राजा ने स्वीकार कर लिया। दोनो पति-पत्नी घर से निकल गये, कारण कि यहा टिक नहीं सकेंगे। तो रात्रि मे वहाँ तलवार लेकर गई। जब राजा आया तो उसका

टुकडा कर दिया और भाग गई । राजा से कह रखा था कि रात भर कोई नही आना चाहिये, तो कोई नही आयेगा । भागने के पहले से पति को कह दिया था कि आप अमुक जगह टूटे-फूटे मकान मे रहो, जो वहाँ था । वहा रहा तो पति को जहरीला साँप काट गया, जिससे वह मर गया । जब पति के पास आ गई तो उसे मरा पाया फिर तो अकेली भागी कोई रक्षा करने वाला नही था । पकडी गयी तो लोग टुकडे टुकडे कर ही देंगे । बढिया गहने पहने हुए वहा से भागी ।

आगे डाकू मिल गये । उन लोगो ने पकड लिया, सब गहने छीन लिये और वेश्या के घर ले जाकर बिक्री कर दिया । वेश्या ने छोटी अवस्था देखकर खरीद ली । छोरा पीछे ही रह गया । अब वहाँ रहने लगी । अब उधर दूसरा राजा बैठा तो उसने मेरे छोरे को पाल कर बडा किया । वह मेरा लडका वही राज्य मे नौकरी करने लगा । बडा हो गया । इधर मैं वेश्या हो गई । अब एक बार वह छोरा भी मेरे यहां आया । रात भर रहा मेरे बहम हो गया, कौन है यह ? सुबह होते ही पूछा तो उसने नाम-ठाम बताया, तो पता लगा अरे ! यह तो मेरा ही लडका है । बडा दुख हुआ, क्या तेरी दशा थी ? बडी ग्लानि, बडा भारी दुख हुआ । पडितो से पूछा, 'ऐसा किसी से पाप घट जाय, तो क्या करे ? तो कहा 'चिता बना कर आग मे बैठ जाय ।' विचार किया कि प्रायश्चित करना है । क्या मैं थी और क्या दशा हो गई ? ऐसा विचार आया कि चिता मे बठ जाऊगी तो पीछे कौन गगाजी मे डालेगा ? नदी के किनारे काठ मगा कर इकट्ठा कर वैठ गई और आग लगा दी । वह काठ खूब जलने लगा इतने मे पीछे से आयी बाढ तो उसमे वह गयी । बहते-बहते

काठ पर बैठी तो नौका हो गई और आग बुझ गई। अगाड़ी किसी गाव के किनारे काठ ठहरा तो नीचे उतरी। उधर गाव में गूजर बसते थे। अब वहा उनकी चीज बिक्री करके काम चलाती हू। अब वह छाछ लेकर आई। आज ढुल गई। अब क्या चिंता करू ?

'नृप मार चली पिव पे, पिव भुजग डस्यो जो गयो मर है।
मग चोर मिले उन लूट लई, पुनि बेच दई गणिका घर है।
सुत सेज रमी चिता पे चढी, जल पूब बह्यो सरिता तर है।
महाराज कुमार अब भई गुजरी, अब छाछ को सोच का कर है ?

अब छाछ की चिन्ता क्या करू ? क्या-क्या घटना घटी है, मटकी फूट गई छाछ ढुल गई क्या हो गया इसमे ? इस वास्ते क्या चिन्ता करू ? तो ऐसे भाई कितने जन्मो मे क्या दशा हुई है ? थोडे से नुकसान मे रोने लगा जाय। अब छाछ को सोच कहा करिये ? क्या इसकी चिन्ता करे। ऐसे घटनाए होती रहती हैं, यह तो बीतता रहता है।

'हत्वा नृप पतिमवेक्ष्य भुजग दष्टम्
देशान्तरे विधिवशाद् गणिकां च याता।
पुत्र प्रति समधिगम्य चिता प्रविष्टां,
शोचामि गोप गृहिणि किमद्यतक्रम् ।।

सुखी-दु खी होने में कारण—मूर्खता

छाछ-गृहिणी होकर छाछ को सोच क्या करू ? ऐसे कई अवस्थाए हुई हैं, कितने जन्म बीत गये हैं। उसमे यह मर गया, बेटा मर गया, पति मर गया, पत्नि मर गई। कई बार मरा है, क्या हो गया तेरे ? तू यहाँ का है नही, ये तेरे हैं नही। तू

बहता आया है, साथ मे मिल गये हैं। नदी मे काठ बहते है, बहते-बहते पानी का फटकारा लगे तो काठ इकट्ठे हो जाय। दूसरे फटकारे मे अलग अलग हो जाय तो अब तो मिलें ही नही। अब क्या रोवें क्या करें? यह तो ऐसा आता है। हवा चलती है तो फूस कही का-कही आकर इकट्ठा हो जाता है। दूसरे झोके मे अलग हो जाय, अब क्या नई बात हो गई? यह बात आने-जाने वाली है। अगर इस बात को मनुष्य याद रखे कि इनके लिये क्या चिन्ता करे क्या फिकर करे? अपना काम है—सदा नित्य निरन्तर रहने वाला आनन्द है उसे प्राप्त करना। पर ससार मे तो क्या है? धन हो गया तो क्या, धन चला गया तो क्या? उसके लिये झूठ-कपट करे, बेईमानी करें, धोखेबाजी करें, विश्वासघात करे, महान् अन्याय करें। वह अन्याय तो पले बधेगा। धन यही रहेगा। धन साथ मे रहेगा नही। साथ मे रहना तो दूर रहा, उम्र भर मे जितना इकट्ठा किया है, खर्च कर सकोगे नही। छोडकर मरोगे और पाप साथ ले जाओगे। यह जरा सोचो, होश आना चाहिये। कमाओ, रखो। कोई खावे अच्छी बात है। अपने तो बस—

> 'खावो खरचो भल पण खाटो सुकृत हुवे तो हाथे।
> दिया विना न जातो दीठो सोनो रूपो साथे।।

इस वास्ते उपकार करो, हित करो, शरीर से परिश्रम करो, सेवा कर दो। शास्त्र की आज्ञा, धर्म की मर्यादा, अपने कुल की मर्यादा मे रहते हुए सबकी सेवा कर दो। सुख पहुचा दो। मौज से रहो, आनन्द से रहो, क्यो दु ख पावो? क्यो दु खी होवो? धन हो गया राजी हो जाते हो, क्या हो गया तुम्हारे? धन हो गया तो हो गया। धन चला गया तो चला गया। आदर हो

गया, हो गया। निरादर हो गया, हो गया। यह तो होता रहता है 'आगमापायिनो नित्या' ये तो आने जाने वाले हैं, अनित्य हैं। इसमें क्या सुखी होवें, क्या दु खी होवें ? 'न प्रहृष्येत्प्रिय प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्'। (गीता ५/२०)। जो प्रिय लगे उसके प्राप्त मे हर्षित न होवे, अप्रिय हो गया तो अच्छी बात। वह भी चला जायेगा। न सुख स्थिर रहता है न दु ख। मन में विचार करें पर हो जाय कुछ और ही, तो होना है भगवान् के आधीन। इस वास्ते होने मे तो प्रसन्न रहे, क्योंकि यह हमारे हाथ की बात नही है।

करने मे अच्छे से अच्छा उत्तम-से उत्तम काम करना है। नीचा काम नही करना है। करने मे हरदम सावधान रहे और होने मे प्रसन्न रहे। ये चीजें सत्सग से मिलती हैं। अब इसको ले लो आप, तो निहाल हो जाओ। मस्त रहो ससार मे, सुख दु ख तो आते रहेगे भाई ! नफा और नुकसान तो होते रहेग। इनको कोई मिटा नही सकता, अपने मस्त रह सकते हैं। हो जाय तो बडे आनन्द की बात, न हो तो आनन्द की बात। अपने आनन्द मे फर्क क्यो पडे ? इन आने जाने वाली चीजो को लेकर हम सुखी-दु खी क्यो होवें ? मुफ्त मे ही। कोई उडता तीर जा रहा हो, उसके सामने जावें और कहें लग गई। तो क्यों गया सामने ? फिर कहे लग गई। यह प्रारब्ध का दु ख नही है। प्रारब्ध का है घटना घट जाना, परिस्थिति बन जाना। यह तो है—प्रारब्ध का फल और दु खी हो जाना यह है—मूर्खता का फल।

सुख दु ख प्रारब्ध का फल नही है। सुखी-दु खी होते हैं भीतर। यह प्रारब्ध का फल नही है। सुखदायी परिस्थिति आ

जाय, दु खदायी परिस्थिति आ जाय—यह प्रारब्ध का फल है। वह निकल जायेगी। फल भोगने के बाद टिकेगी नही। सुखी-दु खी होकर मुफ्त मे ही क्यो दु ख पावें ? होने पर क्या होता है ? प्रारब्ध अनुसार परिस्थिति तो आती है। क्या बूढा नही होगा ? क्या ज्ञान होने पर बीमार नही होगा ? वह गृहस्थ होता है तो उसके बाल-बच्चे नही मरेंगे क्या ? ज्ञान होने पर धन आयेगा तो जायेगा नही क्या ? यह तो ऐसे ही होगा। ज्ञान होने पर वह हर हालत मे मस्त रहेगा। पूरे हैं मर्द वे ही, जो हर हाल मे खुश हैं।" क्यो दु ख पावें मुफ्त मे ? परिस्थिति तो प्रारब्ध जन्य है, आ गई, आ गई। निकल जायेगी, हम बीच में ही क्यो दु ख खडा कर ले ? वह हमारे आधीन है। हम क्यो दु ख पावें ? हम तो मौज मे रहेंगे। धन रहे तो बडी अच्छी बात, उपकार करेंगे। नही तो मौज की बात, अपने कुछ करना ही नही पडेगा। ज्यादा धन हो तो ज्यादा जिम्मेवारी, ज्यादा विद्या हो तो ज्यादा जिम्मेवारी, ऊ चा वर्ण, ऊ चा आश्रम हो तो ज्यादा जिम्मेवारी और आश्रम वर्ण नीचा हो तो जिम्मेवारी कम। मौज हो गई। हर्ज क्या हुआ ? सीधी-सादी बात है।

करने में सावधान होने में प्रसन्न

छाछ ढुल गई, बडा गजब हो गया। क्या हो गया ? अपने घर का इसमे क्या गया ? मैं किस घर की थी, क्या थी क्या से क्या हो गई ? अब छाछ ढुल गई तो ढुल गई। यह तो होता है ऐसा। अब इस पर कौन विचार करे ? इस वास्ते वह परमात्मा रहता है यह सब का सब ज्ञान के अतगत है कि नही। सुख होता है, दु ख होता है, दोनो जानने मे आते हैं। जानने मे क्या फर्क पडा ? थोड़ा सा ध्यान दे। समाचार मिला

कि अमुक जगह बेटा मर गया, अमुक जगह पोता पैदा हो गया। बातें दोनो बडी विरुद्ध हैं, बेटे का मरना और पोते का जन्म होना। कितनी विरुद्ध ? एक दु ख की बात और दूसरी आनन्द की बात। पर दोनो का जो ज्ञान हुआ। 'जानना' उसमे क्या फर्क पडा ? दोनो बाते जान ली, ज्ञान हो गया। ज्ञान मे कोई फर्क नही। तो ज्ञान तो है ज्यो का त्यो रहता है। सुख हुआ और दु ख हुआ तो उसमे राजी और नाराज होना हमारा काम नही है। हमे तो भगवान की लीला देखकर प्रसन्न रहना है, मस्त रहना है।

रामायण मे बालकाण्ड आता है, अयोध्या की बात भी आती है। जनकपुरी की बात भी आती है और लकापुरी व वनवास की बात भी आती है। एक ही रामायण मे है। क्या रामायण अलग है ? एक तो जनकपुरी में पधारते हैं, एक लका मे पधारते है। है कि नही फर्क ? पर रामायण तो एक ही है न। ऐसे ही एक ही कथा है, उसमे आता है। कभी जनकपुरी आ गई, कभी लकापुरी आ गई यह आता है। रामजी ने भी करके बता दिया कि 'बेटा ! तुम चिन्ता मत करो।' माता सीता ने बता दिया 'बेटी तुम चिन्ता मत करो।' कैसे महाराज जनक के यहाँ पर पली। प्यारी पुत्री पर उनका कितना स्नेह ? लक्ष्मीनिधि उनके बड़े भाई थे, उनका कितना स्नेह था। माँ-बाप का भी बहुत स्नेह था। सिद्धि महारानी थी भौजाई, उसका बडा ही स्नेह था। परिवार के सभी लोगो का स्नेह था। जनकपुरी नगरी के लोग तो—महाराज ! 'हमारी राजकुवरी है।' हमारे महाराज की प्यारी पुत्री है !' सबका बडा आदर था और वहा से अयोध्या चले गये। शुक (तोता) मैना भी रोते हैं—कहा है जानकी ? लोगों के हृदय मे चोट लगे आसू आ

जाय, पक्षियो की बात सुनकर के ! इतना स्नेह ! वहा अयोध्या गई तो किस ढग से पाला कौशल्याजी ने ? किस रीति से प्यार किया ? **दीप बाति नहीं टारन कहऊँ, सियँ न दीन्ह पगु अवनि कठोरा।** (मानस २/५८)। कडी जगह सीताजी ने पैर नही रखा। जहा सीताजी के घूमने का स्थल था, वहा मखमल के गद्दे बिछाये रहते थे। वहा घूमती थी सीताजी।

आज जगल मे जा रही है। गर्म लू चले जोरदार, कभी ठण्डी चले, कभी वर्षा हो जाय, खाने का ठिकाना नही रहने का ठिकाना नही। ऐसी अवस्था मे सब कहते है तुम यही घर पर रह जाओ। सास ने, ससुर ने, पति ने सब ने कहा—मन्त्रिया ने कहा—बनवास साथ मे मन्त्री गया उसने कहा—'बेटी तुम पीछे चलो'। राम ! महाराज दशरथ ने कहा है कि आप वापस पधारो, आप नही तो कम से-कम इस जनकराज दुलारी को तो पीछे ले ही आवो। इसका सुकोमल शरीर है, कैसे बनवास का कष्ट सहेगी ? इसको ले आओ।' दशरथजी ने कहा कि मैं जनकराज पुत्री को भी देखता रहूँगा तो मेरे प्राण बच जायेंगे। हमारे राम लला का शरीर है यह। उसका ही आधा अग है। मेरे प्राण बच सकते हैं।' कितना महाराज, श्वसुर का उपकार-सेवा हो सकती है। बनवास आपको तो है नही। परन्तु नही, मैं तो महाराज की सेवा मे रहूगी। कष्ट सह लू गी। पर महाराज की सेवा मे रहूँगी। बताओ ! अपने कर्त्तव्य का पालन करना ठीक तरह से दु खी-सुखी क्या होना ? क्या राजी नाराज होना है ? होनी रामजी मे भी हो गई तो हमारे हो जाय, इसमे क्या बडी बात हो गई ? बडे-बडे अवतारो मे, महा-पुरुषो मे, जीव मुक्त सतो मे सुख भी आया और दु ख भी

आया। न सुख ठहरे, न दुःख ठहरे। यह संयोग-वियोग होता रहता है, अब इसमें क्या सुखी दुःखी होवे ?

'समत्व योग उच्यते' गीता इसको योग कहती है। ऐसे संयोग-वियोग में अपने तो एक ही बात है—एक रस रहे। सूर्य उदय होता है तो भी लाल। अस्त होता है तो भी लाल। यह नहीं कि उदय होने में खुशी ज्यादा आ जाय और दूसरा रंग हो जाय, अस्त होने में और दूसरा रंग हो जाय। वह तो एक ही है। ऐसे कितनी ही उन्नति हो जाय, कितना ही आदर हो जाय, चाहे कितना ही निरादर हो जाय। यह तो आता जाता है। 'आगमापायिनोऽनित्या' स्तांतिक्षस्व'। य हि न व्यथयन्त्येते' जिनको व्यथा नहीं पहुँचाते हैं। न सुख आकर हलचल करता है और न दुःख आकर हलचल करता है। हृदय में जो हलचल है—यह व्यथा है व्यथा, यह पीडा है पीडा, यह आफत है आफत। सुख लेकर खुशी होते हैं—यह भी आफत है और महाराज, विपरीत अवस्था लेकर दुःखी होते हैं, यह भी आफत है। इस वास्ते पाप मत करो, अन्याय मत करो, न्याय-पूर्वक सब काम करो। अब सुख आ जाय, दुःख आ जाय।' अन्याय करने पर सुखी हो ही जाओगे यह बिलकुल गलत बात है।

धन के लिए अन्याय मत करो

'पाप करत निसि बासर जाही'। 'नहिं पट कटि नहिं पेट अघाही'। (मानस २/२५०/५)। लज्जा निवारण करने के लिये तो कपडा नहीं, पेट भरने के लिये अन्न नहीं और पाप रात-दिन करते हैं। पाप करना—न करना—यह हाथ की बात

है। पर सामग्री मिलना—न मिलना हाथ की बात नही है। पाप नही करेंगे। अन्याय नही करेंगे। न्याययुक्त धर्म का आचरण करेंगे—इसमे मनुष्य स्वतन्त्र है। ऐसा कभी मत समझो कि हमारे पाप लिखा है, इस वास्ते पाप करते हैं। बडी भारी गलती है। यह अगर यह लिखा है, वैसा ही होता है तो हमे जो शिक्षा दी जाती है कि ऐसा करो और ऐसा मत करो—इसका क्या अर्थ होगा ? क्योकि जिसके प्रारब्ध मे लिखा है पाप करना, वह तो पाप करेगा ही और जिसके प्रारब्ध मे पुण्य लिखा है, वह पुण्य करेगा ही। तो पाप मत करो और पुण्य किया करो, इसका क्या मतलब हुआ ? शास्त्र निरर्थक, शिक्षा निरर्थक, विधि-निषेध निरर्थक। इस वास्ते अपने करने मे सब स्वतन्त्र है। होने मे परतन्त्र हैं। अब क्या होगा, कब होगा, कैसा होगा ? इसका पता नहीं, परन्तु जो करते है, इसमे पाप, अन्याय झूट, कपट, बेईमानी नही करेंगे। ईमानदारी को सुरक्षित रखो। **आपकी रक्षा करेगी इमानदारी।**

नरको मे क्यो जाते हो भाई ? मुफ्त मे ही। झूठ-कपट से थोडा धन बचा लिया तो क्या कर लोगे ? धन तो यही पडा रहेगा, मर जाओगे। फूक निकल जायेगी। पर असत्य बोला हुआ आपके साथ जायेगा। धन एक कौडी जायेगी नही। केश जितना भी पाप पीछे रहेगा नही। तो मनुष्य को अपना भला बुरा सोचना चाहिये, मैं क्या कर रहा हूँ ? यह मनुष्य शरीर नरको मे जाने के लिये मिला है क्या ? इसमे आप स्वतन्त्र है, इसमे आप पराधीन नही है। पर इसका होश नही है, मनुष्य को तो पता नही है। यह बिना पता लगे आदमी गलती करता है। एक सज्जन मिले थे, उनकी बात मैंने सुनी थी। बूढे हो

गये थे, वे रोने लगे। बात क्या हुई ? उन्होंने कहा—मैंने मा की सेवा जैसी की जाय, वैसी नही की। पीछे मेरे को पता लगा कि माँ के समान ससार मे उपकार करने वाला कोई नही है। 'मात्रा सम नास्ति शरीर पोषरा' इस शरीर को पुष्ट करने वाला माँ के समान दूसरा कोई नही है। जन्म दिया है पालन किया है। खाना पीना चलना भी सिखाया है जिसने। ऐसी माँ की सेवा करनी चाहिये। परन्तु पहले पता नही था। पीछे पता लगा, मा का शरीर शात हो गया। मैंने माँ की सेवा नही की। तो जब पता लगेगा न, तब आपके पश्चाताप होगा। तो पहले से बताते है कि माता-पिता, बडे, पूज्य, आचार्य हैं, उनकी सेवा करो, उनको सुख पहुँचाओ। बूढे हैं, वडे हैं, चले जायेंगे फिर क्या करोगे ? सास हैं, श्वसुर हैं, ये आपके घरो मे तीर्थ हैं साक्षात्—इन तीर्थों का सेवन करो।

सती सुकला की कथा

एक कृकल नाम के वैश्य थे, पद्मपुराण मे कथा आती है। उसके सुन्दर स्त्री थी, कृकल वैश्य भी धर्मात्मा पुरुष था। कृकल की पत्नी सुकला भी बडी सुन्दर, सदाचारिणी, पतिव्रता स्त्रियों मे शिरोमणि थी। गाव के लोग तीर्थ यात्रा मे जा रहे थे तो यह मन मे विचार करने लगा कि हम भी तीर्थयात्रा मे जायेंगे। अपनी सती साध्वी स्त्री सुकला थी, उसके सामने विचार किया तो उसने कहा—'आप तीर्थों मे जावो तो मैं भी साथ मे चलूँगी।' वह सुन्दर तो थी ही, शरीर भी बडा सुकुमार था और तीर्थ यात्रा आजकल की तरह नही थी, जो सैर सपाटा हो गया है। पैदल जाना पडता, वर्षों तक घूमना पडता था। ज्यादा कपडा नही रखना, ज्यादा सामान नही रखना। तीर्थों

के कष्टो को सहना है। भूख, प्यास, गर्मी, सर्दी सहना है। लोगो मे कहावत है—'कैसे थक गया, तीर्थों का भक्त होवे ज्यो।' तीर्थों मे जाता है तो थक जाता है। ऐसी दशा थी तो कृकल ने देखा, यह निभ नही सकेगी। अभी तो कहती है साथ चलूँगी, पर मार्ग मे बडा कष्ट है। यह सह सकेगी नही। इसका शरीर बहुत कोमल है, बहुत अमीर है। इस वास्ते उसे सोती हुई छोडकर रात्रि मे अकेले ही चल दिये। सुबह इधर-उधर पता लगा कि वे तो तीर्थयात्रा मे गये। बडी दु खी हुई, क्या करे, नही ले गये। वही रहने लगी।

सुकला बहुत ही सु दर थी। देवराज इन्द्र का उस पर मन चला जिनके अनेक अप्सराएँ हैं। उसने रति को अपनी दूती बनाकर भेजा जो कामदेव की अत्यन्त सुन्दर स्त्री है। वह उसके पास आकर बाते करने लगी। मित्रता कर ली, मित्रता मे ही इन्द्र की कुवामना की बात छेडी तो वह तेज हो गई। एक बार बगीचे मे घूमते हुए बता दिया कि इन्द्र सामने आया है और तेरे को चाहता है, तो जोर से बोली—'भस्म कर दू गी! एक जबान कहू जिसमे खतम हो जाओगे।' डर गया वह भी। वे सब चले गये। वह अपना ठीक धर्म का पालन करती हुई रही।

विधि आती है कि तीर्थों मे श्राद्ध जरूर करना चाहिए, तिथि आवे, चाहे न आवे। अच्छा ब्राह्मण मिल जाय और अच्छा तीर्थ मिल जाय, वहाँ पिण्ड दान करो, और ठण्डी नदी 'नदिपु वहुतोयासु'। नदी जिसमे बहुत जल भरा हुआ हो और 'शीतलापु विशेषत' उसमे पूर्वजो को पानी जरूर देना चाहिए। वहा जल दान करना चाहिए। तो कृकल तीर्थों मे वडेरो को

खूब अच्छी तरह से पिण्ड पानी दिया, श्राद्ध किया। दान पुण्य करके ब्राह्मणो को सन्तुष्ट किया। वह जब लौटकर आने लगा तो सामने बहुत बडे शरीर वाला एक पुरुष मिला। वह एक-एक हाथ मे तीन तीन, चार-चार आदमियो को पकडे हुए था। वे ची-ची कर रहे थे। उससे कृकल ने पूछा—'तुम कौन हो?' मोटे पुरुष ने कहा—'मैं साक्षात् धर्म हू।' कृकल ने पूछा—'ये तुम्हारे हाथ मे कौन हैं?' उसने कहा—ये तेरे मा-बाप और दादा-दादी हैं। बिना पत्नी के तुमने पिण्ड, पानी, श्राद्ध किया और ले लिया इन्होने। इस वास्ते ये अपराधी हैं। इस वास्ते इनको दण्ड दूगा।' कृकल बडा घबराया। घर पर आने पर उसकी स्त्री सुकला ने बड़ा उत्सव मनाया। आज हमारे तो सूर्योदय हुआ है। जो रात थी, वह बीत गई खुशी मनाई।

कृकल ने कहा—'अपने श्राद्ध तर्पण करो, पहले बडेरो को राजी करो, बडेरे किस तरह से सुखी हो जाय? तो पत्नी के सहित विधि-विधान से ब्राह्मणो को पूछकर अच्छी तरह से श्राद्ध तर्पण किया। श्राद्ध-तर्पण मे देवता प्रकट हो गये। उन्होने कहा— तू पहले अकेला तीर्थ यात्रा मे गया। वहा तूने उनको पिण्ड दिया। इस वास्ते दोष लगा। अब तेरे पितरो को शाति मिलेगी, क्योकि तेरा स्त्री पतिव्रता है। वह बेचारी पीछे रोती रह गई। उसे साथ नही ले गया। तूने बडा अपराध किया।' वहा वर्णन आया है—'पत्नी तीर्थ'—जो पतिव्रता स्त्री होती है, वह तीर्थ होती है। माता-पिता तीर्थ, भाई तीर्थ, भौजाई तीर्थ और पतिव्रता स्त्री भी तीर्थ होती है। विदेशो मे जैसे ठेकेदारी होती है, कॉंट्रैक्ट होते हैं, ऐसे हमारे यहाँ विवाह नही हैं। यहाँ विवाह पुण्यकारी काम है। बडा निर्मल काम है।

स्त्री के लिए कहा गया है कि पति को ईश्वर समझे। पति के लिए ऐसा नही कहा है कि पत्नी का तिरस्कार करो, अपमान करो। बडा भारी पाप लगता है। जो अपनी स्त्री का अपमान करता है, तिरस्कार करता है, त्याग करता है, दु ख देता है, हाथ उठाता है तो वह बडा खराब काम करता है। बडा पाप करता है। यह आपका आधा शरीर है, अर्धाङ्गिनी है। उससे सलाह पूछो, दोनो की सलाह से काम करो। ऐसा विवाह के समय वचन देते हैं एक-एक को। इस तरह से करो। पर तूने ऐसा नही किया। पत्नी की कृपा से ही तुझे माफ हुआ है, नही तो माफ नही होता। ऐसे उसने श्राद्ध-तर्पण आदि किया, देवताओ को बडेरो को राजी किया।

ससार मे रहने का तरीका

पत्नी भी तीर्थ है सज्जनो! तीथ है तीर्थ। घर मे माता-पिता हैं, बडे-बूढे हैं, वे तीर्थ है। उनका निरादर करते हो, तिरस्कार करते हो। उनका बडा भारी अपमान करते हो। तो ऐसा तिरस्कार करने वाले का भगवान् भी विश्वास नही करते। जो मा बाप का तिरस्कार करता है जो स्त्री पति का तिरस्कार करती है जो पुरुष पत्नी का तिरस्कार करता है, जो कुटुम्ब का तिरस्कार करता है, अपमान करता है। दु ख देते है। तो भगवान् उसकी भक्ति का विश्वास नही करते। सज्जनो! भगवान् की भक्ति भी करो और यहाँ जो बडे है, पूजनीय हैं, आदरणीय हैं उनका आदर-सत्कार करो। अच्छा वर्ताव करो। फिर कब करोगे? बताओ। यह मनुष्य शरीर हाथ से निकल जायेगा तब क्या करोगे? प्राणो के रहते-रहते अच्छा आचरण करके सबकी सेवा करो। दुनिया मे भलाई

होगी महाराज ! परलोक मे कल्याण होगा। भगवान् राजी हो जायेंगे। संत, शास्त्र, महात्मा खुश हो जायेंगे, प्रसन्न हो जायेंगे। जैसे, बालक की उन्नति देखकर माँ-बाप खुश होते हैं, ऐसे ऋषि, मुनि, महापुरुष भी आपका सदाचार, सद्गुण देखकर खुशी हो जायेंगे। प्रसन्न होंगे, राजी हो जायंगे। ये बडे अच्छे लडका, लडकी हैं, जो धर्म का पालन करते हैं। ऋषि-मुनियो की, भगवान् की बडी भारी सेवा हो जायेगी।

"आज्ञा सम न सुसाहिब सेवा" उनकी आज्ञा पालन करना, बडी भारी सेवा है। इस वास्ते *"स्वे स्वे कर्मण्यभिरत संसिद्धि लभते नर।"* (गीता १८/४५) अपने-अपने कर्त्तव्य करते हुए मनुष्य संसिद्धि को प्राप्त हो जाता है। इस वास्ते बडे उत्साह के साथ, बडी लगन के साथ सेवा करो। और पहले कोई गलती हो गई है उसके लिए उनके चरणो मे गिरकर माफी माग लो। बडे पुरुष माफी देने को तैयार हैं। मा-बाप माफी दे देते है। पैरो पड जाओ तो मा माफ कर देती है। मा को तो माफ करने की मन मे ही आती है। वह अपराध मानती ही नहीं। गोदी मे टट्टी फिर दे, पेशाब कर दे, उसको भी साफ कर देती है।

एक पण्डितजी महाराज कहते थे—विवाह कराने के लिये गये। तो वहा बहनें बडा सुन्दर-सुन्दर शृंगार करके आई। तो एक बहन की गोदी मे छोटा बालक था। वह बढिया रेशमी जरीदार साडी पहने हुए थी। तो बच्चा टट्टी फिर गया तो पास मे बैठी स्त्री बोली—'छोरा टट्टी फिर गया है।' तो वह छोरे की मा बोल पडी—'चुप रह जा, हल्ला करेगी तो छोरे की टट्टी रुक जायेगी, बीमार हो जायेगा।' पण्डितजी

मदनमोहनजी की कही हुई बात से, जो काशी मे अच्छे विद्वान थे। बडे त्यागी थे, उन्होने यह बात सुनायी। तो देखा कि मा कितना सहती है। दूसरी स्त्री चेता रही है कि ऐसी बढिया साडी खराब हो रही है। तो कहती है, हल्ला मत कर छोरे की टट्टी न रुक जाय कही। अपने कपडे खराब हो भले ही। इसके समान कौन है ससार मे सेवा करने वाला ?

ये भाई-बहन बडे-बडे चतुर बने हैं। हम भी बातें बनाते है तो हम सब की दशा क्या थी ? वही दशा थी। इस मा ने पालन किया। मा की कृपा से आप और हम बैठे बैठे राजी हो रहे है। दशा क्या थी ? टट्टी पेशाब कर दिया और उसी मे लकीरें निकालते थे बैठे-बैठे। मा कहती क्या कर रहा है ? तो समझते ही नही थे। पता ही नही था। टट्टी-पेशाब का ज्ञान ही नही था कि यह अशुद्ध है, अपवित्र है कि क्या है ? ऐसा ज्ञान था क्या ? वही मैले से भरा हाथ यू सामने कर दिया। मा कहती—'अरे क्या करता है ?' मा कहती तो समझते कि क्या हो गया ? होश नही था। यही दशा थी कि नही। वह खिलाती तो मु ह से गिरा देते थे। चाहे जहा लोट लेते, चाहे जहाँ टट्टी कर देते, चाहे जहाँ पेशाब कर देते थे। ऊचे-से-ऊचा ज्ञान भी मा ने दिया और नीचे से नीचा काम टट्टी पेशाब भी मा ने उठाया। धोबी का काम किया, दर्जी का काम किया, मेहतर का काम किया, गुरु का काम किया। कौन-सा ऐसा बडे-से बडा काम, छोटे-से छोटा काम, जो मा ने न किया हो। उस मा का तिरस्कार करते हो, अपमान करते हो। बडे भारी पाप की बात है। इस वास्ते भाई ! मा की सेवा करो, घर मे ही तीर्थ है।

जिसको ससार में रहना आता है, वह मुक्ति कर लेगा। ससार मे रहना नही आता है तो बडे त्यागी, महात्माजी बन जाओ तो भी कल्याण थोडे ही हो जायेगा। क्योंकि ससार मे ही रहना नही आता तो मुक्ति कैसे हो जायेगी ? जो तुम्हारे सामने परिस्थिति भेजो है, उसका भी उपयोग तुम ठीक नहीं कर सकते, तो इससे कल्याण कैसे हो जायेगा ? जो भगवान् ने अवसर दिया है, मौका दिया है, उसका अच्छी तरह से उपयोग करो। ये बाते सत्सग के द्वारा सीखना है और कोरी याद ही नही करना है, काम मे लाना है। आचरण अपना शुद्ध, निमल बनाना है। व्यवहार अपना सबके साथ अच्छे-से-अच्छा ऊचे-से ऊचा करना है फिर देखो। खुद को शाति मिलेगी, आनद मिलेगा, प्रसन्नता होगी। पहले मा-बाप का खुद तो आदर नही करता, फिर चाहे कि छोरा छोरी हमारा आदर करे। तो क्यो भाई ? तुमने रीति क्या निकाली है ? अब पीछे दुःख पाते हैं। 'छोरे कहना नही मानते', तो 'तैने कैसा कहना माना है ?' 'म्हारे बीनणी कह्यो को माने नी।' तो थे कितोक मान्यो कह्यो। 'आप तो करत कुसग चाहत कुसल'। आप अच्छा करो, वह करे, न करे। कोई हर्ज नही। आप अच्छे-से-अच्छा वर्ताव करो। वो न करें तो समझावो प्यार से। बुरा माना मत। वर्ताव अपना अच्छे-से-अच्छा करो। लडका-लडकी नही मानें बहुएँ नही माने तो कोई हर्ज नही। बडी अच्छी बात। लडका लडकी बहुएँ कहना मानें, उसमे तो है खतरा। मोह हो जायेगा, फस जाओगे। वे कहना नही मानें, उसमे आपके बडा लाभ है। उसके बडा नुकसान है।

तेरे भावे जो करे भलो बुरो ससार।
नारायण तू बैठ के अपनो भुवन बुहार॥
नारायण, नारायण, नारायण,

॥ श्री हरि ॥

प्रवचन–४

मनुष्य को ऐसा स्वभाव बनाना चाहिये, जिससे अपना कल्याण हो। जीव मात्र की इच्छा होती है कि हमारी बात रहे, लोग हमारी बात मानें– ऐसी एक आदत रहती है, उसी से ही जन्म-मरण होता है। हमारे कुछ स्वभाव ऐसे हैं कि हम सुनावे, तो दूसरा कहे जैसा सुनावे और जो कहे, वो काम करें। अपनी बात नहीं रखना ऐसा स्वभाव कुछ बनाया है। इस वास्ते कोई पूछ ले तो ठीक लगता है। हमारे सहारा लगता है कि ठीक है भाई! यो ही कहेगे।

असली स्वतन्त्रता

यह जो गीता मे कहा है न, कामना के त्याग की बात, तो कामना क्या है? इस विषय मे मैंने पढा भी, सोचा भी और प्रश्नोत्तर भी किये हैं। इस बात को समझने के लिए प्रयत्न किया है। तो एक जगह हमे बहुत विलक्षण बात मिली। कामना नाम किसका है? 'मेरे मन की बात हो जाय' बस! यही कामना है। मेरे कहने के अनुसार चले, मेरे मन की बात हो जाय। भगवान् कर दे तो वे ठीक, सन्त महात्मा कर दे तो वे ठीक, लोग कर दे तो वे ठीक। हमारे मन की बात करें— यही कामना है। इसका त्याग कर दें तो आदमी को शान्ति मिलती है, मुक्ति मिलती है, कल्याण होता है, बडा लाभ

है। मनुष्य समझता है कि मेरा हुकुम चले तो मैं स्वतन्त्र हुआ और मैं दूसरो की बात करता हू, सुनता हू तो परतन्त्र हुआ यह बिल्कुल गलत बात है। स्वतन्त्रता परतन्त्रता क्या है ?

परतन्त्रता मे स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता मे परतन्त्रता, परतन्त्रता मे परतन्त्रता, स्वतन्त्रता में स्वतन्त्रता—ऐसे चार भेद कर विवेचन करने का काम पडा है। मनुष्य मानता है कि मैं स्वाधीन हूँ, चाहे सो करू, चाहे सो करवालू, तो मैं स्वतन्त्र हो गया। यह स्वतन्त्रता नही है, महान् परतन्त्रता है। मामूली परतन्त्रता नही है, परन्तु यह बात अकल मे नही आती। उलटी बात समझ मे आती है। जैसे—कल्पना करो, हमारे मन मे घडी लेने की हो और घडी पर मन चले कि घडी अपने को मिल जाय, परन्तु रुपये पास मे नही है। इस वास्ते अनुभव होता है कि रुपये होते हैं तो हम स्वतन्त्र हैं और रुपये नही होते हैं तो हम परतन्त्र हैं। किसी चीज को लेने की मन मे होती है तो नही ले सकते, तो हम पराधीन हुए। रुपये हो तो घडी ले लो चट। तो स्वाधीन हो गये। इतने तक ही अकल मे बात आती है, परन्तु यह समझ मे नहीं आती कि रुपये 'स्व' है क्या ? रुपये स्वय हो क्या आप ? 'पर' ही तो है रुपये भी। स्वय आप रुपये हो क्या ?

रुपयो के जो आधीन हुआ, वह स्वाधीन कैसे हुआ ? यह तो रुपयो का गुलाम हुआ। किसी के कहने से करता है तो उसका गुलाम हुआ। आपके कमाये हुए रुपयो के आप वश मे हो गये, आधीन हो गये—यह स्वाधीनता कैसी ? यह महान् पराधीनता है, जड की पराधीनता है। रुपये ज्यादा हो जाय तो खर्च

करना मुश्किल हो जाता है। थोडे रुपये तो खर्च कर सकता है आदमी। ज्यादा रुपये खर्च करना बडा मुश्किल होगा। वह समझता है कि स्वाधीन हूँ पर महान् पराधीन हो जाता है। परन्तु भाई यह बात समझ मे नही आती है, क्या करे ? रुपयो के आधीन काम हुआ तो स्वतन्त्रता कैसी ?

स्वतन्त्रता किसका नाम है ? हमारे मन मे कोई बात नही, किसी बात की इच्छा नही। किसी बात की चाहना नही।

यह जो इच्छा होती है मन मे कि यह हो जाय, यह हो जाय—इसका नाम है कामना। गीता ने इसके त्याग पर बडा जोर दिया है। *'इद मे स्यादिदमे स्यादितीच्छा कामशब्दिता'* यही कामना है। ऐसा हो जाय, ऐसा हो जाय। 'पूरे हैं मर्द वे हो जो हर हाल मे खुश हैं। जो हो जाय, उसमे ही खुश हैं। बहुत आनन्द है, वे स्वतन्त्र हैं। कैसी परिस्थिति आ जाय, कैसी अवस्था आ जाय, कैसी घटना घट जाय, जो कुछ हो जाय, उसमे मस्त रहे अपने। तब वे ससार से ऊँचे उठ गये।

इहैव तैर्जित सर्गो येषां साम्ये स्थित मनः।

निर्दोष हि सम ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिता ।। (५/१९)

परमात्म स्वरूप मे कौन स्थित होते हैं ? जो यहाँ जीवित अवस्था मे ही ससार मात्र पर विजयी हो जाते हैं। उस पर कोई ससार का प्राणी विजयी नही हो सकता। सब पर विजयी कौन है ? **'येषां साम्ये स्थित मन'** जिनका मन साम्यावस्था मे स्थित हो गया है। साम्यावस्था क्या ? जो हो जाय उसी मे ही मस्त रहे। जैसे हो जाय ठीक है। करने मे भगवान् के आधीन रहे। करने मे शास्त्र के, भगवान् के आधीन रहना। इसमे

परतन्त्रता दीखती है, पर इस परतन्त्रता में महान् स्वतन्त्रता भरी है। जो बडा होकर माँ बाप का और गुरुजनों का कहना नही करता, मर्यादा का पालन नही करता, वह समझता है कि मैं स्वतन्त्र हूँ। वह वास्तव मे अपनी इन्द्रियों का, अपने मन का गुलाम है। आज समझते हैं कि हम तो नई रोशनी के आदमी हैं। स्वतन्त्र विचारो के हैं। किसी का कहना नही करेंगे, मर्जी आवे सोई करेंगे। हम तो कहते हैं कि तुम्हारी नई रोशनी हैता मनुष्यो मे पहले गधापन, कुत्तापन नही था यह बिल्कुल नई रोशनी होगी, बन्दर भी करता है अपनी मर्जी से और डरता है तो केवल डण्डे से। कुत्ता भी मेहतर के घर में जैसे चला जाय, वैसे ही बिना पैर धोये ब्राह्मण के घर मे चला जायेगा, क्योंकि यह स्वतन्त्र है। यह स्वतन्त्रता कोई स्वतन्त्रता होती है? जहाँ चाहे टट्टी फिर जाय, जहाँ चाहे पेशाब फिर जाय, क्योंकि स्वतन्त्र है हम तो। ऐसी स्वतन्त्रता मनुष्यो मे नही थी। माता, पिता, धर्म आदि की बात मानते थे। अब कहते हैं कि हम नई रोशनी के हैं। बिल्कुल नई रोशनी। तुम नई रोशनी कहते हो, पर यह बिल्कुल अँधेरा है। मनुष्य मे ही अँधेरा हो गया। अँधेरा पशुओ में, पक्षियो मे तो था। अब मनुष्यो मे भी आ गया। रोशनी कसी हुई है? परन्तु इसको ही रोशनी कहते हैं।

अपनी स्वतन्त्रता कब होगी? जब अपने साथियो को अपने साथ रहने वालो को स्वतन्त्रता दी जाय। उनकी न्याययुक्त बात हो तो उसका आदर किया जाय। उनकी न्याययुक्त बात हो वह हमें माननी चाहिए। यह बात ख्याल रखने की है। कुटुम्बियों के साथ आप बर्ताव करें तो कुटुम्ब मे रहने वाले भाई-भोजाई, भतीजे, स्त्री-पुत्र, माता-पिता, काका-बाबा आदि

जितने हैं उनकी बात अगर न्याययुक्त है तो उस बात को प्रधानता देनी चाहिये। अपनी मनमानी को प्रधानता नहीं देनी चाहिये। इससे आदमी स्वतन्त्र होता है। बड़ा श्रेष्ठ आदमी हो जायगा। समाज में भी ऊँचा स्थान पा जायेगा। भगवान् के यहाँ भी ऊँचा स्थान पा जायेगा। सन्तों के, महात्माओं के, शास्त्रों के धर्मों के अनुसार वह श्रेष्ठ पुरुष बन जायगा। जो अपनी मनमानी करता है, अपनी हेकड़ी रखता है और अच्छा-मन्दा सब तरह का काम कर बैठता है तो उसके घरवाले भी उसमे राजी नहीं होते। बाहर वाले व समाज वाले भी राजी नहीं होते। उसको परतन्त्रता छूटती नहीं। पशु-पक्षी आदि योनि में, नरकों में जाओगे तो वहाँ तो परतन्त्रता है ही, परन्तु मनुष्य योनि में यह स्वभाव डाल दिया। अब यह जहाँ जायेगा, वहाँ दुःख पायेगा, कष्ट उठायेगा।

स्वभाव सुधारने का अवसर

यहाँ मनुष्य शरीर में आये हैं तो हमारे को खास बात क्या करनी है? आस्तिक हो, चाहे नास्तिक हो। अपने स्वभाव को शुद्ध और निर्मल बनाना है। ऐसा निर्मल बने कि हमारे स्वभाव से किसी को तकलीफ न हो। अपनी नीयत तकलीफ देने की न हो, किसी को कष्ट देने की न हो। हमारी क्रिया भी न हो, हमारा भाव भी न हो, फिर भी किसी को दुःख हो जाता है तो उसका भी ख्याल करना बड़ा अच्छा कि उसे दुःख न हो, परन्तु यह हाथ की बात नहीं।

आपके स्वभाव में दूसरे को दुःख देने की बात नहीं है। पर आपको देखकर जल उठे। उसका क्या किया जाय? रात्रि में

बिजली चमकती है तो गधी दुलती मारती है। क्या आफत आ गई? अब वह बिजली क्या करे बेचारी। उसने गधी को कोई दु:ख दिया है क्या? पर वह गधी दु:ख यों ही पावे। अब उसका क्या किया जाय? इस तरह से दूसरे को देखकर दु:ख होता है, वह अपने स्वभाव के कारण दु:खी होता है। हम अपना जीवन संयत रखें और ठीक तरह से चलें। देख-देखकर ही किसी को जलन पैदा हो जाय तो अब उसमे भगवान् से प्रार्थना करें—'हे नाथ! हमारे द्वारा किसी को दु:ख न हो। हमारे को देखकर भी दु:ख न हो'। ऐसा अपना स्वभाव रखें कि हरेक को सुख हो जाय।

'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मां कश्चिद् दु:खभाग्भवेत्॥

सबके सब सुखी हो जायें, कोई दु:खी न रहे, सबके सब निरोग हो जांय, किसी के रोग आफत न रहे, सबके मंगल ही मंगल हो, शुभ ही शुभ काम हो। कोई भी, कभी, किसी अवस्था मे दु:ख न पावे। ऐसा अपना-स्वभाव बना ले, ऐसा ध्येय बना ले, लक्ष्य बना ले। तब मनुष्य जन्म सफल होगा। अपनी मनमानी त्याग करने में वही सफल होता है जो दूसरे के मन की बात करता है। औरो की न्याययुक्त इच्छा पूरी करने से अपनी इच्छा के त्यागने का बल आ जाता है। अपने मन की बात त्यागने की योग्यता आ जाती है। अपने मनमानी करते रहो तो अपने मनमानी करने का ही बल बढ़ेगा। वह स्वभाव तो अगाडी नरकों मे डालेगा भाई।

जितने संसार में दु:खी हैं, जितने कैद मे पड़े हैं, जितने नरकों मे जीव है, जितने रो रहे हैं, चिल्ला रहे है, जहाँ कहीं दु:ख पा

रहे हैं तो कुछ-न-कुछ उनके भीतर की चाहना है, इच्छा है कि यू नही होना चाहिए। ऐसी कामना वाले ही दु ख पाते हैं। भीतर से जिनके ऐसी कामना नही है, उनको दु ख हो ही नही सकता। बुखार आ जाय, तकलीफ हो जाय, पर उनको दु ख नही होता। दु ख है मन का। अपने मनमानी नही होने से दु ख होता है। बुखार मे क्या होता है? बुखार आदि प्रतिकूल परिस्थिति से दर्द होता है, दु ख नही।

दर्द और दु ख अलग २ चीज है। 'खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी, जरहि सदा पर सम्पत्ति देखी'। (मानस ७/३८/३)। जिसका हृदय दुष्ट (दोषी) होता है उसके ताप विशेष होता है। उसके जलन ज्यादा होती है, क्योकि दूसरे की सम्पत्ति देखकर जल उठते हैं। उसके इतना धन क्यो हो गया? उसके बेटा-पोता इतना क्यो हो गया? उसका कहना क्यो मानते हैं लोग? परिवार वाले भी उसके अनुकूल क्यो चलते हैं? ऐसे करके जलने लग जाय। उसका दु ख कैसे मिटे? बताओ। यह प्रारब्ध का दु ख नही है। यह दुष्टता का दु ख है। स्वभाव से दु ख होता हैं, परिस्थिति से दु ख होता हैं, अपने सुख चाहते हैं, और सुख न मिलने से दु ख होता है। परिस्थिति अनुकूल न होने से जो दु ख होता है, वह तो मूर्खता का है, परन्तु दूसरे की उन्नति देखकर दु ख होता है, यह दुष्टता के कारण से होता है।

सुख पहुंचाने का भाव

हृदय मे आनन्द होना चाहिये, हृदय मे मस्ती होनी चाहिये कि अच्छी बात है इतने घर तो सुखी हुए। इतनी हमारी

माताएँ-बहनें सुखी हैं, बड़ा आराम है। कितने आनन्द की बात है। दूसरे भी सब सुखी हो जायें—ऐसी भावना रखो। दूसरे तो सुखी होंगे कि नहीं होंगे, पता नहीं, परन्तु आप सुखी हो जायेंगे, इसमें सन्देह नहीं है। आपका ऐसा भाव होने से आपका कल्याण हो जायेगा। जो सबका हित चाहता है, उसका हित स्वतः होता है, स्वाभाविक हित होता है। मनुष्यों के हृदय में उसके लिये स्थान हो जाता है। जो सबका हित चाहता है, कल्याण चाहता है, उद्धार चाहता है, सबकी वास्तविक उन्नति चाहता है। जो दूसरे आदमी हैं, वे बिना कहे-सुने उसका हित करते हैं। उनके हृदय में उसके प्रति सद्भाव पैदा हो जाते हैं, स्वाभाविक ही, और जो दुष्ट है, दूसरों को दुःख देना चाहता है, तो उसके प्रति दूसरों के भी दुर्भाव पैदा हो जाते हैं। यह मनुष्य को दिखता नहीं, इस वास्ते मानता नहीं, परन्तु आप जैसे बीज बोओगे, वैसी खेती पैदा होगी। आप दूसरों के दुःख के लिए भावना रखते हैं तो दूसरों को तो दुःख होगा, उनके प्रारब्ध का दुःख आ जाय तब, आपकी चाहना से दुःख नहीं होगा, परन्तु आपके लिए तो दुःख का बीज बोया ही गया, इसमें संदेह नहीं है। अपने को जो दुःख दे, उसके लिए भी सुख की इच्छा करनी चाहिये।

'उमा संत कइ इहइ बड़ाई, मंद करत जो करइ भलाई।।
(मानस ५/४०/७)

विभीषण ने रावण को कहा—'हनुमानजी दूत बन कर आये हैं इनको दुःख नहीं देना चाहिये। इनको आराम देना चाहिये। नीति की बात करना चाहिये।' रावण मारने लगा तो विभीषण ने कहा तो यह बात उस समय तो मान ली।

फिर जब काम पड़ा, फौज आ गई है, जाना है तो उस समय विभीषण से कहता है—'मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीति।' रहता तो है मेरे शहर मे और प्रीति करता है तपस्वी के साथ। तो उसके साथ जाओ। 'सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती'। (मानस ५/४०/५) उसे नीति सिखाना। एक बार हनुमानजी के लिए तेरी नीति मानी तो घर जल गया, सारा गाँव जल गया। तेरी नीति उनको ही दे, जिससे उनका ही नाश हो जाय। हम नही मानेगें तेरी बात। विभीषण को जोर से लात मारी। 'अनुज गहे पद बारहिं बारा। (मानस ५/४०/६)। विभीषण रावण के चरण पकडते हैं और कहते है—'आप बडे भाई पिता के समान हैं। वेशक आपने मुझे मारा—"तुम्ह पितु सरिस भलेहिं मोहि मारा। रामु भजें हित नाथ तुम्हारा।।" (मानस ५/४०/८)। तुम्हारा हित तो भगवान् के भजन से है। ऐसा कहता ही रहा। रावण ने धमकी दी। लात का प्रहार किया। बात अच्छी कहने पर भी लात का प्रहार मिला तो वास्तव में क्या नतीजा निकला? विभीषण का कहना तो ठीक निकला ही। रावण ने काम तो अहित होने लायक ही किया, परन्तु भगवान् के हाथ से मरने से उसका उद्धार हो गया। विभीषण ने अहित नही किया। उसके हृदय मे यह भाव है कि आपका हित भगवान् के भजन करने से है। सीता को आप दे दो तो बडा अच्छा है, राड नही होगी, लड़ाई नही होगी, आपका काम ठीक जैठ जायगा, परन्तु जिनके विपरीत बुद्धि होती है ना, उसके विपरीत बात जंचती है। 'विनाश-काले विपरीत-बुद्धि' ठीक बात को भी सही नही समझता, परन्तु संतो का हृदय क्या होता है? यह बता दिया। 'मंद करत जो करई भलाई'। मन्दा करने पर भी वे भलाई ही करते

हैं अपनी तरफ से। वे सबका भला चाहते हैं। उनका भला स्वाभाविक होता है। वायुमण्डल बनता है। प्रकृति में शक्ति है, जिसका हृदय शुद्ध होगा और सबका भला चाहेगा तो प्रकृति से उनका भला होगा। यह प्रकृति मे ताकत है, विलक्षणता है, स्वाभाविक ही हित होगा।

अपने द्वारा सबका हित हो, किसी तरह सबका कल्याण हो, दूसरो को लाभ हो जाय, दूसरो को सुख हो जाय, औरो को आराम मिले—ऐसा भाव रहेगा तो सबके सब लोग सुखी हो जायेंगे, ये हाथ की बात नही, क्योकि परिस्थिति उनके कर्मों के अनुसार आवेगी; परन्तु आपने जो भावना की है, यह परिस्थिति नही है। यह आपका नया उद्योग है, नया काम है, नया भाव है। ऐसा आपका उद्देश्य है तो आपका कल्याण होगा। आपके लिए इसका भला-ही-भला नतीजा होगा, क्योकि सम्पूर्ण के हित मे आप रत हैं न। 'ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रता' (१२/४) सबका हित कर देना, यह बात हाथ की नहीं है, परन्तु बुरा किसी का भी नही चाहना चाहिये। सज्जन लोग कहते हैं भाई! वैरी का भी अहित न हो। भगवान् राम लका में पहुँच गये, फिर विचार हुआ, सोचा तो कहा 'पहले अगद को भेजना चाहिये'। उनको खबर कर देनी चाहिये पीछे देखो क्या होता है'? अगद को भेजा उस समय रामजी ने कहा—'काजु हमार तासु हित होई। काम तो हमारा बने और हित रावण का हो। रिपु सन करेहु बतकही सोई (मानस, ६/१६/८)। जरा सोचो, कितनी विलक्षण बात है।

शुद्ध स्वभाव की आवश्यकता

हमारा काम बन जाय और उसका हित हो जाय। तो

'काम' बडा है कि 'हित' बडा है। कोई भाई हो, उसके प्लेग की बीमारी लग जाय तो उस बीमारी से बचते हुए उनकी सेवा करें। उसके साथ वैर नही। वह तो बीमार है बेचारा, परन्तु बीमारी के साथ स्नेह नही। बीमारी को तो मिटाना चाहते है। ऐसे मनुष्य मात्र परमात्मा के अश हैं। मनुष्यो मे जो खराब स्वभाव आ जाते है, ये आगतुक है। ऊपर से आये हुए है, इस वास्ते इन दोषो को मिटाना है। इन बीमारियो को दूर करना है। न कि बीमार को ही मार देना है। दोषी आदमी के दोषो को दूर करना है अपने तो। कैसे दोष दूर हो ? इसका चिन्तन करो, इसका विचार करो, युक्ति सोचो, किस तरह से इसका दोष दूर हो ? उसके दोष को देखना दोषदृष्टि नही है। वह तो निर्दोष देखना चाहते हैं कि उनमे दोष यह न रहे। अपना पुत्र है, अपना शिष्य है, अपना नौकर है, अपना प्यारा मित्र है, उसमे कोई अवगुण आ जाय तो अवगुण दूर हो। जैसे रोगी का रोग दूर हो—ऐसा विचार होता है। ऐसा नही कि रोगी मर जाय। ऐसे ही किस तरह से उनका अवगुण दूर हो, तो यह अवगुण दूर कैसे होता है ? आपके हृदय मे सद्भावना हो और आदर सहित उनके साथ बर्ताव किया जाय तो अवगुण दूर होता है। उनका निरादर करोगे तो उनके मन मे भी निरादर पैदा हो जायेगा। उसका असर अच्छा नहीं पडेगा। प्यार से, स्नेह से उनका हित करते हुए सेवा करते हुए ऐसी शिक्षा दो, जिससे उनका दोष दूर हो जाय। दुष्टता ज्यादा होती है, तब वे मानते नहीं। सेवा करो, नम्रता करो तो भी वे समझते हैं कि गरज करता है। यह कायर आदमी है, ऐसा है-है-यह तो। ऐसे दोष दृष्टि करेंगे। पहले से दो दृष्टि करते हैं,

फिर और दोष दृष्टि कर लेगें और क्या होगा ? परन्तु अपने को अपना स्वभाव शुद्ध, निर्मल बनाना है ।

दो सज्जन थे । एक ने कहा—'आप मेरी परीक्षा कर लो, मेरे को क्रोध नही आता है । आप कुछ भी कर लो, मेरे को क्रोध नही आयेगा । दूसरे सज्जन ने कहा 'बडी अच्छी बात ! काम, क्रोध, लोभ तुम्हारे पर आक्रमण न करें, क्रोध नही आवे तो बडी अच्छी बात है, पर तुम्हारी परीक्षा के लिये मैं मेरा स्वभाव क्यो बिगाडू बताओ ? तेरे को क्रोध नही आवे तो बडी अच्छी बात, बडी आनन्द की बात है, खुशी की बात है । अपना स्वभाव क्यो बिगाडे भाई ? स्वभाव चलेगा साथ में । ये चीजें, वस्तुएँ, घटनाएँ साथ नही रहेंगी । घटना घटती है और मिट जाती है, परन्तु जैसा स्वभाव बना लिया वह तो साथ में चलेगा । चोरी करने का जो स्वभाव बना है । यह जहाँ जाओगे, वही तग करेगा । दूसरो को दु ख देने का स्वभाव है तो जहाँ जाओगे, वहाँ भी तग करेगा ।

जिसका स्वभाव शुद्ध हो गया । किसी कारण उसे नीच योनि मे जन्म भी लेना पडेगा तो वहाँ वह सुख पायेगा । मगर खाने-पीने मे चटोरपना पैदा कर लिया कि यह चाहिये, यह ठीक नही है । चटनी बढिया नहीं हुई, नीबु नही दिया । दो पत्ते डाल देते पोदीना की तो रग खिल जाता । बढिया नही बनी । अब पोदीना डाल दिया । थोडा सा नीबू निचोड देते तो क्या—एक सुन्दर चटनी हो जाती । ऐसे चटोरपने का स्वभाव बिगाड लिया । अब वह पशु हो जायेगा तो उसे बढ़िया चरने नही देंगे । मैंने गाँवो में देखा है । ऐसी उस गाय को, बैल को बढिया चारा नही देते । कहते हैं—'आज बढ़िया चर लिया तो

यह दो-तीन दिन चरेगा नही।' उसके डण्डा पडते हैं बढिया चारा चरने नही देते, क्योकि स्वभाव बिगाडा हुआ है मनुष्य जन्म का। तो अच्छा चारा मिलता ही नही। कुछ ऐसा बैल होता है कि भूख लगे तो बढिया दे दो, चाहे घटिया दे दो, पेट भर लेता है तो वह बढिया चारा चर भी ले तो कोई बात नही, अब बाँध दो। चारा चर लिया तो चर लिया। यह भूखा नहीं मरेगा। जिसके चटोरपना ज्यादा है तो मालिक को उसकी निगाह रखनी पडती है कि उसको बढिया चारा नही मिल जाय कही। स्वभाव बिगाडने से आड ही लगी। फायदा क्या हुआ?

शुद्ध स्वभाव वाले का आदर

ऐसे स्वभाव खराब है तो महाराज सब घरवाले खराब मानते हैं। बहनो-माताओ मे जिनका स्वभाव खराब होता है, उनको पीहर मे बुलाते हैं तो भाई और भोजाई सब सतर्क हो जाते हैं। बाईसा आ गयी है। चीज वस्तु सभाल कर रखो ठीक तरह से, ताले मे रखो। यह देख लेगी, मागेगी तो देगे तो चीज खराब हो जायेगी। नही देगें तो मन खराब हो जायेगा। तो यह देखे ही नही, बस। 'न देखे न कुत्तो भुसे' इसे पता ही न लगे। बेचारे घर के आदमी ऐसे डरते हैं, क्योकि स्वभाव बिगडा हुआ है। स्वभाव सुधरा हुआ है तो बाई आ गई तो भाई कहता है कि बाई चाबी तू ही राख। घर मे सब काम तू ही देख। वे अपने निश्चिन्त हुए। बाई तो दोनो ही है फर्क नही है। एक मा-बाप के पैदा हुए बहन और भाई। पर एक होते हुए भी स्वभाव जिसका शुद्ध है, उसको सब चाहते हैं। विधवा हो जाय तो देवर-जेठ आदि चाहते रहते हैं और

यहाँ भाई लोग चाहते हैं। देवर मादि लेने के लिए आते हैं—'बहुत जरूरी है, बालक होने वाला है, हम तो भौजाई को लेने के लिए आ गये।' भाई कहते हैं—'नही सा, अब भेजेंगे नहीं। क्यो? 'हमारे तो यह माँ की जगह है।' जैसे माँ से सलाह लेते थे, ऐसे बाई से सलाह लेते है—सब काम करने में। कैसे भेज दें? हमारे मा की जगह हैं। अब बताओ। शुद्ध स्वभाव होने से भाइयो के भीतर कितना आदर है? कितना भाव है? उधर ससुराल वाले भी चाहते हैं। वे भी चाहते रहते हैं। जिसका स्वभाव खराब होता है तो माँ कह देती है, 'बेटा? इन बाई ने अपने घर पहुँचा दे। अठो टाबर आपरे घर ही आछा।' कारण क्या? लखण बोदा तो कुण चावे? (स्वभाव खराब है तो कौन चाहे?)।

हम और काम करने मे स्वतन्त्र नही है। धन कमाने मे स्वतन्त्र नही है। मेहनत करके धन कमा ही लें, यह हाथ की बात नही, परन्तु स्वभाव सुधारने मे आप स्वतन्त्र हो। आप अगर चाहें तो स्वभाव को शुद्ध बना सकते हैं। स्वभाव बिगड़ा हुआ होता है तो सब दुनिया को दुःख होता है। कष्ट होता है—

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥
(मानस ७/४०/१)

अपना स्वभाव शुद्ध होता है तो सबको सुख होता है। स्वभाव बिगड़ा हुआ होता है तो सबको दुःख होता है। देवकिशनजी भोजक थे, वे कहते थे कि मैं चूरू मे स्टेशन मास्टर था तो वहाँ एक दिन 'मगलदास बाबू' आ गया। वह पोइटवान का मित्र था तो उससे मिलने आ गया। वह आकर भीतर बैठ गया कुर्सी पर। वे कह रहे थे कि मैं पास मे ही बैठा था।

किसी ने कह दिया 'यह मगलदास है' । इतना कहते ही बैठे-बैठे मेरा कुर्ता भीग गया पसीने से । यहाँ कुछ चोरी कर लेगा, कुछ ले जायगा तो क्या दशा होगी मेरी ? ऐसे विचार करते-करते पसीना आ गया बैठे-बैठे । मौन ही था वह, पर स्वभाव विगडा होने के कारण परिचय होते ही भय से पसीना आ गया और कोई सन्त आ जाय, महात्मा आ जायें तो गाँव मे एक आनन्द खिल जाय । महाराज पधार गये तो गाँव मे आनन्द, उत्सव होने लगता है । मनुष्य वे ही हैं, फिर फरक क्या है ? एक का स्वभाव सुधरा हुआ है । एक का स्वभाव बिगडा हुआ है । बिगडे हुए स्वभाव से लोगो को दु ख होता है, भय होता है । दु ख देना पाप है । पहले स्वभाव आप बिगाडा, पाप किया । फिर पाप करते जाते हैं । स्वाभाविक ही पाप होते चले जाते हैं । औरो को कष्ट होता ही चला जाता है । स्वभाव अपना शुद्ध निर्मल बना ले तो कही रह जाओ, लोग कहते हैं कि यह तो ऐसा अच्छा है 'आँख मे घाल्या ही खटके कोनी ।' इतना निर्मल हैं । कैसी विचित्र बात है ।

स्वभाव शुद्ध बनाने मे हरेक भाई-बहिन स्वतन्त्र है । धन कमाने मे परतन्त्र है, उसमे तो रात-दिन लगे है । स्वभाव शुद्ध बनाने के लिए परवाह ही नही करते । स्वभाव को शुद्ध बना लिया तो जहाँ जाओ, वहा आनन्द-ही-आनन्द रहेगा । मौज-ही-मौज रहेगी । खुशी ही रहेगी । जिनका स्वभाव शुद्ध हो गया है, निर्मल हो गया है, उनको देखने से दुनिया सब-की-सब प्रसन्न होती है । दुनिया को बडा आनन्द मिलता है । जिन लोगो ने अपने स्वभाव मे भगवान् को बसा लिया, भगवान् का भजन करते हैं, मात्र प्राणियो के हित की इच्छा करते हैं,

यहाँ भाई लोग चाहते हैं। देवर आदि लेने के लिए आते हैं—'बहुत जरूरी है, बालक होने वाला है, हम तो भौजाई को लेने के लिए आ गये।' भाई कहते हैं—'नहीं सा, अब भेजेंगे नहीं। क्यों? 'हमारे तो यह माँ की जगह है।' जैसे माँ से सलाह लेते थे, ऐसे बाई से सलाह लेते है—सब काम करने में। कैसे भेज दें? हमारे मा की जगह हैं। अब बताओ। शुद्ध स्वभाव होने से भाइयों के भीतर कितना आदर है? कितना भाव है? उधर ससुराल वाले भी चाहते हैं। वे भी चाहते रहते हैं। जिसका स्वभाव खराब होता है तो माँ कह देती है, 'बेटा? इन बाई ने अपने घर पहुँचा दे। बड़ो टाबर आपरे घर ही आछो।' कारण क्या? लखण खोटा तो कुण चावे? (स्वभाव खराब है तो कौन चाहे?)।

हम और काम करने मे स्वतत्र नही है। धन कमाने मे स्वतत्र नही है। मेहनत करके धन कमा ही लें, यह हाथ की बात नही, परन्तु स्वभाव सुधारने मे आप स्वतत्र हो। आप अगर चाहें तो स्वभाव को शुद्ध बना सकते हैं। स्वभाव बिगडा हुआ होता है तो सब दुनिया को दु ख होता है। कष्ट होता है-

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीडा सम नहिं अधमाई॥

(मानस ७/४०/१)

अपना स्वभाव शुद्ध होता है तो सबको सुख होता है स्वभाव बिगड़ा हुआ होता है तो सबको दु.ख होता है देवकिशनजी भोजक थे, वे कहते थे कि मैं चूरू में स्टेशन मास्ट था तो वहाँ एक दिन 'मगलदास डाकू' आ गया। वह पोइटवा का मित्र था तो उससे मिलने आ गया। वह आकर भीतर ब गया कुर्सी पर। वे कह रहे थे कि मैं पास में ही बैठा था

किसी ने कह दिया 'यह मगलदास है' । इतना कहते ही बैठे-बैठे मेरा कुर्ता भीग गया पसीने से । यहाँ कुछ चोरी कर लेगा, कुछ ले जायगा तो क्या दशा होगी मेरी ? ऐसे विचार करते-करते पसीना आ गया बैठे-बैठे । मौन ही था वह, पर स्वभाव विगडा होने के कारण परिचय होते ही भय से पसीना आ गया और कोई सन्त आ जाय, महात्मा आ जायें तो गाँव मे एक आनन्द खिल जाय । महाराज पधार गये तो गाँव मे आनन्द, उत्सव होने लगता है । मनुष्य वे ही हैं, फिर फरक क्या है ? एक का स्वभाव सुधरा हुआ है । एक का स्वभाव बिगडा हुआ है । बिगडे हुए स्वभाव से लोगो को दु ख होता है, भय होता है । दु ख देना पाप है । पहले स्वभाव आप बिगाडा, पाप किया । फिर पाप करते जाते हैं । स्वाभाविक ही पाप होते चले जाते हैं । औरो को कष्ट होता ही चला जाता है । स्वभाव अपना शुद्ध निर्मल बना ले तो कही रह जाओ, लोग कहते हैं कि यह तो ऐसा अच्छा है 'आँख मे घाल्या ही खटके कोनी ।' इतना निर्मल है । कैसी विचित्र बात है ।

स्वभाव शुद्ध बनाने मे हरेक भाई-बहिन स्वतन्त्र है । धन कमाने मे परतन्त्र है, उसमे तो रात-दिन लगे हैं । स्वभाव शुद्ध बनाने के लिए परवाह ही नही करते । स्वभाव को शुद्ध बना लिया तो जहाँ जाओ, वहा आनन्द-ही आनन्द रहेगा । मौज-ही-मौज रहेगी । खुशी ही रहेगी । जिनका स्वभाव शुद्ध हो गया है, निर्मल हो गया है, उनको देखने से दुनिया सब-की-सब प्रसन्न होती है । दुनिया को बडा आनन्द मिलता है । जिन लोगो ने अपने स्वभाव मे भगवान् को बसा लिया, भगवान् का भजन करते हैं, मात्र प्राणियो के हित की इच्छा करते हैं,

उनकी तन, मन, वचन से जो कुछ चेष्टा होती है, सबके हित के लिए होती है। उन पुरुषो के दर्शन करने से शान्ति मिलता है। सकट मिट जाते हैं, दु ख मिट जाते हैं, विघ्न टल जाते हैं। कारण क्या है? वह शुद्ध है, निर्मल है, पवित्र है। वह निर्मलता, श्रेष्ठता हरेक भाई प्राप्त कर सकते हैं।

पढे-लिखे हो, अपढ हो, गाँव के हो, शहर के हो, कैसी भी योग्यता क्यों न हो? अपना स्वभाव शुद्ध बनाने में सब स्वतन्त्र हैं। धन पैदा करने मे सब परतन्त्र, क्योकि धन तो पैदा तब होगा, जब किसी की तिजोरी खुलेगी। ऐसा हुनर करगे, जिससे दूसरे की तिजोरी खुल जाय, तब पैसा मिलेगा। स्वभाव किसी की तिजोरी मे बन्द थोडा ही है। पैसा तो तिजोरी मे बन्द रहता है, ताला लगा रहता है। शुद्ध स्वभाव के कोई ताला लगा है क्या? यह तो हर एक कोई ले लो। सबके लिए खुली है एकदम ही। शुद्ध स्वभाव बना लेना, कितनी बढ़िया बात? ऐसी स्वतन्त्रता हम लोगो को भगवान् ने कृपा करके दी है। अब ऐसी कृपा करो, अपना स्वभाव शुद्ध बनाओ।

स्वभाव शुद्ध करने का उपाय

स्वभाव शुद्ध कैसे बनावें? इसके लिए क्या उपाय है? उपाय एक ही बताया न, अपना अभिमान छोडो। अभिमान चुभता है। वह दूसरो को खटकता है बुरा लगता है। सच्ची बात का अभिमान भी खटकता है और बुरा लगता है। अभिमान तो खटकता हैं ही। इसमें कहना ही क्या है? आप सच्चे हृदय से किसी को मानते है कि ये पढे-लिखे हैं, अच्छे विद्वान् है, ऐसा आप हृदय से मानते हैं, पर वह कहे कि 'क्या देखते

हो ? तुमने इतनी पुस्तकें देखी नही, जितनी हमने पढी है। क्या समझते हो तुम ?" यह बात आपको बुरी लगेगी। सच्ची बात है तो भी बुरी लगती है, क्योकि उसके भीतर में अभिमान बस गया है न। हमने ऐसा-ऐसा पढा है, हम इतने विद्वान् हैं। अभिमान खटकता है। क्यो खटकता है ? परमात्मा के अश हैं। सभी भाई बरोबर है किसी ने गुण उपार्जन अधिक कर लिया तो अधिक हो गया। किसी मे वो गुण नही है तो कम रह गया। पर कम रहने से क्या हुआ ? क्या वह परमात्मा का प्यारा नही है ? क्या परमात्मा का अश नही है ? वहाँ तो बरोबर ही है।

समाज मे कोई धनी हो गया। कोई गरीब हो गया। धनी और गरीब तो अलग २ हो गये पर रोटी बेटी का जहाँ बर्ताव होगा तो हम भाई हैं, इसमे बडा-छोटा क्या है ? सब एक समान ही है। धन किसी के ज्यादा हो गया। किसी के कम हो गया। इसी तरह से आपकी योग्यता कम-ज्यादा हो गई, पर परमात्मा के लिए तो बराबर हो। अभिमान आप करते हो तो दूसरे को बुरा लगता है, क्योकि वह तुम्हारे से कम थोडा ही है। अभी कम हो गया है, पर वास्तव मे तो कम है नहीं। उसको दु ख होगा बेचारे को ! आप अभिमान रखते हो, उस अभिमान से अपना पतन होता है, और दूसरो को दु ख होता है। अभिमान दूर करो तो यह स्वभाव सुधर जाय और स्वार्थ की भावना दूर करो तो स्वभाव सुधर जाय। ये दोनो स्वभाव बिगाडने वाले हैं। एक तो हमारी बात रहे और एक हमारा मतलब सिद्ध कर लें। हरेक बात मे यह घात रहे, किसी तरह से मतलब सिद्ध हो जाय। मेरे को धन मिल जाय, मान मिल

जाय, मेरे को आदर मिल जाय। मेरे को आराम मिल जाय, यह भाव रहता है न, इससे स्वभाव बिगडता है। तो अभिमान से, अहकार से, स्वार्थ बुद्धि से स्वभाव बिगडता है। दोनो जगह निरभिमान होकर के—

सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ सतोष सदाई॥
(मानस ७/४५/२)

कपट गाँठ मन मे नहीं सब सों सरल सुभाव।
नारायण वा भगत की लगी किनारे नाव॥

कोई कपट करे तो उसके साथ भी कपट नही। 'मद करत जो करइ भलाई' ऐसा स्वभाव है। उसको याद करने से शाति मिलती है। ऐसी सरलता धारण करने मे क्या जोर आता है, बताओ? कुटिलता करने मे आपको जोर आयेगा। कुछ-न कुछ मन मे कपट गाठ गूथनी पडेगी न। सीधे सरल स्वभाव मे, है जैसी बात कह दी। झूठ कपट करोगे तो महाराज कई बातें ख्याल मे रखनी पडेंगी, फिर कही-न-कही चूक जाओगे। कही-न-कही भूल जाओगे। सच्ची बात है। सरलता है तो सब जगह मौज-ही-मौज है। अपने स्वार्थ और अभिमान का त्याग कर दूसरे के हित की सोचो। कैसे हित हो? क्या करू? कैसे करू? दूसरो का हित कैसे हो? दूसरो का कल्याण कैसे हो? दूसरो को सुख कैसे मिले? ऐसे सोचते रहो। आपके पास धन न हो तो परवाह नहीं, विद्या नही हो तो परवाह नही, कोई योग्यता नहीं, कोई पद नही, कोई अधिकार नही हो तो कोई परवाह नहीं। ऐसा न होते हुए भी आपका भाव होगा दूसरो के हित करने का तो स्वभाव शुद्ध होता चला जायेगा। जहाँ झूठ, कपट, अभिमान, अपनी हेकडी रखने का स्वभाव होगा,

वहाँ स्वभाव बिगड़ता चला जायेगा। वह बिगडा हुआ स्वभाव पशु पक्षी आदि शरीरो मे भी लग करेगा। वहाँ भी आपको सुख से नही रहने देगा। अच्छे स्वभाव वाला पशु योनि मे भी सुख पायेगा। मनुष्य भी श्रेष्ठ हो जायेगा।

स्वभाव सुधारने का मौका यहाँ ही है। जैसे बाजार होता है तो रुपयो से चीज मिल जाती है। बाजार न हो तथा जगल मे रुपये पास मे हो तो क्या चीज मिलेगी? यह बाजार तो यहा ही है, अभी लगा हुआ। इस बाजार मे आप अपना शद्ध स्वभाव बना लो, निर्मल बना लो। यहाँ सब तरह की सामग्री मिलती है। मनुष्य शरीर से चल दिये तो फिर हो जैसे ही रहोगे। फिर बढिया तो नही होगा, घटिया तो हो सकता है, वहाँ भी स्वभाव खराब हो सकता है, परन्तु वहाँ उसको बढिया बात मिलनी बडी कठिन है। कुछ बढिया मिलेगी भी तो सासारिक बाते मिलेगी, पारमार्थिक नही। वहाँ स्वभाव का सुधार नही हो सकता है। बढिया शिक्षक मिल जायेगा तो वह शिक्षित हो जायेगा, मर्यादा मे चलेगा और नही तो एब पड जायेगी तो तो उम्र भर दु ख पायेगा।

पशु के बचपन मे ही एब (आदत खराब) हो जाती है न। तो वह दु ख देने वाला, मारने वाला बन जाता है। छोरे उसे हाथ लगाते हैं, चिढाते हैं, तब ऐसा करके वह मारना सीख जाता है। फिर बडा होने पर मारता है सबको ही। अब सीखा दिया बच्चो ने पहले। बुरा स्वभाव बन जायेगा वहाँ भी। अत बुराई तो वहाँ भी मिल जायेगी। कौन सी बाकी रहेगी? भलाई का मौका तो यहाँ ही है। यहाँ भी हर समय नही। अच्छा सत्सग मिलता है, विचार मिलता है, सत्शास्त्र मिलता

है इन बातो से हमे अच्छाई सीखनी चाहिये । मौका खोना नहीं चाहिए । बड़े भाग मानुष तनु पावा । सुर दुर्लभ सब ग्रन्थहि गावा ।। (मानस ७/४२/७) । देवताओ के लिए दुलभ है। ऐसा मानव शरीर मिला । जिसमे अपना स्वभाव शुद्ध बना लें, निर्मल बना लें । फिर महाराज ! मौज ही-मौज । यह पूँजी सदा साथ मे रहने वाली है, क्योकि जहाँ कही जाओगे तो स्वभाव तो साथ मे रहेगा ही । बिगडा हुआ होगा तो बिगडा हुआ ही साथ रहेगा । जहाँ कही जाओ तो स्वभाव को निर्मल बनाओ । अहकार तथा अपने स्वार्थ का त्याग करके दूसरे का हित कैसे हो ? दूसरे का कल्याण कैसे हो ? दूसरे को सुख कैसे मिले ? अपने तन से, मन से, वचन से, विद्या से, बुद्धि से, योग्यता से, अधिकार से, पद से किसी तरह ही दूसरो को सुख कैसे हो ? दूसरो का कल्याण कैसे हो ? ऐसा भाव रहेगा तो आप ऐसे निर्मल हो जायेंगे कि आपके दर्शनो मे भी दूसरे लोग निर्मल हो जायेंगे ।

तन कर मन कर वचन कर देत न काहु दुख ।
तुलसी पातक झड़त है देखत उसके मुख ।।

उसका मुख देखने से पाप दूर होते हैं । आप भाई-बहिन सब बन सकते हो वैसे । अब मीराबाई ने हमारे को क्या दे दिया ? परन्तु उनके पद सुनते हैं । याद करते हैं तो चित्त में प्रसन्नता होती है । पद गावें तो भगवान् के चरणों में प्रेम होता है । उनके भीतर प्रेम भरा था, सद्भाव भरा था, इस वास्ते मीराबाई अच्छी लगती है । एक दिन भी उनकी भिक्षा नहीं की । फिर भी मीराबाई अच्छी लगे, उनकी बात भी अच्छी लगे, उनके पद अच्छे लगे, क्योंकि उनका अन्त करण

शुद्ध था, निर्मल था। नही तो मीराबाई की सास थी, पूजनीय थी वह मीराबाई के। पर उसका नाम ही नही जानता कोई। मीराबाई विदेशो तक सब जगह प्रसिद्ध हो गई। भगवान् की भक्ति होने से, नाम चाहने से नही।

नाम नाम बिन ना रहे, सुनो सयाने लोय।
मीरा सुत जायो नहीं शिष्य न मु डयो कोय॥

न मीराबाई के बेटा हुआ। न मीराबाई ने चेला बनाया। पर नाम उसका सब जगह आता है। साधुओ मे यह होती है कि हमारे चेला हो जाय तो हमारा नाम रह जाय। गृहस्थ कहते है हमारे छोरा हो जाय तो हमारा नाम हो जाय। छोरा सबके हुआ, पर नाम हुआ ही नही। तीन-चार पीढी के पहले वालो को आज घर वाले ही नही जानते, दूसरे क्या जानेंगे? भगवान् का भजन करो तो महाराज! कितनी विचित्र बात है? नाम रहे-न-रहे। आपका कल्याण हो जायेगा। दुनिया का बडा भारी हित होगा। इस वास्ते अपने स्वभाव को शुद्ध बना लें। शुद्ध कैसे बने? अपनी हेकडी छोडे। अपना अभिमान छोड दें। दूसरो का आदर करें, दूसरो का हित करे। जहाँ न्याययुक्त बात हो तो दूसरो की बात मानें। दो बात सामने आ जाय तो हमारी नही उनकी सही। उनकी न्याययुक्त बात है, बढिया बात है तो अपनी बात छोडकर उनकी बात मानें। दोनो बढिया होने पर भी उनकी बात का आदर करने से अपने स्वभाव का सुधार होता है।

नारायण, नारायण, नारायण

(दिनाक ११ अगस्त, १९८१)

॥ श्री हरि ॥

प्रवचन—५

मनुष्य जीवन की सार्थकता

मनुष्य शरीर का समय बहुत मूल्यवान् है। भाइयो और बहनो ने रुपया-पैसो को मूल्यवान् समझा है। चीज-वस्तु, आदर, प्रतिष्ठा, मान, सत्कार और आराम इनको महत्त्व देते हैं कि ये हमे मिल जायँ, परन्तु इन सबसे विशेष मूल्यवान् है अपने जीवन का समय। समय के समान कोई मूल्यवान् वस्तु नही है, क्योकि समय देकर हम मूर्ख से विद्वान् बन सकते हैं। समय लगाने से पढाई करके विद्वान् बन जायँ, समय लगाने से धनवान् बन जायँ, समय लगाने से बडे यशस्वी बन जायँ, ससार मे कीर्ति हो जाय, समय पाकर हम बहुत बडे परिवार वाले हो जाते हैं। समय लगाकर बडे भारी मकान बना लें, बहुत से काम कर सकते हैं। समय के बदले बहुत चीजें ले सकते हैं। ससार की अच्छी अच्छी चीजें ले लें। ससार का ही नही, धर्म का अनुष्ठान् कर लें। स्वर्ग प्राप्त कर लें, स्वर्ग ही नही, परमात्मा की प्राप्ति कर सकते हैं, तत्त्व-ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, जीवन्मुक्त हो सकते हैं। सदा के लिये महान् आनन्द की प्राप्ति और दु खो का आत्यन्तिक नाश हो सकता है। इस मानव जीवन के समय के सदुपयोग से हम सब कुछ प्राप्त कर सकते

है। सब तरह की उन्नति हम समय लगाकर कर सकते हैं। समय लगाकर सम्पूर्ण चीजो को इकट्ठी कर ली जाय तो भी इनके बदले मे समय नही मिलता। ६०-७० वर्ष का आदमी मरता है। वह लखपति, करोडपति बन गया, घन सम्पत्ति, जमीन, परिवार बहुत से मकान उसके है। वह कहता है साठ वर्षो मे की हुई सभी वस्तुएँ मैं देता हूँ, उसके बदले मे साठ महीना मिल जायँ मेरे को और जीने के लिये। तो साठ वर्षो की कमाई देने पर भी साठ महीना जीवन मिल सकता है क्या? साठ न सही साठ दिन मिल जायँ। नही मिलेंगे।

काम क्या आयेगी कमाई? तीन कौडी नही बटेगी, जिस समय मौत आ जायेगी कुछ कौडी नही बटेगी। चिन्ता और अधिक लग जायेगी। कहाँ-कहाँ पडा है? कितना धन है?

आना आना जोडकर करोड तहखाना भरे,
खाना न खिलाना यह ताके मन माना है।
दाना लोग दान देन कहे तो दीवानो कहे,
प्रभुजी का बाना देख लेत खल काना है।
जर जमीन जोरु अरु जायदाद जेती तीज,
एक दिन जाना जाको नही जाना है।
आखिर विराना ताकु सालग पिछाना नाही,
ऐसे जग वचक का ठौर न ठिकाना है।

धन कमा कमा कर इकट्ठा कर लिया खजाना, परन्तु साथ मे क्या चलेगा? यह सोचते नही हो। धन तो यहाँ इकट्ठा कर रहे हो। धन के लिए झूठ, कपट, बेईमानी, जालसाजी, विश्वासघात, धोखा आदि दे-देकर पाप इकट्ठे किये है, वे इकट्ठे

॥ श्री हरि ॥

प्रवचन–५

मनुष्य जीवन की सार्थकता

मनुष्य शरीर का समय बहुत मूल्यवान् है। भाइयो और बहनो ने रुपया-पैसो को मूल्यवान् समझा है। चीज-वस्तु, आदर, प्रतिष्ठा, मान, सत्कार और आराम इनको महत्त्व देते हैं कि ये हमे मिल जायँ, परन्तु इन सबसे विशेष मूल्यवान् है अपने जीवन का समय। समय के समान कोई मूल्यवान् वस्तु नही है, क्योंकि समय देकर हम मूर्ख से विद्वान् बन सकते हैं। समय लगाने से पढाई करके विद्वान् बन जायँ, समय लगाने से धनवान् बन जायँ, समय लगाने से बडे यशस्वी बन जायँ, ससार मे कीर्ति हो जाय, समय पाकर हम बहुत बडे परिवार वाले हो जाते है। समय लगाकर बड भारी मकान बना लें, बहुत से काम कर सकते है। समय के बदले बहुत चीजें ले सकते हैं। ससार की अच्छी अच्छी चीजें ले लें। ससार का ही नही, धर्म का अनुष्ठान कर लें। स्वर्ग प्राप्त कर लें, स्वर्ग ही नही, परमात्मा की प्राप्ति कर सकते हैं, तत्त्व-ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, जीवन्मुक्त हो सकते है। सदा के लिये महान् आनन्द की प्राप्ति और दु खो का आत्यन्तिक नाश हो सकता है। इस मानव जीवन के समय के सदुपयोग से हम सब कुछ प्राप्त कर सकते

मे रात दिन लगे है। वह सच्या अभिमान बढायेगी केवल अभिमान। अभिमान रूपी बेहडे के वृक्ष को छाया मे आसुरी सपति रूपी कलियुग विराजमान रहता है। अभिमान बढेगा कि हम धनवान् है। वह अभिमान आपको न सत्सग करने देगा, न भजन करने देगा, न धम करने देगा, न आध्यात्मिक उन्नति करने देगा पतन की तरफ लगायेगा।

अभी कोई धनी आदमी करोडपति है वह सुन ले कि सत्सग बडा अच्छा होता है। किसी ने प्रशसा कर दी तो मन चलेगा भी तो पूछेगा कि वहाँ कौन कौन आते है? अमुक-अमुक सेठ आते है क्या? वे तो नही आते, साधारण आदमी आते है--- ऐसा सुनेगा, तो मन चलने पर भी जा नही सकेगा। वहाँ बेइज्जती कैसे करवावे? साधारण आदमियो मे बैठ करके। हमारी इज्जत का तो कोई आता ही नही आदमी। वहाँ जाकर हम बैठ जाय। अपनी बेइज्जती करवावें। वहाँ न कोई बैटने का ठिकाना है। हम कैसे जावे? अब दो चार आदमियो का भी अगर मन करे तो उनमे से पहले कौन जाय? कौन नाक कटावे पहले, इसके बाद दूसरा भी कोई हिम्मत करे। तो ऐसी आफत हो गई। धन होने से हुई न? मान हुआ, धन हुआ, पद मिल गया, अधिकार मिल गया, ऊँचे बन गये तो आफत और कर ली। ऊंचे बनने मे समय लगाया है, मेहनत की है, बुद्धि लगाई है। सिफारिश वहुतो की ली है तब जाकर ऊँचे बने और अब आफत हो गई। भजन, ध्यान, सत्सग करना, अपनी आत्मा का उद्धार करना, कठिन कर लिया। इस तरह के समझदार कहलाते है।

कितना काम कर लिया, साधारण आदमी था, इसके वाप

होते हैं भीतर अन्त करण मे। वे पाप आपकी खराब नियत बनाने मे, महान् नीच बनाने मे बडे भारी सहायक हैं। ऐसे पाप करके धन कमाया यहाँ रहने वाला। मरते समय में यह धन तो कौडी एक साथ चलेगा नही, पाप कौडी एक पीछे रहेगा नही। यह हरेक आदमी को सोचना है कि हम कर क्या रहे हैं इतना समय हमने लगाया है तो क्या लाभ किया? पचास, साठ, सतर वर्ष आ गये, इतने वर्ष तो गये, पर इतने वर्षों मे हिसाब पूछने वाला हो कि तुमने साथ चलने की पूजी कितनी इकट्ठी की है। पूजी साथ चलने की बढिया ली है कि घटिया। दूसरो को सुख पहुँचाने की नीयत रखी है कि स्वार्थ करने की। अपकार करके धन अपने इकट्ठा करना, स्वार्थ ही कर लेना, इसमे समय लगाकर नीयत अपनी खराब-ही-खराब बनाई है क्या? वही बनाई है तो किसके काम आवेगी? यह जरा सोचो।

वर्तमान पतन का कारण

ऐसा विचार करने का मौका मनुष्य शरीर मे ही है। गाय, भैंस, कुत्ता गधा आदि नही सोच सकते। और दूसरी योनि में सोचने की ताकत नही है, बुद्धि नहीं है, विवेक नही है, जो भगवान् ने इस मनुष्य शरीर मे दिया है। अब भोग भोगना, सग्रह करना, रुपये–इकट्ठे करना इस प्रकार करते करते फूक निकल जायेगी, राम नाम सत् बोल जायगी। खराब नीयत रह जायेगी, यह दुदशा होगी। सज्जनो! हमें इस बात का दुःख होता है। हमारे भाई सग्रह करने मे लगे हैं। केवल संख्या बढाने मे ही लगे हैं केवल सख्या ही। इतना धन हो गया, दस हजार हो गया कि लाख हो गया, करोड हो गया। सख्या बढ़ाने

मे रात दिन लगे है। वह सच्चा अभिमान बढायेगी केवल अभिमान। अभिमान रूपी बेहडे के वृक्ष की छाया मे आसुरी सपति रूपी कलियुग विराजमान रहता है। अभिमान बढेगा कि हम धनवान् है। वह अभिमान आपको न सत्सग करने देगा, न भजन करने देगा, न धम करने देगा, न आध्यात्मिक उन्नति करने देगा पतन की तरफ लगायेगा।

अभी कोई धनी आदमी करोडपति है वह सुन ले कि सत्सग बडा अच्छा होता है। किसी ने प्रशसा कर दी तो मन चलेगा भी तो पूछेगा कि वहाँ कौन-कौन आते हैं? अमुक-अमुक सेठ आते है क्या? वे तो नही आते, साधारण आदमी आते है— ऐसा सुनेगा, तो मन चलने पर भी जा नही सकेगा। वहाँ वेइज्जती कैसे करवावे? साधारण आदमियो मे बैठ करके। हमारी इज्जत का तो कोई आता ही नही आदमो। वहाँ जाकर हम बैठ जाय। अपनी वेइज्जती करवावें। वहाँ न कोई बैठने का ठिकाना है। हम कैसे जावें? अब दो चार आदमियों का भी अगर मन करे तो उनमे से पहले कौन जाय? कौन नाक कटावे पहले, इसके बाद दूसरा भी कोई हिम्मत करे। तो ऐसी आफत हो गई। धन होने से हुई न? मान हुआ, धन हुआ, पद मिल गया, अधिकार मिल गया, ऊँचे बन गये तो आफत और कर ली। ऊँचे बनने मे समय लगाया है, मेहनत की है, बुद्धि लगाई है। सिफारिश बहुतो की ली है तब जाकर ऊँचे बने और अब आफत हो गई। भजन, ध्यान, सत्सग करना, अपनी आत्मा का उद्धार करना, कठिन कर लिया। इस तरह के समझदार कहलाते है।

कितना काम कर लिया, साधारण आदमी था, इसके बाप

तो मामूली थे यह लखपति, करोडपति बन गया, बडा भारी काम किया है। बडा भारी काम नरको मे जाने के लिये किया है। सांगोपाग दु ख पाने के लिए, जो दु ख कभी मिटे नही सदा दु ख की परम्परा ही भोगते रहे। ऐसा काम किया तो क्या यही बुद्धिमानी है। मनुष्य शरीर प्राप्त करके ऐसा ही करना बुद्धिमानी है क्या ? एक को ही नही दूसरो पर भी यही असर पड़े—हम भी धनी बनें। अरे भाई ! करोगे क्या ? किसके आगे रोयें ? कोई सुनने वाला नही। सस्थाएँ बनाते हैं, उनमे भी धन सग्रह करते हैं। सस्थाओ के द्वारा उपकार कैसे किये जायँ, इसकी तरफ ख्याल नही। बनाते तो है सस्था उपकार के लिए और लगी है भीतर मे धुन धन इकठ्ठा करने की, अधिक धन सग्रह हो जाय, अधिक धन इकट्ठा हो जाय। धन अधिक हो जाय जिसके पास वही बडा है। आज माप तौल यह हो गया कि धन जिसके पास ज्यादा हुआ वही बडा हुआ। सज्जनों ! धन से बडा नही होता है। बडा वह है जिसके मरने के बाद भी बडप्पन रहे, ऊँचा बना रहे। जो नरको में जावे, चौरासी लाख योनि मे सूकर-कूकर योनि मे जावे, वह बडा क्या हुआ ? महान् पतन कर लिया न, परन्तु अब कहे कौन ? सीखावे कौन ? हमारे सन्तो की वाणी मे आता है—"जगत भेष एकण मतो एकण दिश जावे।" जगत इधर जा रहा है भेष (साधु) भी इधर जा रहे हैं मकान बनावो बडा-बडा और धन इकट्ठा कर लो। सब एक ही तरफ जा रहे हैं। सीखावे कौन ? साधु ब्राह्मण जिनको लोग अच्छी दृष्टि से देखते हैं। अच्छे भी हैं, साधन-भजन करते भी हैं, परन्तु उनके भी लगी है कि मान बडाई कैसे हो जाय ? धन कैसे हो जाय ! बडप्पन कैसे मिल जाय ? ऊँचे हम कैसे बन जायें। अरे वास्तविक ऊँचे बनो,

तत्त्वबोध प्राप्त कर लो, परमात्मा की भक्ति प्राप्त कर लो, सगुण-निर्गुण, साकार-निराकार की बाते जो शास्त्रों मे पढी है, उनका साक्षात् करके अनुभव करो। इसके लिए यह ऊँचा पद है। इसकी प्राप्ति नही की तो क्या किया ?

मनुष्य जीवन की सफलता–किसमे ?

सन्तो ने कहा—"एक राम बोलबो न सीख्यो तो सीख्यो गयो धूल मे।" और सब सीख लिया परन्तु भजन-स्मरण नही सीखा तो धूल मे गया कुछ काम का नही। जैसे बिना जल का कुँआ खोदने से क्या लाभ ? पचास साठ फुट गहरा खोद लिया पर पानी तो है ही नही। तो क्या करे ? इतनी तो यही दिवाल बनाते, मकान बनाते कोई छाया मे बैठता। अब कुए मे गाय, भैस बाधें कि सामान रखे या बैठे क्या करे ? वह क्या काम आयेगा ? पानी तो है ही नही उसमे। कुआ बहुत गहरा है पर पानी नही है। ऐसे मानव शरीर मिला मुक्ति नही की, भगवान् की प्राप्ति की नही। सगुण के दर्शन किये नही, निर्गुण का ज्ञान प्राप्त किया नही। तो क्या लाभ हुआ मानव शरीर पाकर ?

आपने उस तत्त्व का अनुभव किया है कि नही, ये केवल बातें करने के लिए नही है। भगवान् की बात मे भी बडा लाभ है, परन्तु केवल बात ही नही करना है उसे प्राप्त करना है। प्रह्नाद भक्त हुए, ध्रुवजी महाराज हुए तो अच्छी बात है। तुमने कितनी भक्ति की है। नाम तो खुद की भक्ति आवेगी। भक्तो के नाम लेने से भी पवित्रता होती है, परन्तु जब तक करके नही देख तो क्या हुआ भाई ?

"पर धन की बाता किया, घर की भूख न जाय।"
"घर की भूख जब जाये, जो धन हाथ मे आय।।"

वह धनवान है, वह करोडपति है, राजा महाराजा है ऐसा है अच्छी बात। तुम्हारे तो उसका मुट्ठी चना भी काम आवेगा नही। उनके पास धन है तो पडा है, क्या फायदा? कोरी बातें करने से हमारे क्या लाभ? अपने कमाई करो। मिठाई की बात करो कि ऐसा रसगुल्ला होता है अमुक मिठाई ऐसी होती है, ऐसी होती है करते रहो क्या फायदा? अरे भाई! अपने भोजन बन जाय, भोजन पाकर तरातर हो जाय तब ठीक है।

परमात्म तत्त्व का अनुभव हो जाय, कृतकृत्य हो जायें ज्ञात ज्ञातव्य हो जायें और प्राप्त प्राप्तव्य हो जायें—तीन बात। मनुष्य मे तीन शक्ति है जानने की, करने की और पाने की। वह पाने के लिए कुछ करता है कि कुछ मिल जाय तो पाने की शक्ति है, कुछ जानने के लिए चेष्टा करता है तो जानने की शक्ति है और कुछ कर लें तो करने की शक्ति है। जानना कब समाप्त होता है जब जानने लायक बाकी न रहे, 'यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते, (गीता ७/२)। जिस तत्त्व के जानने के बाद जानना कुछ बाकी न रहे। वह जान लिया तो ज्ञानशक्ति का उपयोग हुआ। ससार की बहुत सी विद्या जान ली, बहुत सी लिपि जान ली तरह-तरह की कला जान ली। बडे बडे कलाकार कारीगर हो गये। पर पूछे कि मुक्ति हुई कि नही? अगर नही हुई तो जानने से क्या फायदा निकला? वह जानना क्या काम आयेगा? मुफ्त मे फँसावट होगी। फायदा क्या होगा? ईर्ष्या पैदा होगी। बडी-बडी जानकारी करके विद्वता अनेक प्राप्त कर लें, विद्वता से यश भी कर लें,

तो समझता है कि वाह-वाह हो गई सा। 'यश शरीरे भव मे दयालु' यश प्रापणीय वस्तु है, परन्तु यश प्राप्त करके किया क्या तुमने ? तुम्हारे हाथ क्या लगा ? थोडा आप सोचो, विचार करो। सस्कृत-साहित्य के कवियो मे कालिदास प्रसिद्ध कवि हुए।

'पुष्पेषु चम्पा नगरीषु लका नदीषु गगा। नृपेषु राम।
योषित्सु रम्भा पुरुषेषु विष्णु' काव्येषु माद्य कवि कालिदास ॥

कालिदास का नाम है तो वह कोई तत्त्वज्ञ जीवन्मुक्त था सा बात नही है, उसका अभी पीछा जन्म हो जाय और यहाँ अभ्यास करे, पूर्व के अभ्यास के कारण विद्वान बन जाय और सस्कृत का विद्वान बनकर सस्कृत मे कविता करने लगे। लोग भी कहे वाह ! वाह ! कविता बडी सुन्दर है। कोई कहता है– 'कविता तो कालिदास के समान है।' कोई कहे—'कालिदास के समान तो नही पर अच्छी है कविता।' कालिदास की पहले प्रसिद्धि हो गई। उसके खटकती है कि कालिदास दुष्ट कौन हुआ ? जो हमारे यश मे धब्बा लगा दिया। हमारी कविता कैसी बढिया ? पर लोग कहते है कालिदास के समान नही है। कालिदास कौन है ? याद तो है नही कि तू ही था पहले।

आप कमाया कामडा किणने दीजे दोष।
खोजेजी की पालडी काँढे लीनी खोस ॥

आपका बनाया हुआ यश हैं अब आपके ही चुभता है, खटकता है। तो क्या निहाल करेगा ? बताओ। उस यश प्रतिष्टा के लिये लोग मेहनत करते हैं, समय लगाते हैं बुद्धि लगाते हैं।

अरे मनुष्य शरीर प्राप्त किया है भाई ! क्या मान बडाई के लिए ? वह भी चाहो तो भजन से मिल जायेगी सज्जनो !

भगवान् की तरफ चलोगे तो यश, प्रतिष्ठा, मान, आदर सब चरणों मे लोटेगी। ऋद्धि और सिद्धि जाके आकर खडी है आगे। सब आपके सामने आ जायेगी। गर्ज करेंगे वे। आज धनवान् की गरज धनवान् करते हैं, राजा महाराजा करते हैं। वे नही करें तो क्या हुआ ? भगवान् करते हैं खुद। भगवान् के दरबार में उनका ऊँचा दर्जा है—

"नयेति यो यस्य गुण प्रकर्षं स न सदा निन्दति नात्र चित्रम्।
यथा किराती परिकुम्भ जातां मुक्तां परित्यज्य बिभर्ति गुञ्जाम्।"

मैं तो हूँ भगतन को दास भगत मेरे मुकुटमणि।

भगवान् जिसका आदर करे तो दुनिया का आदर क्या चीज है ? दुनिया की प्रशसा दुनिया का आदर कोई मूल्य रखता है क्या ? आज गुण दीखे तो आज प्रशसा कर दी कल उसका कोई दोष हुआ तो निन्दा करना शुरु कर दिया। इनसे मान-बडाई करके भी क्या कर लिया ? भैया वह पद प्राप्त करो, जिसके पाने के बाद मे करना बाकी न रहे। वह पद मिल जाय तो मिलना बाकी न रहे।

तीन शक्तियां—जानना, करना और पाना

मनुष्य मे तीन शक्तिया हैं। जानने की शक्ति है, करने की शक्ति है और कुछ हासिल करने की भी शक्ति है। जानने की शक्ति पूरी कब होगी ? जब स्वय अपने को जानेगा तब जानने का सदुपयोग हुआ। ससार को बहुत जान लिया। खुद तू कौन है इसका पता है ही नहीं। अमुक नाम का अमुक नाम का मैं हूँ। अरे ! यह तो जन्म के बाद का नाम, गाँव जाति है, परन्तु पहले तू कौन था असली ? अभी कौन है ? और मरने के

बाद कौन रहेगा ? तेरा स्वरूप तत्त्व वास्तव मे क्या है ? इस बात को जाना ही नही और सब जान लिया । अरे असली बात जानने की थी वह नही जाना तो क्या जाना ?

जो अपने आपको जान लेता है ठीक तरह से, अपरोक्ष रीति से किंचिन्मात्र भी सन्देह न रहे, तो वह जीवन्मुक्त हो जाय । तब इसका जानना समाप्त होता है । अपने आपको जानने से जानना पूरा होता है । इतना किया, यह किया पर यह तो नहीं किया । तो करना भी समाप्त हो जाता है तब मनुष्य का जन्म सफल है । करना समाप्त कब होता है ? अपने लिए काम करेगा तो कभी करना समाप्त नही होगा । अनन्त जन्मो तक करते जाओ कभी काम समाप्त नही होगा । बाकी का बाकी रहेगा । अपने स्वार्थ का अभिमान का त्याग करके दूसरे के हित के लिए किया जाय तो आप कृतकृत्य हो जायेगे । जब अपने लिए कुछ भी करना बाकी न रहे । तो 'यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमव शिष्यते (७/२)' । ऐसे 'बुद्धिमान्स्यात् कृतकृत्यश्च भारत' वह कृतकृत्य हो जाता है । करना बाकी नही रहता । करने लायक सब काम कर लेता है । यह करना तभी तक बाकी रहता है, जब तक अपने लिए करता है । अपने लिए नही करता है तब उसका करना पूरा हो जाता है ।

पाप का फल–दु:ख प्राप्ति

तो किया क्या ? कुछ नही किया, बाकी क्या बचा आपके पास मे ? मेहनत की और क्या किया है ? लाभ ले लिया, इतना ले लिया पर किया कुछ नही । लाखो-करोडो रुपये मिल गये । आज मरता है तो क्या साथ चलता है ?

अरब-खरब लों द्रव्य है, उदय अस्त लों राज।
तुलसी जो निज मरण है तो आवे केहि काज ॥

अरब रुपया दगे रा पर अभी गला काट देंगे तो लेकर क्या करेंगे ? जहा पडा है वहीं पडा रहेगा। उधर से इधर पडा रहा और क्या हुआ ? तुम्हारे साथ क्या चला ? कुछ नहीं। ऐसे क्या किया तुमने ? बहुत काम किया। ये ऐसे बडे जज हैं, बेरिस्टर हैं वकील हैं। इतने रुपये लेते है रोजाना। रोजाना हजार रुपये कमाते है तो हजार कागज है कागज। एक तुली का काम। पहले जमाने के सिक्के हजार रुपयो के साढे बारह सेर होते थे। एक दिन मे १२॥ सेर रुपये लाये तो महिना मे कितना लाये ? बारह महीने मे कितना लाये ? इतना ढोकर इकट्ठा कर लिया। रात्रि मे हार्ट फेल हो जाय मर जाय तो क्या किया ? १२॥ सेर बोझा लाये रोजाना इस कमरे से इस कमरे मे लाकर रख दिया। एक गधा कितना ढोता है पत्थर एक दिन में ? उसका हिसाब करो। अरे वह पत्थर जैसे ही ढोता है क्या ? कैसी बात करते हो ? वह तो पत्थर ढोता है हम रुपये लाये हैं। इसके मरने के बाद पत्थर मे, रुपया मे क्या फर्क है साहब ? बताओ। पत्थर ढोया तो रुपया ढोया तो क्या फर्क पडा ? आपके साथ सम्बन्ध है क्या ? अब।

अच्छे अच्छे धनी आदमी हुए है, आचरण अच्छे नही थे तो भूत-प्रेत पिशाच बन गये घर मे नही आ सकते। घर मे आने देते नही उनको। मन्त्रों से कीला घर अलग ही रखते हैं कि यहां न आ जाय वहाँ। वह धनी बाहर के बाडा (दरवाजा) खटखटाये कि मैं आ गया हूं पोता। 'थांरे थान मकान, म्हारे थान मकान मठे नहीं मठे नहीं।' आप अपने स्थान पर रहो

यहाँ नही, यह दशा है। वह कहता है मैंने घर बनाया है, मेरा रुपया है। यह दशा होगी। इसमे समझना है कि हमने इतना काम कर लिया। क्या काम आया बताओ। धन आदि के लिये जो पाप किये है वे पाप ऐसा नही कहेगे कि थारे थान मकान। वह तो कहेग अठि आओ, चौरासी लाख योनि मे पधारो।

'यहाँ किये हैं कर्म निशक मानी, वहाँ जाब कछु नहीं आयेगा जो।
जब पूछेंगे हिसाब हजूर वांहो तब लेखा दिया नहीं जायेगाजी।'

पता लगेगा कब उसका फल निकलेगा तब। और यह भोगना पडेगा भाई। उससे बच नही सकते आप। आज चाहे दुनिया को धोखा दे दे, परन्तु वहाँ धोखा नही होगा।

एक घटना हमने श्री जयदयाल जी के मुख से सुनी। सेठजी श्री जयदयाल जी गीता प्रेम के सस्थापक, सचालक थे, सरक्षक थे सब तरह से। उसको जन्म देने वाले। वे चुरु के रहने वाले थे। चुरु की बात बताते थे कि जब हम आठ दस वष के थे। विश्वेश्वरलाल जी खेमका जो अब नही है, मेरे से मिले हुए हे मेरे बाते हुई है, तो वे वृद्ध थे। एक लडका महेश्वरियो का बीमार हो गया ज्यादा। अधिक बीमार हो गया तो रात्रि मे कई लोग इकट्ठे हो गये। रात शायद ही निकाले मर जायेगा, इस वास्ते लोग बहुत से जग रहे थे। रात्रि मे बहुत ज्यादा बीमार हुआ, मरणासन्न हुआ तब उसका बाप रोने लग गया। यह बात बिल्कुल बीती हुई है। बाप को रोता देखकर बीमार पडा हुआ छोरा कहता है—अब रोने से क्या हो? काम करते समय सोचते तो आज यह दिन क्यो देखने को मिलता? परन्तु उस समय तो सोचा नही अब रोने से क्या हो? वहाँ पास मे कई बैठे थे, बात क्या थी। उसने कहा कि—यह इसी जन्म की

बात है, पुराने जन्म की नही है। क्या बात है ? तो कहने लगा कि—देखो ! पिताजी की तरफ इशारा करके कहता है—अमुक सम्वत् मे ये यहाँ से बम्बई गये थे, बीच मे एक स्टेशन पर मैं भी उतरा। दस हजार रुपये मेरे पास मे थे। बगाली अपना नाम बताया, वहाँ का मैं था ही, तो हम साथ हो गये दोनो ही। हम उतरे तो भडभुजारी के यहाँ पर हम दोनो रात्रि को ठहरे। रात्रि को रुपये मेरे पास थे। भुजारी ने और इसने मिलकर मार दिया और रुपये ले आये। तो मेरे को मारकर यह आया है।

वे लोग पास मे बैठे इधर-उधर देखने लगे कि बात तो ठीक दीखती है। यह उस समय गया था बम्बई (कर्जा था)। पीछे जल्दी लार उतार दिया तो आश्चर्य आया कि इतना जल्दी कर्जा कैसे उतारा ? तो वहम लोगो के था ही। बात मिल गई। वह बोला इस वास्ते मैं आया हू बदला लेने के लिए। इतना रुपया इसका खर्च हो गया है मेरे जन्म मे, इतना विवाह मे और इतना कुछ बाकी रहा है। एक बार और आऊँगा। अब ये रोवे, अब रोने से क्या हो ? ऐसा बदला लेने वाला लडका था वह। पास मे बैठे लोगो ने पूछा—इसने तो इतना अन्याय, अत्याचार किया पर इस बणिये की बेटी ने क्या खराब काम किया जो यह विधवा हो गई ? गुस्से मे आकर बोला यह वही रांड भुजारी है। दोनो ने मिलकर मारा था मेरे को, अब रोती रहेगी उम्र भर। उसका बाप बोला कि यह सन्निपात मे आ गया। सन्निपात मे आने पर बादी मे बकता है। यह ऐसे ही बकता है, प्रलाप करता है। वायु का जोर है। उसने कहा कि 'वायु का जोर नही है मैं सन्निपात मे नही हूँ'। अमुक अमुक

सेठ की हवेली के दक्षिण की तरफ चार चोर भीत फोडकर भीतर घुस रहे हैं और वे चोरी करेंगे। जाकर देख लो, अगर यह वात सच्ची तो मेरी बात भी सच्ची। वह वात झूठी तो मेरी वात भी झूठी। उस सयय तो वहाँ कोई गया नही। बात सबके सामने हो गई और वह मर गया। लोगों ने सुबह देखा की वात सच्ची है। भीत तोडी हुई है चोरी हो गई तो यह वीती हुई घटना है भाई। यहाँ जो काम, करते हो राई-राई का लेखा होगा।

जब हक पूछे हिसाब माही तब लेखा दिया नही जायगा रे।
सेवग साहब सो चोर जम के हाथ विकायगा रे।

शीघ्र चेत करो! मौत नजदीक आ रही है।

यह दशा होगी। इस वास्ते भाई ये किये कर्म जरूर भोगने पडते है। आपको इस जन्म मे कर्म विगडने की एक बात बताई, सच्ची घटना है। ऐसी घटनाएँ मैंने सुनी है। ऐसा होता है और भोग भोगना पडता है। इस वास्ते मनुष्य को बडी सावधानी रखनी चाहिए।

डरते रहो यह जिन्दगी बेकार न हो जाय।
सुपने मे किसी जीव का अपकार न हो जाय॥

पाप अन्याय करके नरको की दुखो की तैयारी कर लेना, कितनी बडी हानि की बात है। मानव शरीर मिला भगवान की कृपा से। प्रभु की प्राप्ति कर लो, तत्त्व ज्ञान प्राप्त कर लो, जीवन्मुक्ति कर लो, मुक्त हो जाओ—ऐसा सुन्दर मौका मिला है। ऐसे मौके को खोकर के पाप सग्रह कर लिया।

बात है, पुराने जन्म की नही है। क्या बात है ? तो कहने लगा कि—देखो ! पिताजी की तरफ इशारा करके कहता है—अमुक सम्वत् में ये यहां से बम्बई गये थे, बीच मे एक स्टेशन पर मैं भी उतरा। दस हजार रुपये मेरे पास मे थे। बगाली अपना नाम बताया, वहां का मैं था ही, तो हम साथ हो गये दोनो ही। हम उतरे तो भडभु जारी के यहां पर हम दोनो रात्रि को ठहरे। रात्रि को रुपये मेरे पास थे। भु जारी ने और इसने मिलकर मार दिया और रुपये ले आये। तो मेरे को मारकर यह आया है।

वे लोग पास मे बैठे इधर-उधर देखने लगे कि बात तो ठीक दीखती है। यह उस समय गया था बम्बई (कर्जा था)। पीछे जल्दी लाकर उतार दिया तो आश्चर्य आया कि इतना जल्दी कर्जा कैसे उतारा ? तो वह हम लोगो के था ही। बात मिल गई। वह बोला इस वास्ते मैं आया हू बदला लेने के लिए। इतना रुपया इसका खर्च हो गया है मेरे जन्म मे, इतना विवाह मे और इतना कुछ बाकी रहा है। एक बार और आऊँगा। अब ये रोवे, अब रोने से क्या हो ? ऐसा बदला लेने वाला लडका था वह। पास मे बैठे लोगो ने पूछा—इसने तो इतना अन्याय, अत्याचार किया पर इस वणिये की बेटी ने क्या खराब काम किया जो यह विधवा हो गई ? गुस्से मे आकर बोला, यह वही रांड भु जारी है। दोनो ने मिलकर मारा था मेरे को, अब रोती रहेगी उम्र भर। उसका बाप बोला कि यह सन्निपात मे आ गया। सन्निपात मे आने पर बादी मे बकता है। यह ऐसे ही बकता है, प्रलाप करता है। वायु का जोर है। उसने कहा कि 'वायु का जोर नही है मैं सन्निपात मे नही हू'। अमुक गमुक

सेठ की हवेली के दक्षिण की तरफ चार चोर भीत फोडकर भीतर घुस रहे हैं और वे चोरी करेंगे। जाकर देख लो, अगर यह बात सच्ची तो मेरी बात भी सच्ची। वह बात झूठी तो मेरी बात भी झूठी। उस समय तो वहाँ कोई गया नही। बात सबके सामने हो गई और वह मर गया। लोगो ने सुबह देखा की बात सच्ची है। भीत तोडी हुई है चोरी हो गई तो यह बीती हुई घटना है भाई। यहाँ जो काम करते हो राई-राई का लेखा होगा।

जब हक पूछे हिसाब माही तब लेखा दिया नही जायगा रें।
सेवग साहब सो चोर जम के हाथ बिकायगा रे।

शीघ्र चेत करो! मौत नजदीक आ रही है।

यह दशा होगी। इस वास्ते भाई ये किये कर्म जरूर भोगने पडते है। आपको इस जन्म मे कर्म बिगडने की एक बात बताई, सच्ची घटना है। ऐसी घटनाएँ मैंने सुनी है। ऐसा होता है और भोग भोगना पडता है। इस वास्ते मनुष्य को बडी सावधानी रखनी चाहिए।

डरते रहो यह जिन्दगी बेकार न हो जाय।
सुपने मे किसी जीव का अपकार न हो जाय॥

पाप अन्याय करके नरको की दुखो की तैयारी कर लेना, कितनी बडी हानि की बात है। मानव शरीर मिला भगवान की कृपा से। प्रभु की प्राप्ति कर लो, तत्त्व ज्ञान प्राप्त कर लो, जीवन्मुक्ति कर लो, मुक्त हो जाओ—ऐसा सुन्दर मौका मिला है। ऐसे मौके को खोकर के पाप संग्रह कर लिया।

'सा हानि तद् महत् छिद्र साचान्ध जड मूढता।
यन्मुहूर्तंक्षरण वापि वासुदेव न चिन्तयेत् ॥

जिस क्षरण मे मुहूत मे भगवान का चिन्तन नहीं हुआ यह बडी हानि है। 'महत्र छिद्र' बडी गल्ती हुई, 'अन्धता' मूढता-बडी भारी नीची से नीची बात है कि भगवान् का चिन्तन नही किया। भगवान् के चिन्तन के लिए, उस तत्व की प्राप्ति के लिए ही मानव शरीर मिला है। यह धन कमाने के लिए, भोग भोगन के लिए शरीर नही है। जैसा बाल्यावस्था मे ब्रह्मचर्याश्रम है, वह केवल विद्याध्ययन करने के लिए है। उम्र भर मे वह *विद्याध्ययन का मौका है ऐसे चौरासी लाख योनियो मे एक* ब्रह्म विद्या का अध्ययन करो। उसके लिए यह मानव शरीर है। उस मानव शरीर को एसे ही खो देना, कितनी बडी हानि की बात है। और वह समय है आपके पास। अभी हम जी रहे हैं।

अभी धौकनी चल रही है आँखे टिमटिमा रही है। अभी चेत करे तो अभी काम कर सकते है। कितना कर सकते है कि पूरा का पूरा। भगवदगीता कहती है मूर्ख से मूर्ख परमात्मा की प्राप्ति कर ले। पापी से पापी हो तो परमात्मा की प्राप्ति कर ले। थोडे से थोडे समय मे प्राप्ति कर ले। ये तीनो बात याद कर लो। आप योग्य नही है, पढे लिखे नही है, महान् मूख हैं तो परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है। भगवान् ने दसवें अध्याय मे कहा 'मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्त परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्य तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥
(गीता १०/६)

मेरे मे तो मन लगा दे और मेरे लिए ही जीवन धारण कर। प्राणो का उपयोग मानो भगवान के लिए ही हम जीते है और कोई काम नही करना है। न सग्रह करना है न भोग भागना है। यश, प्रतिष्ठा, मान कुछ भी प्राप्त नही करना है। भगवान् को प्राप्न करना है। ऐसे विचार करके 'मच्चित्ता मद्गत प्राणा बोधयन्त परस्परम्' आपस मे मिले तो भगवत्सबधी बात चल दें, भगवत्सबधी बात ही सुने, वही बात छेडे। **कथयन्तश्च** मा नित्य सुनने वाले हो तो मेरी बात ही कथन करे। औरा को सुनावे। '**तुष्यन्ति च रमन्ति च**' इसमे ही सन्तोप लाभ करते हैं। जितना समय भगवच्चरणो मे बीत गया। भगवान् के चरणो मे समय लगा वही सफल है। **जो दिन जाय भजन के लेखे सो दिन आसी गिनती मे।** आपकी गिनती मे वही समय आयेगा जो भगवान् के भजन मे बीता। कौशल्या मा ने कहा राम! तुम्हारे बिना जो हमारे दिन बीतें, ब्रह्माजी उन दिनो को हमारी उम्र मे न गिनें। यह मनुष्य शरीर का समय नही है। हमारा तो समय जो रामलला सामने रहे वही मनुष्य जन्म का समय है। भजन के बिना जो समय गया वो निरथक गया, उसकी पूर्ति नही हो सकती। आज दिन तक जो निरथक समय गया है उसकी पूर्ति जन्म भर मे नही हो सकती कभी। अगर हम अब तत्त्व की प्राप्ति कर लें, भगवान् के दशन कर लें, तो भी जो समय खाली गया, वह तो हानि ही हो गई। समय खाली नही जाता तो उसी समय प्राप्त कर लेते कि नही ? तो उतना समय खाली गया उसकी हानि हो गई, उसकी पूर्ति कैसे हो ? '**गया वक्त आवे नहीं पीछा**'। आज दिन तक का समय चला गया, अवस्था चला गई, वह दिन पीछा आ सकता है

क्या ? वह तो गयी। गई नही रही हुई भी जा रही है। रहा हुआ समय भी जा रहा है।

तज के सन्तोष सठ दीनन को मोस मोस सब आने भरी खोस है।
गयो परदादे दादे पितु मातु राह जाय,
रहमे रात दिन देखे निशी डोल रहे
तोऊ नहीं होश कोउ कहे काहू करत रोष बिन जाने देत दोष है।
ओस अम्बु को सो क्षण भगुर शरीर यह,
अमर करनो चाहे यही अफसोस है।

'ओस अम्बु कोसो'—जैसे ओस का पानी कितनी देर ठहरता है। क्या कहे ? बडी दु ख की बात है ऐसे शरीर को रखना चाहते है। सब शरीरधारी ससार से मर गये पर हम तो रहेंगे ही—तो तुम कैसे रहोगे ? तुम्हारा मसाला और तरह का है क्या ? अमुक का हार्ट फैल हो गया तो तुम्हारा फौलाद का है क्या ? कितने दिन ठहरोगे भाई। उसी मिट्टी से ये बने हुए शरीर है। जिस मसाले से वे मरने वाले बने थे उसी मसाले से ये बने हुए हैं। और यह मृत्यु लोक है मरने वालो का लोक है। यहाँ सब मरने ही मरने वाले रहते हैं। ऐसे शरीर मे निश्चिन्त कसे बैठे हो ? कहाँ हो ? किस देश मे हो ?

कोई आज गया कोई काल गया कोइ जावनहार तैयार खडा,
नही कायम कोई मुकाम यहाँ चिरकाल से यही रिवाज रही,
जाग मुसाफर देख जरा तेरे कूच की नौबत बाज रही,
सिर कूच की नौबत बाज रही ।
थारे माथे नगारा बाजे मौत ना रे,
तू तो जाने छे माने मरणो नथी रे

मरणो पडसी के आज के काल।
थारे माथे नगारा बाजे मौत ना रे।

मृत्यु के दिन नजदीक आ रहे हैं भाई। आप हम यहा आकर बैठे उस समय ऊमर जितनी वाकी थी उसमे मे उतना समय हमारा बीत गया है। एक घण्टा कम हो गया है जीने मे, मौत नजदीक आ गई है। आ गई नही है आ रही है, प्रति क्षण नजदीक आ रही है और निश्चिन्त बैठे है। कौन रहने देगा यहाँ? समय आयेगा उसी क्षण चलना पडेगा।

हाकम आये हवालदार छोड नगरो,
छोड नगरी रे हसा छोड नगरी।
हाकम आये हवालदार छोड नगरो। दोय घडो ठहरो यमराजा
माया पडो है मेरो बिखरो, माया पडो है मेरो बिखरो।

तो इकट्ठी करके क्या निहाल हो जायेगा। थोडा काम बाकी रह गया। वहाँ तो एक नही सुनेगे एक, उसी क्षण चलो। फिर देरी नही होगी। वह दिन आ रहा है, उसका ख्याल ही नही है। उस ससार मे है जहाँ मौत हाती है, सबकी मृत्यु आती है और वह पता नही कब आ जाय? जनम से लेकर सौ वर्ष की उम्र तक कोई वर्ष आपने सुना कि इस वर्ष मौत का कोई भय नही है। एक वर्ष, दो वर्ष, दसवा, पचासवा कोई ऐसा वर्ष है कि अब तो निश्चिन्त रहो कि इस उम्र मे तो कोई मरता नही है। ऐसा देखा कभी। सबके लिए १०० के १०० वष मौन के लिए खुले है। वष भर मे कोई महिना आपने देखा कि यह तो मल मास लग गया है तो अब इस महिने मे मरेगा नही कोई। अमुक महिना आ गया है, ऐसा काई महिना देखा जिसमे मरता नही। वारह महिना मौत के लिये खुल्ला। महिने मे ३०–३१

दिन हाने है। कोई दिन देखा कि आज रविवार आ गया आज तो मरन की छुट्टी है। सब दिन खुले है। २४ घण्टे खुले हैं। यह नही कि इस एक घण्टा मे कोई नही मरेगा। सब मिनट सैकण्ड मौत के लिए खुले है भाई। जीने का भरोसा नहीं है मौत हरदम तैयार है। ऐसे खतरे मे है—और निश्चिन्त बैठे हैं। मानो वो काम कर लिया। जिस काम के लिए आये हो, वह काम किया की नही ? वह तो किया ही नही। फिर क्या किया तुमने ? इतना धन कमा लिया इतना यह कर लिया तो क्या काम आवेगा सा ? आज अगर मर जाओ तो क्या काम आवेगा ? जितना भजन स्मरण किया है, जितना अन्त करण शुद्ध कर लिया है वह पूजी साथ चलेगी। वह न करके और क्या किया तुमने ?

मार हो काल अचानक चपेट हि, होई घडीक मे राख की ढरी।
ये मेरे देश विलायत है ये मेरे गज ये मेरे हाथी।
ये मेरी कामिनी केलि करे नित ये मेरे सेवक हैं दिन राती।
ये मेरे मात पिता पुनि बाधव ये मेरे पुत्र अरु नाती।
सुन्दर ऐसे ही छाड चलेगो तेल जल्यो बुझी जैसे बाती ॥

अब खत्म हो गया बस। ऐसे ही उमर खत्म होने पर उसी क्षण जाना पड़ेगा। ये मेरे–मेरे कहलाने वाले काम नही आयेंगे। कोई स्नेह करने वाला है नही। थोडा बहुत कोई स्नेह करने वाला होगा तो रो देगा बस। और वो क्या करेगा ? बताओ कोई सहायता कर सकता है ? कोई बचा सकता है। हृदय से सहायता करने वाला कोई नही है। कोई हो तो करे क्या ? बस चलता नही किसी का। आज आप स्वतन्त्र हो अपनी करनी ऐसी कर लो—

कबिरा सब जग डरपे मरण से, मेरे मरण आनन्द ।
कब मरिये कब भेटिये, पूरण परमानन्द ॥

लोग तो मरने से डरते हैं मेरे मरने का आनन्द है, मौज हो गई अपने तो बस मर जाय तो ठीक है । लेना कुछ नही रहा, करना कुछ नही रहा । 'रज्जब धोखा को नहीं फल दे सूखा खेत ।" अब सूख जाय तो क्या हर्ज हुआ ? ऐसे मनुष्य शरीर को सफल बना लिया जाय तो बडी अच्छी बात है । अगर अभी करना और जानना बाकी है तो जानना स्वय के जानने से पूरा होगा । करना—उपकार करने से, दूसरो के लिए ही करने से करना बाकी नही रहेगा । अपने लिए करने से तो करना बाकी ही रहेगा, क्योकि करने से जो मिलेगा वो नाशवान् मिलेगा । वह तो खत्म हो जायेगा, फिर करना बाकी रह गया तो रहे रीते के रीते ही । करते करते उमर बीत गई पर करना बाकी तो कई जन्म बीत जायेंगे फिर भी करना बाकी रहेगा। घाणी का बैल उमर भर चलता है पर वहाँ का वहाँ ही रहता है । एक कदम इधर-उधर नही जाता—रहता है वहाँ ही । एक बार मर गये फिर जन्मो, फिर मरो । अब यह चक्कर का अन्त आयेगा कभी । वह करना सही करना नही है भाई । दूसरो के लिए करना है हमारे लिए कुछ करना नही है । 'कृतकृत्य' हो जायेंगे । परमात्मा को अगर प्राप्त नही करोगे तो प्राप्त करना बाकी रहेगा । परमात्मा की प्राप्ति होने के बाद फिर नानवाप्तमवाप्तव्य फिर प्राप्तव्य बाकी नही रहेगा ।

मानव जीवन का खास काम

तीन शक्तियाँ है—जानने की, करने की और पाने की । स्वय को जानने से आप ज्ञात ज्ञातव्य हो जायेंगे, केवल दूसरो के

लिए करने मे कृतकृत्य हो जायेंगे और भगवान् की प्राप्ति होने से प्राप्त प्राप्तव्य हो जायेंगे। सज्जनो! इनमे से एक चीज पूरी कर लो तो तीनो चीजें हो जायेगी। ऐसी विलक्षण बात है। ज्ञात ज्ञातव्य हुए तो प्राप्त प्राप्तव्य और कृतकृत्य भी हो जायेंगे। कृतकृत्य होने ही ज्ञाते ज्ञातव्य और प्राप्त प्राप्तव्य हो जायेंग। ऐसे प्राप्त प्राप्तव्य हो जाओगे तो ज्ञात ज्ञातव्य और कृतकृत्य हो जाओगे। एक करने से तीनो काम सिद्ध हो जाते हैं ऐसी बात है। उसको प्राप्त करने का अधिकार सबको है। मनुष्य मात्र उसको प्राप्त कर सकता है कारण कि यह मनुष्य शरीर परमात्मा की प्राप्ति के लिए ही मिला है। इसमे अगर नहो होगा तब कब होगा? कई लोग कहते हैं—हम तो ऐसे? हैं। तुम कैसे ही हो चाहे। परमात्मा की प्राप्ति के अधिकारी हो. ससार का अधिकार बराबर दो को भी नहीं मिलता। मिल जाय तो सर्वोपरि नही हा सकता। एक को सर्वोपरि पद मिला—दूसरा भी सर्वोपरि हो गया तो वह पद सर्वोपरि नही रहा न? धनियो मे भी सबसे बडा धनी बने तो एक हो सकता है। ससार भर मे एक धनी हो सकता है। दो हो गये तो सर्वोपरि नही हुआ। परमात्म तत्त्व की प्राप्ति होने पर सर्वोपरि हो जायगा। सभी सर्वोपरि, सब ही महापुरुष, जीवन्मुक्त, तत्त्वज्ञ, भगवत्स्वरूप। सबके सब सर्वोपरि हो जायँ, ऐसा पद मिल सकता है। कोई मूर्ख से मूख हो उसको बुद्धियोग मैं देता हूँ जिससे मेरी प्राप्ति हो जाय। देदीप्यमान ज्ञान दीपक के द्वारा उनके अज्ञान अन्धकार का नाश मैं कर देता हूँ। (गीता १०/११)। इससे बहुत जल्दी प्राप्ति हो जायेगी मेरी। पहले तो मूर्ख से मूख का बताया। अब पापी से पापी, अन्यायी से अन्यायी, दुष्ट से दुष्ट के लिए बताते हैं। भजते मा अनन्यभाक्,

उसने अब दृढ निश्चय कर लिया कि मैं भगवान् का भजन ही करू गा निरन्तर, भजन के सिवाय और कुछ नही करू गा। ससार का काम करू गा तो भगवान् की प्रसन्नता के लिये करू गा। गृहस्थ का काम करू गा तो गृहस्थ मेरा नही है ठाकुर जी का है। ठाकुर जी पर अहसान करता है कि आपका काम करता हू । आपका पालन पोषण करता हू आपके बच्चो का पालन पोषण करता हूँ। सभी मर जायें तो रोवे ठाकुर जी मैं क्यो रोवू ? मैं तो काम करने वाला हू । मेरा कोई है ही नही। काम करू गा सेवा करू गा। ऐसे अनन्यभाक् मेरा भजन करता है। पापी से पापी जब अनन्यता से लग जाता है अब पाप नही करू गा तो **'रहति न प्रभु चित चूक किये की। करत सुरति सय बार हिए की।** (मानस १/२८/५)। उसके हृदय का भाव है उसको भगवान् आदर करते है। पाप सब नष्ट हो जायेगे। पापी से पापी भी बहुत जल्दी **'क्षिप्र भवति धर्मात्मा'** देरी का काम नही। कितनी विलक्षण बात है। **'शश्वच्छान्ति निगच्छति' कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्त प्रणश्यति ॥** (गीता ९/३१)। मेरे भक्त का विनाश नही होता। पापी से पापी तथा मूर्ख से मूख थोडे से समय मे उसको प्राप्त कर सकता है **अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।** अन्तकाल मे मर रहा है, अतिम श्वास हे जा रहा है। 'स्थित्वास्या अन्त-कालेऽपि' अन्तकाल मे भी भगवान् की याद कर ले तो 'अन्तमति सो गति' उसे प्राप्ति हो जाय। थोढे से थोडे समय मे मूर्ख से मूर्ख को, पापी से पापी को, परमात्मा की प्राप्ति हो जाय, कल्याण हो जाय, उद्धार हो जाय।

यह मनुष्य जन्म सफल हो जाय उसके लिए इतना समय

दिया, साठ वर्ष तक की उम्र दी । अगर भगवत्प्राप्ति करते तो बहुत जल्दी हो जाती, पर उधर तो गये ही नही आप । यह तो किया ही नही । एक परिवार गया प्रयागराज कुंभ मेले मे । भीड ज्यादा देखकर, जगल मे बाहर ठहर गये । धनी आदमी थे पहरा लगा दिया । दूध लाना पडता गाय ही खरीद ली, रसोई बनती है, भोजन करते है, आराम से रहते है । तम्बू लगा दिये । रहे महीना भर माघ मे फिर आये पीछा । उनको पूछा कहाँ गये थे ? प्रयागराज! वहाँ त्रिवेणी नहाये कि नही ? नही, हम तो बाहर रहते थे, प्रबन्ध हमारे बहुत बढिया था वहा नौकर चाकर सब काम करते थे । वही रहते रात दिन । बडा अच्छा प्रबन्ध था सब चीज मगा लेते, सब होता था । ऐसे रहे वहाँ तो तब प्रयागराज क्यो गये ? त्रिवेणीजी देखी ही नही उसमे स्नान तो किया ही नही ।

ऐसे मानव शरीर प्राप्त किया, धन कमा लिया बेटा बेटी की शादी कर दी, मकान बना लिये, बहुत से मुकदमा मे हम जीत गये । जीत करने के लिये गये थे क्या मनुष्य शरीर मे । मनुष्य शरीर इसके लिये मिला था क्या ? सब काम कर लिये । अरे भजन किया कि नही । यह तो नही किया यह तो भूल गये और बताओ कोई कमी हो तो और सब कर लिया काम ।

एक टोली आ रही थी पूछा क्या है ? बरात है बरात जान । अच्छा तुम्हारे मे दूल्हा नही दीखता है, दूल्हा कहाँ है ? नही लाये क्या ? नही लाये सा, आपस मे पूछने लगे वह तो वही भूल गये । बडे कामो मे कोई न कोई भूल रह जाती है । बडा काम है जिसमे कसर रह जाती है । 'बींद (दूल्हा) बिहुणी जान कहो कुण काम की' सन्तो ने कहा है कि भजन नही किया

तो क्या काम किया ? मनुष्य शरीर लेकर के। एक ही भूल हो गई। बारात जा रही है बिना दूल्हा के तो रोटी भी कौन खिलायेगा ? साथ मे दूल्हा तो है ही नही। बोद (दूल्हा) तो है ही नही और बताओ। जेवर, गहना, रुपये, पैसे हमारे पास कितना है ? सब सामग्री हमारी तैयार है सा। एक भूल हो गई। बोद (दूल्हा) भूल गये। ऐसे मानव शरीर प्राप्त किया जिसमे भजन करना तो भूल गये और सब काम ठीक कर लिया। यह तो भूल हो गई। यह काम तो और जगह हो जाता। एक सुअरनी के ग्यारह बच्चे देखे हैं। यह कौनसा काम बाकी रहता। और जगह ही हो जायेगा खाना पीना सोना आदि **'खादते मोदते नित्य कूकर सूकर खर तेषामेषां को विशेषो वृत्तिर्येषा तु तादृशी ।।** यह तो वहाँ ही हो जायेगा भाई। भजन कहाँ होगा ? परन्तु इधर तो ध्यान ही नही ख्याल ही नही है। यह होश कब होगा भाई। होश होने पर क्या होगा ? समय निरर्थक न जाय, अच्छे से-अच्छे, ऊँचे-से ऊँचे काम मे समय लगाया जाय।

मानव शरीर का समय हैं सज्जनो ! यह उमर बडी भारी कीमती है। इसमे बडा भारी काम किया जा सकता है। वह समय खराब कर दिया केवल पापो मे, खाने-पीने मे, ताश चौपड मे। खेल देखते है, तमाशा देखते हैं, बाइस्कोप देख लिया, थियेटर देखने गये थे। अरे ! समय बरबाद कर दिया तुमने। क्या फायदा निकला बताओ ? आपने बहुत सिनेमा देख लिया, हमने नही देखा, दोनो का मिलान करो। क्या आपमे विलक्षणता आ गई ? क्या विचित्रता आ गई ? भोग भोगने से क्या विचित्रता आ गइ ? धन कमा लिया, भोग भोग लिया तरह-तरह

के । जिसने नहीं भोगा उसे मिलान करके देखो क्या फर्क आता है ? मेरे तो ऐसी बात आई है पहले । मूखता की बात बतावे ।

एक आदमी को देखा उनके भोग सामग्री बढिया थी । मन मे आया कि इसके तो भोग सामग्री है हमारे नही है । फिर विचार किया कि भोग भोगने वाले मे और हम न भोगने वाले मे अन्तर क्या है ? इसमे क्या विलक्षणता है ? विलक्षणता हमे मिली नही । नही तो हम भी विचार करते कुछ । नशा पता करने वालो मे देखा तो उनमे भी कुछ विचित्रता नही है । गोरखपुर मे मैंने व्याख्यान मे कह दिया था—ये नशा पता जितना करते है । अधिक से अधिक नशा करने वाला आ जाओ मेरे सामने, मेरे जितना बोल दो, मेरे जितना चलो, मैंने उद्दण्डता कर दी कि कुस्ती आ जाओ मेरे से भले ही । मैंने नशा पता नही किया, आपने बहुत किया है । आप मे क्या विलक्षणता आई ? समय बरबाद कर दिया, जीवन के बदले मे आपने हासिल क्या किया ? मानव शरीर मिला है न । मानव शरीर प्राप्त करने पर कुछ अलौकिकता प्राप्त हो जाय तब तो उसकी महिमा है ।

बडे भाग मानुष तन पावा । सुर दुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा ॥
(मानस ७/४२/७)

लब्ध्वा सुदुर्लभ मिद बहु सम्भवान्ते
मानुष्यमर्थदमनित्यमपीह धीर ।
तूर्णं यतेत न पतेदनुमृत्यु यावन्नि श्रेयसाय
विषय खलु सवत स्यात् ॥
(भागवत ११/६/२६)

एकादश स्कन्ध मे कहते हैं "सुदुलभ महान दुर्लभ"

दुर्लभ त्रयमेवतद्दैवानुग्रहहेतुकम् ।
मनुष्यत्व मुमुक्षुत्व महापुरुषसश्रय ॥

(विवेक चूडामणि ३)

भगवत्कृपा ही जिनकी प्राप्ति का कारण है वे मनुष्यत्व, मुमुक्षुत्व (मुक्त होने की इच्छा) और महान् पुरुषो का सग— ये तीनो ही दुर्लभ है । ऐसा दुर्लभ साज सुलभ करि पावा । ऐसी दुर्लभ चीज सुलभता से मिल गई । 'पाई न जेहि परलोक संवारा ।।' ऐसा समय मिल गया है, ऐसा मौका मिल गया है सज्जनो ! गीता जैसा ग्रन्थ मिल गया, अच्छे अच्छे सन्त महा-पुरुषो की वाणी मिल गई । उन लोगो ने कहा—वह मार्ग हम कुछ जानने लग गये, हमारी थोडी बहुत दृष्टि उधर चली गई । सत्सग भी करते हो तो यह करने का क्या असर हुआ ? क्या किया ? अगर इस काम मे सच्चे हृदय से नही लगे तो क्या किया ? समय मिला हुआ है वह जा रहा है । प्रतिक्षण जा रहा है ।

भजन बिना दिन जावे, अरे मन तू गोविन्द क्यू नहीं गावे ?
भजन बिना दिन जावे, दिन जावे ॥
पल पल करते छिन छिन बीते, छिन से घडी हो जावे
फिर घडी घडी करते पहर बदीती आठ पहर घुल जावे ।
भजन बिन दिन जावे । मन तू गोविन्द क्यू नही गावे ?

अब सावधान होवो, अब गई सो गई राख रही को
मनवा अजहु मान सही रे ।

पुत्र कलत्र सुमित्र चरित्र, धरा धन धाम हैं बन्धन जीव को।
बार हि बार विषय फल खात, अघात न जात सुधा रस पी को॥
आन अज्ञान तजो अभिमान, कहि सुन कान भजो सिय पी को।
पाय परतप हाथ सु जात, गई सो गई अब राख रही को॥

अब जितना समय बच गया है वह लगा दो।

> सो परत्र दु ख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताई।
> कालहि कर्महि ईश्वरहि मिथ्या दोष लगाई।
> (मानस ७/४३)

इस वास्ते भाई अभी मौका मिल गया है। अपना समय सब लगा दो भगवान् के भजन मे।

नारायण, नारायण, नारायण,

दिनाक १२ अगस्त, १९८१

।। श्री हरि ।।

प्रवचन–६

भाई-बहन उद्योग नही करते, इसमे तत्त्व क्या है ? सार चीज क्या है ? उस तरह से मैं बात बताता हूँ आप ध्यान देंगे। रुपयो की महत्ता बहुत बैठी हुई है। सब जगह ही है पर यहा कुछ विशेष देखने मे आती है। अब क्या करें ? फिर कहता हू आप ध्यान दें। ध्यान देने की बात यह है कि हमारे मन मे रुपयो की इच्छा जोरदार होगी तब रुपये सुख देंगे। ससार जो सुख देता है वह ससार कोई सुख देने का सामर्थ्य नही रखता है। हमारी इच्छा होने से ससार सुखदायी दीखता है। जिस विषय मे हमारी इच्छा नही है। उस विषय मे ससार सुख नही दे सकता। यह एकदम पक्की बात है। कृपा करके मेरी बात सुन लें। रुपयो का लोभ मन मे न हो। रुपया मेरे को मिले, ऐसी तृष्णा न हो, उसको रुपया सुख नही दे सकता।

रुपयों में सुख नहीं

सुख देने की ताकत रुपयो मे नही है आपके लोभ मे है। मेरी बात का मनन करते चले जायें। इसे समझने के लिये जितनी शका करें उतनी बढिया है। आप गहरी रीति से शका करोगे तो मेरे प्रसन्नता बहुत होगी। मेरे को आप भेंट-पूजा दे दो भोजन, कपडा दे दो, और कुछ दे दो उससे उतना मैं राजी

नही होऊगा । पक्की बात है। जितनी इस विषय मे समझोगे तो मैं बडी भारी कृपा समझूगा, मामूली कृपा नही, बडी भारी कृपा समझूगा। इस बात को समझोगे तो। सीधी बात है बिना इच्छा के पदार्थ सुख दे सकता नही कभी भी। यह आपके जचे या नही जचे, इसका तो पता नही, परन्तु बात बिल्कुल सोलह आना सच्ची है इसमे किञ्चित मात्र भी इधर उधर है नही। पक्की बात है। रुपयो मे लगे हो, हाय रुपैया ? हाय रुपैया। उसमे लगे हो। वह रुपया सुख देता है कब ? जब आपके इच्छा होती है तब। इच्छा बिना सुख नही दे सकता, रुपया। अगर सबको सुख दे तो कुत्ते को भी सुख देना चाहिये। रुपयो की थैली रख दो उसके सामने, वह पेशाब करके चला जायगा। रुपये मे ताकत है तो कुत्ते को भी सुख मिलना चाहिए। अब आप कह सकते हो कि कुत्ता तो समझता नही। परन्तु अब वह उदाहरण तो कैसे दू । सुनी हुई बात तो मै कह दू । पर आप को समझाने की मेरे पास ताकत नही है।

जिसके हृदय मे वैराग्य है, रुपयो मे राग नही है, आसक्ति नही है, प्रियता नही है—ऐसे पुरुषो को रुपया सुख नही दे सकता। अब कैसे समझाऊ बताओ। आपको वैराग्य हो तब पता लगे। बिना वैराग्य की बात भी मै कह सकता हू । मेरे कहने मे बहुत उत्साह है। आप थोडी कृपा करें। अधिक से अधिक लोभी आदमी को लो, जो रुपयों के लिए कुए मे पडने को तैयार। कही रुपये मिल जाय, बस। ऐसा अधिक से अधिक लोभी, उसको लाकर हाजिर कर दो और उसके सामने कह दिया जाय और रुपयो का ढेर लगा दो। एक-एक रुपया आप गिनते जाओ। जितने गिनोगे उतने आपके। गिनते ही जाओ।

बन्द कर दिया तो फिर बन्द हो जायगा। वह कितनी देर गिन सकेगा? आठ पहर भी नही गिन सकता।

आप कहो कि भूख लगती है, प्यास लगती है, टट्टी पेशाव लगती है। अच्छा छुट्टी दे देंगे। भोजन कर लो, पानी पी लो, फिर बैठ जाओ, टट्टी पेशाव फिर आवो, फिर बैठ जाओ। तो क्या आठ प्रहर गिन सकोगे? है किसी की ताकत? अभी मेरे पास रुपया नही है नही तो अभी आपको करके बता दू। नही गिन सकोगे। नही रह सकोगे। टिक सकोगे नही। अब तो नीद आती है तो नही भाई, नीद नही लेना। और तुम जो कुछ कर लो। नीद नही। नोद लागे तो रुपया नही मिलेगा। रुपया छोडो मत। टट्टी-पेशाब भी जाओ तो हाथ मे पकडे जाओ। भोजन करो तो भी पकडे रखो रुपयो को। पानी पीओ तो रुपयो को पकडे ही पानी पी लो। नीद मे छूट जायगा। याद नही रहेगा। रुपये छूट जाते है तो इसका मतलब आप रुपयो को नही चाहते हो! नही चाहते हो! नही चाहते हो! अगर चाहते ही हो तो रुपयो को छोडो मत।

सज्जनो! रुपयो की चाहना आपके है नही। मूर्खता से लोभ करके चाहना पैदा की गई है। यह आपका काम नही है, नही है, नही है। भगवान के साथ सम्बन्ध आपका छूट सकता नही। रुपयो के साथ सम्बन्ध आपका रह सकता नही। इतने रुपये दूर है आप से। सब भोगो से दूर हो जाते हो। अब जरा एक बात पर ख्याल करके देखो। रुपयो के, भोगो के साथ रहते-रहते आपका बल, बुद्धि, आपका स्वास्थ्य ठीक रहता है या रुपया आदि छोडकर जब नीद गहरी ले लो तब आपका

स्वास्थ्य ठीक रहता है। बताओ। विचार करके बोले तब पता लगे।

नीद आती है गहरी। उस समय पदार्थ, रुपये, भोग याद नही रहते। उससे शरीर को शक्ति मिलती है, स्वास्थ्य बढता है। मन मे, बुद्धि मे, इन्द्रियो मे स्फूर्ति आती है, स्वच्छता आती है, निमलता आती है ताकत आती है। इनके सग से ताकत का नाश होता है। इस बात को खूब विचार करो आप। आप को खुराक रुपये, पैसे नही दे सकते, जितना इनका वियोग आपको शक्ति देगा। रुपयो का, ससार के पदार्थों का, व्यक्तियो का वियोग आपको जो सुख देगा—वो सुख इनका सयोग नही दे सकता। मैं बडे जोर से कहता हूँ। मेरे से बुद्धिमान आदमी एकान्त मे मिलें और बात करे। हमारी बात कभी फेल हो नही सकती। इतनी पक्की और सच्ची बात है। ठोस बात है। हमारे पीछे भगवान् शास्त्र, धम, ऋषि मुनि सब हमारे साथ हैं। आपके साथ लोलुप हैं। नारकीय जीव है। और कोई नही है आपके साथ।

अनुभव का आदर करो

गाढी नीद मे क्या होता है? रुपये छूटते हैं। रुपये याद नही रहते। परिवार याद नही रहता। भोग याद नही रहता। गाढ नीद आ जाती है। अन्त करण स्वच्छ होना है। इन्द्रियो मे, मन मे, बुद्धि मे, सबमे शक्ति आती है। स्फूर्ति आती हैं, बल आता है। इधर इनके सयोग से शक्ति नष्ट होती है। पतन होता है। रोग पैदा होते हैं और गाढी नीद से रोग दूर होते हैं। पदार्थों के छूटने से जो सुख है, पदार्थों के साथ मिलने से वह

सुख नही है । यह आपका अनुभव है। इतने पर भी आप छोडते नही, अब क्या बतावे ? जहा इनका सग छूटा कि वहा परमात्मा का सग है । परन्तु वह नीद मे है, बेहोशी मे है । बेहोशी का सग भी शाति देने वाला है । होशपूर्वक सग हो तो निहाल हो जाओगे आप । यह कहते हो कि अनुभव नही है । पर आपको अनुभव है इस बात का । पर आप अनुभव का आदर नही करते हो । इस तरफ ध्यान नही देते है । कृपा करो, ध्यान दो थोडा-सा । एक कल्पना करो ।

मेरे मन मे लग गई कि यह घडी हमारे को मिल जाय—ऐसा विचार हुआ । ऐसा विचार होने से क्या हुआ है ? कि यह घडी मेरे मन मे बस गयी, अब मन से छूटती नही । चलते फिरते याद आती है कि घडी एक बढिया हमारे हाथ आ जाय। ऐसी मन मे बस गई, अब घडी मिल गयी । किसी रीति से घडी मिल गई । मिलते ही सुख होता है, घडी मिल गयी । मिलते ही सुख क्या हुआ ? कि भीतर के मन से घडी छूटी है घडी के मिलने का वह सुख नही हुआ है सज्जनो ! मन से घडी निकली है उसका सुख हुआ । इस बात को आप समझे। कृपा करें इतनी मेहरबानी करें । ध्यान दें ।

मन से घडी की निकल गई, सुख हो गया । घडी मे अगर ताकत हो तो इसको पकडे रहो, हरदम अगर सुख हो जाय । शर्त कर लो, होड लगा लो, कभी सुख नही हो सकता । घडी मिलने से ही अगर सुख होता तो तो घडी को पकडे ही रहो, सुख होना चाहिए । कभी नही होगा । मन से घडी निकलते ही सुख होगा । मेरे मन से जो बात निकले वही बात है । मारवाडी मे ऐसी कहावत है—तू भी थारे मन री काढ़ ले—निकाल ले

मन की । मन की निकालता है और कुछ नही है ससार का सुख ।

जो आप रहते हो ससार से सुख हमे मिलता है । भगवान् से सुख मिलता नही । यह गलत है आपकी वात । ससार का सुख मिलता कहा है ? मन की निकलती है । वह सुख दीखता है । वियोग मे सुख है रुपयो के वियोग मे सुख है, घडी के वियोग मे सुख है, पदार्थों के वियोग मे सुख है । इनके मिलने से सुख नही होता । आप विचार नही करते । मूर्खता के कारण मान लेते हो कि घडी मिलने स सुख हुआ । घडी मिलने से सुख नहीं हुआ है । घडी भीतर से निकल गई, उसका सुख हुआ है ।

आपको ससार के वियोग मे सुख है । ससार के सयोग मे सुख नही है । बिल्कुल पक्की वात है । आप समझें चाहे न समझें । इस वात मे फर्क नही है । हमने अच्छे अच्छे पुरुषो से सुना है । अच्छी-२ पुस्तको मे पढा है और विचार मे आती है मेरे ये वात । इसमे सदेह नही है । जिस किसी चीज के मिलने से सुख मानते हो यह बिल्कुल गलत है, बिल्कुल गलत है । जिसका आपके मन मे ज्यादा आग्रह है, प्यार है, स्नेह है, राग है, वह चीज मिलने से मन से निकलती है । उसका सुख होता है । वस्तुओ का सुख नही होता । अगर वस्तु का सुख हो तो वस्तु पास मे रहने से दु ख नही रखना चाहिए । उन चीजो के रहते हुए ही दु ख होता है तो उस चीज मे सुख कहा है ?

सत्सग से शाति

परमात्मा के मिलने पर दु ख कभी भी आयेगा ही नहीं ।

आपको ही नही परमात्मा के सुख मे सुखी रहने वालो के दर्शनो से शांति मिलेगी । रुपयो के, भोगो के याद करने से जलन पैदा होगी । जितना-२ इनका चिन्तन होगा उतनी हृदय मे आग लगेगी । अशांति पैदा होगी । ह्रास होगा, पतन होगा, रोग होंगे, शोक होगा, चिन्ता होगी, भय होगा, उद्वेग होगा । मार आफत ही आफत होगी । भगवान् की याद करते ही शाति आनन्द प्रसन्नता, मस्ती आवेगी—भीतर से ।

कचन खान खुली घट माँही । रामदास के टोटो नाहीं ।

भीतर से आनन्द की खान खुल जायगी । ऐसे पुरुष के कही दशन मिल जाय तो आप को शाति मिलेगी, आपका पाप कटेगा । महान शांति मिलेगी वह किसी भोग से नही मिल सकती । शास्त्रो मे आता है—**येषा सस्मरणाद् पूत, सद्यशुद्धयति वै गृहा ।**

उन महापुरुषो के याद करने से घर के घर पवित्र हो जाते है । जिनके हृदय मे भोगो का राग नही है, पदार्थो के गुलाम नही है, भोगो के, रुपयो के दास नही है – ऐसे पुरुषो के दशन से शाति मिलती है, पाप दूर होता है । कोई भोग नही हैं, न शब्द है, न स्पश है, न रूप है न रस है, न गन्ध हे, न मान है, न बड़ाई है न आराम है—ये आठ चीजे खेचने वाली है । शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये पाच विषय और मान, बडाई और आराम ये तीन—कुल आठ है । इन आठ चीजो से सुख होता है । खूब याद कर लो ।

सत्सग मे शाति मिलती है कि नही । आपने अगर सत्सग किया हे मन लगा करके, तो आप नट नही सकते । सच्चर्चा

होती है, रामायण का पाठ हो रहा है, उस पाठ मे क्या रुपये मिलते है ? क्या भोग मिलते है ? क्या मान मिलता है ? क्या बडाई मिलती है ? क्या शरीर मे आराम ज्यादा मिलता है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध मे मे क्या है ? आठो बातें नही है और सुख मिलता है तो वह किस चीज का सुख है – बताओ ?

कहते है—भगवान् का सुख मिलता नही। आप उसका तिरस्कार करते हो, अपमान करते हो, मिले बिना कोई रह नही सकता। पारमार्थिक सुख के बिना कोई जी नही सकता। जीने का केवल अगर कोई स्रोत है तो परमात्मा है। उसी से ही आप जी रहे हो नही तो मर जाओगे। आपकी दृष्टि भ्रष्ट हो गई बुद्धि भ्रष्ट हो गई। अकल को बेच दिया, रुपयो मे, टक्को मे। अकल का टका हो गया। कैसे बतावे ? अब बोलो, आपने रामायण का पाठ किया सामने, आपने देखा। उस रामायण पाठ मे रुपये मिले है क्या ? फिर भी लोग खिचते हैं, पढते हैं, क्या सुख है यह। परमात्मा सुख मिला नही तो यह क्या मिला है ?

राम, राम, राम, कितनी दुर्दशा हो रही है उन चीजो की दासता मे। कष्ट भोगना पडता है, अपमान भोगना पडता है, निंदा भोगनी पडती है, दु ख भोगना पडता है। चोरासी लाख योनि का दु ख भोगना पडता है और यहा रहते हुए भी कितना अपमान, कितनी निंदा, कितना नीचा देखना पडता है। भीतर से गरज चली जाय तो महाराज—चाह गयी चिन्ता मिटी, मनवा बेपरवाह। जिनके कुछ नहीं चाहिए सो साहनपत साह।। बादशाहो का बादशाह है वो। जिसके भीतर गुलामी नही है।

ऐसी बात मे सन्देह नही है केश जितना भी–रतिमात्र सन्देह नही है। ऐसी मच्ची बात है।

आप चेतन होकर, परमात्मा के साक्षात् अश होकर नित्य निरतर रहते हो। बालकपन से आप वही हो, पदार्थो का आपके साथ सयोग हुआ वियोग हुआ, उत्पन्न हुआ और नष्ट हो गया। ऐसा है फिर भी उत्पन्न और नष्ट होने वालो की गुलामी मे लग रहे हो। कुछ होश आना चाहिए न। आप वे हो रहते हो, ये पदाथ बदलते है। जो बदलते है उनके पीछे पडे हो। वे साथ रहते नही। मर जाओगे तो साथ रहेगे नही ?

जिन्दगी भी साथ मे नही, बालकपन मे खिलौनो से बडा सुख मिलता था। अब खिलौना कितना दुख देते हैं ? जरा बात याद करो। कागज के टुकडे—काले, पीले, सफेद, कन्कड उनको पकड लेते थे, उनसे सुख लेते थे। आज वो सुख दीखता है क्या ? ऐसे ही आज इन पत्थरो के टुकडो—हीरे, मानिक, पन्ना, आदि रतन मे इन कागज (रुपयो) मे फंसे हो। आप क्या जान सकते हो ? माया रो मजूर बन्दो का जाने बन्दगी— वह क्या जाने इस बात को। थोडा सा विचार करो तो आपके लिए असभव नही है। कारण कि आपने डेढ महिने से ऊपर सत्सग किया है। सत्सग करके देखा है, उन भाई बहिनो को समझाना कठिन नही है। जिसने कभी सत्सग किया ही नही, उसको समझाना कठिन है। इस वास्ते मारवाडी मे कहावत है—'मूर्ख ने मारणू सौरो समझावणू दोरो' वे नही समझ सकते इस बात को।

शका — परमात्मा का सुख मिले तो छोड दें।

समाधान —अभी व्याख्यान के बाद सा-दो सो, पाच सो, तयार हो जाना कि हम पारमार्थिक सुख जानते ही नहीं। निद्व करना इस बात को। सिवाय पारमार्थिक बात के यहा क्या मिलता है, बताओ ? जिसमे माताए वहने भागी भागी आती है, भाई लोग भागे भागे आते है, सुनते है, बटते हैं। क्यो आते हो ? क्या ससार का सुख मिलता है ? अब मैं समझाने मे अपने को इतना समझदार नही मानता हूँ। परन्तु मेरे समझ मे आती है कि ससार का जो सुख मिलता है सब का सब परमात्मा का ही है। ससार का है ही नही। जैसे यह चीज मिल जाय तो सुख हो जाय। सुख क्यो हुआ कि चीज मिलते ही मन से वह निकल गई। अब वह निकल गई तो परमात्मा रह गये। ससार छूटा और परमात्मा पहले से तैयार। परमात्मा छूटता नही है। परमात्मा हरदम रहते हैं। आप विमुख होते हो। परमात्मा विमुख नही होता है। आप पदार्थो की चाहना करते हो इससे परमात्मा मे विमुख होते हो और इस वास्ते रोते हो।

जहा चीज मिली, मन से छूटी तो चट परमात्मा तैयार। वह जो आनन्द मिलता है वह परमात्मा का है। इसका नही है। आप कहते हो कि यही है। कुत्ता हड्डी चबाता है और हड्डी भीचने से दात टूट जाता है। मुख मे से खून निकलता है। वह समझता है हड्डी मे से आ रहा है। ऐसे आप पदार्थो से लेते हैं, हड्डी चूसते हो। आप सोचते हो कि यह सुख पदार्थो से आ रहा है ? यह नही आ रहा है। इसमे है ही नही रस। आवे कहा से ? अगर इनमे रस होता तो अच्छे अच्छे बुद्धिमान् विरक्त त्यागी हुए है। वे सफा मूख थे क्या ? जो सफा छोड दिया परवाह नहीं की। बेसमझ थे सफा ?

परमात्म सुख मे स्वतन्त्रता

राजा भर्तृहरि हुए हैं उज्जैन मे। बहुत अच्छे विद्वान् थे। बडे नीतिज्ञ थे। उन्होने कई तरह के काम किये हे। राज्य किया है और भोग भी भोगे है। महारानी के साथ रहे तो भाई ही राज करता था। वे तो महलों मे ही रहते हरदम। ऐसे भोग भोग कर भी देखे है। परन्तु न रुपयो के साथ टिके, न राज्य के साथ टिके, न भोगो के साथ टिके। वैराग्य हुआ तो वहां से खसके ही नही। गये नही कही भी। यह सुख मिल जायगा, तब आपको पता लगेगा। स्वतन्त्र सुख है बिल्कुल, किसी की पराधीनता नही है। ससार का सुख कभी स्वतन्त्रता से मिल ही नही सकता। मैं जोर से कहता हूँ। कोई भाई वहा इसको सिद्ध करना चाहे तो करे। किसी न किसी के सग से सुख मिलेगा। अकेला स्वतन्त्रता से सुख नही ले सकता। परमात्मा के सुख मे परतन्त्रता है ही नही। **पराधीन सपनेहु सुखु नाहीं**' ससार का सुख बिना पराधीनता के मिलता ही नही। कोई सिद्ध करना हो तो करो। पराधीन होने से ही सुख मिलेगा। भोगो से मिलेगा तो भोगो के पराधीन होगा। किसी व्यक्ति से सुख मिलेगा तो व्यक्ति के पराधीन होगा। रुपयो से सुख मिलेगा तो रुपयो के पराधीन। राज्य से मिले तो राज्य के पराधीन। पद से मिले तो पद के पराधीन। बिना पराधीनता के ससार का सुख नही मिल सकता। परमात्मा मे आप चलोगे, इसमे आप लग जाओगे तो स्वतन्त्रता से मिलने लगेगा।

पहले इसमे भी सत्सग, स्वाध्याय, सत्पुरुष, सत्शास्त्र, आदि के सग से पता लगेगा। कारण कि सग मे ही सग मे आप रात-

दिन रहे हो। इस वास्ते आपको असगता का पता नही है। इस वास्ते सग से छूटने के लिये सग करना होगा। सर्वथा असगता हो जायगी तो किसी की जरूरत नहीं है।

सङ्ग सर्वात्मना त्याज्य, सचेत् त्यक्तु न शक्यते।

सद्भि सहकर्त्तव्य, सतां सङ्गो हि भेषजम्॥

'सङ्गोहि बाध्यते लोके'— बधता है वह जो सगी होता है। सग यदि छोड नही सकते तो सन्तो का सग करो। 'सतां सगो हि भेषजम्' वह सग छुडाने मे औषध है दवाई है। रोगी को दवाई लेनी पडती है। रोग मिट जायगा फिर किसी के सग की जरूरत न ी है। 'कचन खान खुली घट मांहीं' भीतर से ही आनन्द आने लगेगा। जिसे शीत ज्वर चढता है तो भीतर से आता है रोगटे खडे हो जाते है। वह भीतर से निकलता है। बाहर की रजाइयो से बन्द नही होता। भीतर से गर्म गर्म पानी पिला दिया जाय तो शान्त मिलेगी। ऐसे भीतर से आनन्द आने लगता है भीतर से।

एक सन्त के पास कोई गया। बाबाजी अकेले ही बैठे हो! अरे भाई, तेरे आने से ही अकेला हो गया। इतनी देर तो अकेला नही था। ससार की बात याद आते ही भगवान् छूट जाते हैं। वह ससार मिल कर क्या निहाल करेगा? बताओ। ससार की याद आते ही आफत आ जाती है। ससार का चितन करते ही दु ख आयेगा। सताप आयेगा। जलन होगी। आफत होगी। अभाव का अनुभव होगा। यह नही है यह नहीं है, यह नही है। नही का अनुभव होगा आपको। थोडा सा विचार कर आप देखे। आपके पास मे जितनी सामग्री है मेरे पास मे उसकी

अपेक्षा कुछ सामग्री नही है। आपके भाई बन्धु है, कुटुम्बी हैं, वेटा है, वेटी है। आपके इतने है। मेरे अभाव ही अभाव है। न छोरा है, न छोरी है, न रुपया है, न घर है, न कुछ और ह, न हमारे पास मे कोई पद है।

अगर आपकी तरह मै चाहना करू तो रात दिन रोऊ। मेरी अपेक्षा तो आप वडे भारी ठीक हो। एक भाई ने कहा था—स्वामी जी, पू जीवादी का नाश कैसे हो? मैंने कहा—पू जीवाद का नाश चाहते हो तो पहले तुम मेरे समान बन जाओ। एक पैसा भी अगर तुम्हारे पास ह तो मेरे से तो तुम पू जी वाले हो कि नही। पू जीपति हो कि नही। लाखो करोडो रुपया पू जा है तो एक पैसा पू जी नही है क्या? अगर पू जीवाद का नाश चाहते हो तो पू जी का त्याग करो। नही तो पू जीवाद का नाश नही चाहते, पू जी का परिवर्तन चाहते हो कि उनकी पू जी मेरे पास आ जाय। मु ह मे से लार टपकती है धनी आदमियो को देखकर। पूँजीवाद का सिद्धान्त कहा सोचते हो?

इनके पास धन है वह मेरे पास आ जाय। नियत खोटी है तुम्हारी। अगर पू जीवाद खराव है तो पैसा छोड दो। पू जी हम नही लेंगे। हम तो पू जीवाद खराब समझते है, ऐसा कहना नियत खोटी दिखती है। पदार्थो के मिलने से सुख होवे तो आपको बहुत वडा भारी सुख मिलना चाहिए। और वडा भारी दु ख मेरे को होना चाहिए। क्योकि पदार्थो का अभाव है। वहुत सी चीजे नही है मेरे पास।

सर्वत्र परमात्म सुख

भाई ! पदार्थों के अभाव से जो सुख होता है वह सुख परमात्मा का है । भोगने से जो सुख होता है वह परमात्मा का है । परमात्मा के बिना सुख है ही नही । ससार से विमुख होने से ही सुख होता है । ससार से ससार का सुख नहीं होता । पर थोडी सी बारीक बात है । किसी भोग को भोगो । उससे अलग होओगे तब सुख होगा । अलग होते ही सुख होता है । भोजन का सुख भी कब होगा ? भोजन की भूख जारदार लगी है उसके मिलने से सुख होता है तो एक-एक ग्रास लेने से भूख मिटती जाती है और सुख चला जाता है । सुख तो अभाव के अनुभव मे हुआ । उसे भोजन मे सुख कहा है ? भोजन कर लिया, अब तृप्ति हो गयी । अब नही चाहिए बस । अब दु ख मिट गया । दु ख मिट नही गया है । खा नहीं सकते । थक गये हो । खाने की ताकत मिट गयी आपकी । किसी भोग को भोगते भोगते थक गये उस थकावट को कहते हो सुख मिल गया ।

आयो चौरासी भुगत कर, फिर जावण ने त्यार' ।

ससार के भोग से थकावट होती है उसको आप सुख कहत हो । भोगने की शक्ति नष्ट हो गयी अब सुखी हो गये साहब । फिर शक्ति आ गयी । फिर दु खी हो गये । जब सुखी हो गये फिर दुबारा क्यो जाओ वहा । परमात्मा मे सच्चे हृदय से लगने वाले फिर लौटकर नही जाते । भर्तृहरि फिर नही गये । जिस दिन वैराग्य हुआ और लग गये तो फिर लग ही गये । भर्तृहरि की दो तरह से मैने कथा सुनी है । एक तो अमर फल 'स्त्री को दिया' और एक दूसरी कथा और सुनी है । कहा तक सच्ची है भगवान् जाने । सुनी हुई जरूर है ।

राजा भर्तृहरि की कथा

राजा की अपनी रानी मे बहुत आसक्ति थी। बहुत ही ज्यादा, पड़े रहते रनिवास मे। इतनी ज्यादा आसक्ति थी। वह मर गयी। उसके मरने पर बडा भारी दु ख हुआ। उसको जलाने के लिए गये तो मै तो आप साथ ही जलू गा। सती होतो है ऐसे मैं 'सता' होऊगा। ऐसी स्त्री मर गई, मैं साथ मे मरु गा। बड़े-बड़े एहलकार, मन्त्री आदि समझाते हैं। नही साहब ऐसी स्त्री चली गयी। मै उसके बिना जी नही सकता। साथ ही होम कर दू गा अपने को। इतने मे गोरखनाथजी आ गये। लोगो ने कहा सन्त आ रहे है। तो कहा—थोडा ठहरो बाबा, वो हाडी हाथ मे लिये आ रहे थे। थोडे पास मे आये कि हाडी हाथ से छूट गयी, हाठी फूट गयी और अब लगे रोने जोर जोर से। हाय मेरी हाडी, हाय मेरी हाडी, रोवे जोर-जोर से। राजा ने पूछा क्या बात है ? तो कहा—एक साधु दु खी हो रहा है। तो भर्तृहरि ने कहा—ठहरो भाई। अभी तो मै जीता हू । मेरे राज्य मे साधु, गौ, ब्राह्मण दु खी हो, यह मै नही सह सकता। मै जाऊगा। जाकर के पूछा बाबाजी क्या हुआ ? वे लगे जोर जोर से रोने। हाय, हडिया ! हाय ! हडिया ! बाबाजी क्या हो गया ? क्या क्या हो गया ? दीखता नही, अन्धा है तू ? मेरी हाडी फूट गयी। ऐसी क्या हाडी थी। तुम क्या हाडी समझते हो ? कैसी क्या थी ? तुम्हारे को होश नही। तुम समझते नही। हमारे तो सर्वस्व हाडी ही थी। वह आज फूट गयी बस। अब क्या करू ? और रोवे जोर जोर से।

क्या हुआ महाराज ? देखो। हमारे रसोई घर भी यही था,

पहिडा पानी का भी यही था। इसमे ही रोटी खाता था। इसमे ही पानी भर लेता था इसी से शौच जाया ता। इसी से स्नान कर लेता था। अब स्नान घर गया, हमारा रसोई घर गया, हमारा जलपात्र गया, हमारा भोजनपात्र गया। कितना नुकसान हो गया। बहुत बडा नुकसान हो गया। हाडी फूट गयी। वर्षा आती तो कपडा इसमे रख देता उल्टी कर देता। सब सूखा का सूखा रह जाता। वर्षा बन्द होते ही पहन लेता। हमारा घर का घर नष्ट हो गया। अब बताओ, काहे मे रहूगा मै। कोई पुस्तक है, कपडा है भीग जायगा। इसी को सिरहाना देकर सो जाता खूब मौज से। अब वह सिरहाना कहा से लाऊ ? ऐसे कर कहने लगे। मेरा तो सब कुछ चला गया। घर बार मकान, ओढना, बिछौना सबका सब खत्म हो गया। सर्वस्व नष्ट हो गया।

राजा ने कहा—आप रोते क्यो हैं ? हाडी दूसरी मिल जायगी। दूसरी नही, मेरी बढिया हाडी फूट गयी। उमर भर की साथी बढिया हाडी फट गयी। महाराज ! दूजी हाडी मिल जायेगी, यो रोते क्या हो ? तो तू रानी के लिए रोता है। क्या और सब रानिया बाझ हो गयी ? अब दूसरी मिलेगी नही क्या ? मै तो रोने से काम चलाता हू। तू तो जलने को तैयार है। मेरी हांडी फूट गयी ऐसे ही तेरी एक हाडी फूट गयी। तो फिर रोवे क्यो बता ? तेरे मकान तैयार, तेरे कपडा तैयार, तेरे रसोई तैयार तेरे स्नानघर तैयार। तेरे सब चीज तैयार है। मेरा ' सर्वस्व नष्ट हो गया। तेरे तो एक लुगाई मर गयी। मेरे ~ समझाता है। राजा को अकल आ गयी कि बात तो ठीक है।

अब राजा ने कहा—'अब नही रोयेंगे बस, अब न सत्ता होवेंगे। तुम लोग जाओ, तुम्हारा राज्य करो। अब महाराज। मैं तो आपके साथ रहूगा। चलो। अपने यहा बडा दरबार है। क्योंकि मागेंगे और खायेंगे। कौनसा बडा खर्चा लगता है। बिल्कुल आजादी है ठीक तरह से। रोटी मिलती है, कपडा मिलता है, सब मिलता है। राजा फिर साधु हो गये और चल दिये।

भर्तृहरि कहते हैं—रात्रि को आग सुलगती है। घास पर रहने वाले जन्तु स्वाहा हो जाते हैं, पता नही है उन्हे कि हम जल जायेंगें, मर जायेंगे। इस वास्ते वो आग मे पड जाते है। मच्छली को पकडते है तो काटे मे माँस का टुकडा डालकर पकड लेते हैं। वह काटे को निगल जाती है। काटा अड जाता है तो वह मर जाती है। मछली को ज्ञान नही है कि इसको खाने से मर जाऊगी। ये कीट-पतग, मछली, जानवर बेचारे अनजानेपन से मर जाते है। आप जो जितने सुख भोगते हो। उसमे कितना दुख होता है। कितना सन्ताप होता है। कितनी जलन होती है? कितनो से छिपाव करना पडता है? कितना झूठ कपट, बेइमानी करनी पडती है? और कितनी कितनी आफत भोगनी पडती है? जगह जगह मामूली आदमी, जिनसे बात नही करनी पडे, ऐसे आदमियो की गुलामी करनी पडती है आपको, रुपयो के लिये। जिनका मुडा देखने से पाप लगे। ऐसे आदमियो की गुलामी करनी पडती है। बोलो गुलामी करनी पडती है कि नही। रुपया कमाने मे?

ऐसे दुखो को देखते हुए भी हम लोग जानकार हैं अच्छी तरह से, अहो। मोह की बडी भारी महिमा है जो मूढता के

बीच इतने फसे हुए है कि कभी होश नही आता है। दु खो के महान् घर। दु खालयमशाश्वतम्'—ससार को दु खालय कहा है। औषधालय, पुस्तकालय, वस्त्रालय होता है ऐसे दु खालय है। वह मोह के कारण से छूटती नही। दु ख पा रहे है फिर जा रहे है। मिर्ची खाते हैं। आख मे नाक मे पानी पडता है, सिसकारे करते हैं फिर भी खा लेते हैं। अब क्या वहम रह गया बाकि ? अब छुडाओ कोई, मिर्ची खाने वाले को। छोड नही सकता, पसीना आ जाता है शरीर का। अब बोलो कैसे समझावें ? 'जानन्तोऽप्येते विपज्जाल जटिलान्' भोग मे महान विपत्ति ही विपत्ति भरी हुई। ऐसे को भी छोडते नही।

सुख केवल भगवान् की ओर

गधे की दशा है भाई! लगे दुलती, फिर भी उधर ही चले। तिरस्कार, अपमान, दु ख सताप तरह तरह से सहते हो। फिर भी थोडा लोभ, कुछ कुछ मिल जायगा। मिल जायगा माजना। क्या मिल जायगा ? आनन्द ही आनन्द भगवान् की तरफ चलो तो। गृहस्थ मे बैठे हुए भी आप भगवान् की सेवा करो, कुटुम्ब भगवान का है, सब भगवान के हैं। ऐसे सेवा करो तो निहाल हो जाओगे। वही कुटुम्ब वही आप। वही घर आपका। केवल भाव बदल दो कि भगवान का घर है। वे भगवान के जन हैं। भगवान् की आज्ञा से सेवा करनी है। कोई मर गया तो मर गया। सेवा करनी है उनकी। घर मे बैठे मौज हो जायगी। मौज कब होगी। जब आपके हृदय की गुलामी मिट जायगी, लालसा मिट जायगी। हृदय में गुलामी रहे, भोगो की, पदार्थो की, रुपयो की तो कभी सुख नही मिलेगा। साधु बाबा बन जाओ भले ही। वही बैठे-बैठे रोओगे कि रुपया नही

मिला, आदर नही मिला। यह जब तक गुलामी रहेगी तो साधु हो, चाहे गृहस्थ हो, पढा लिखा हो, चाहे अपढ हो। कोई फर्क नही है। जब हृदय से निकल जाय यह तृष्णा फिर मौज ही है। आनन्द ही आनन्द है। इसके त्यागने मे आप स्वतन्त्र हो। परतंत्र नही हो। सग्रह मे तो परतन्त्र हो पर हृदय से मोह छोडने मे आप पराधीन नही हो। आप अपात्र नही हो। आप अयोग्य नही हो। आप साक्षात् परमात्मा के अश हो। नित्य निरन्तर रहने वाले आपने नित्य निरतर वियुक्त होने वाले की गुलामी स्वीकार की। बताओ, इसमे झूठ है क्या ? नित्य निरतर वियोग हो रहा है आपके साथ शरीर का, पदार्थों का, कुटुम्बियो का घर का निरतर वियोग हो रहा है। आप नित्य निरतर रहने वाले हो। आप नष्ट नहीं होने वाले। ऐसे नष्ट नही होने वाले। उनके गुलाम बन गये। शर्म नही आती। अक्ल नही आती क्या ? कुछ सोचते नहीं।

नित्य आप रहने वाले अनित्य के आप गुलाम हो गये। अनित्य वस्तुओ का उपयोग करो। धन कमाओ, अच्छे काम में लगाओ। उत्साह से प्रसन्नता से पर मोह मत करो। रुपयो को भी सभाल कर रखो। हिसाब करो पैसे-पैसे का पाई-पाई का। पर हृदय मे महत्व नही देगें। सबका सब चला जाय तो मौज। सब रह जाय तो मौज। कुटुम्बी रहे तो मौज। सबके सब चले जाय तो मौज। अपनी मौज उनके आधीन नही है। ऐसी मोज आपको मिल जायगी। थोडा सा त्याग करो भीतर से। बाहर से भले ही गृहस्थ बने रहो जहा हो वही बने रहो। भीतर से बेपरवाह करो। देखो, आनन्द मिलता है कि नही। ससार आपकी गरज करेगा। आप गरज करोगें तो ससार ठुकरायेगा।

तिरस्कार करेगा। अपमान करेगा। आपके हृदय से वैराग्य हो फिर आपका कोई तिरस्कार नही कर सकता। अपमान कोई नही कर सकता। आप ही अपमान करवाते हो, बुलावा देकर। क्यो अपनी बेइज्जती करवाओ, भगवान् के अश होकर। इस वास्ते सुख तो केवल परमात्मा मे है।

ना सुख काजी पडितां, ना सुख भूप भयां।
सुख सहजां ही आवसी, तृष्णा रोग गयां॥
न सुख देवराजस्य, न सुख चक्रवर्तिन।
तत्सुख वीतरागस्य मुनेरेकान्तशीलिन॥

देवराज इन्द्र को वह सुख नही। चक्रवर्ती को वह सुख नहीं। धनी आदमी को वह सुख नही है जो सुख राग मिट जाय, भीतर से गुलामी मिट जाय। सग्रह और भोग ये दो मिट जाय। भोग भोगने की और सख्या बढाने की धुन मे लगे हैं। धन बढा लें। धन इकट्ठा कर लें। धनी हो जाय। यह भावना मिट जाय। इकट्ठा रखो। धन आप लाखो रुपया रखो पर गुलामी मत रखो। भैया, गुलामी मत रखो। मालिक बन कर रहो धन के। मालिक बनने का अर्थ क्या है? सबका सब धन चला जाय तो हमारे क्या चला गया। गुलामी होगी तो लाखो रुपयो जमा है और एक लाख खच हो जाय तो मन मे खनखनाहट होती है कि मूलघन खर्च हो गया। मूलघन का क्या करोगे? मूलधन खच नही होना चाहिये। अरे छोरा! अकल नही है मूलधन खच करते हो। मूल किस वास्ते है साहब। खर्च तो कर नही सकते। जैसे कोई कर्जा सिर पर आय–जाय उसका दु ख होता है। ऐसे मूलधन खर्च होने का दु ख होता है। मूलधन खर्च नहीं करना।

कमाओ खाओ। पर पूंजी बढावो कुछ तो। वर्ष मे पाच, दस, हजार पूजी पैदा होनी ही चाहिये।

यह दशा रहेगी नही। इसमे शर्म आनी चाहिये। आ जाय तो लाखो करोडो आ जाय और चला जाय तो चला जाय। कहते तो यह है कि 'रुपयो तो हाथ रो मेल है। पर मैल है कि कालजे री कोर है। अब आ गया तो क्या? चला गया तो क्या? नफा हो गया तो क्या? नुकसान हो गया तो क्या? अपने काम करो। नफा-नुकसान को समझो, व्यापार मे उद्योग करो, नौकरी करो, जो कुछ करो आप उत्साहपूर्वक करो। पर गुलामी क्यो रखो? बहुत आनन्द होगा। बडी मस्ती होगी। बडा सुख होगा।

रुपयो की गुलामी के कारण से मनुष्यो का तिरस्कार हो रहा है। मैंने कहा—भाई रुपये तो काम आते हैं वस्तुओ के द्वारा। स्वय काम नही आते। अन्न, जल, वस्त्र, मकान, स्वय काम आते हैं? रुपये स्वय काम नही आते। रुपयो से बढकर वस्तुए हैं, वस्तुओ से बढकर व्यक्ति। आज दहेज प्रथा इतनी बढ गई कि रुपया दो तो कन्या का सम्बन्ध हो। कन्या का तो तिरस्कार और रुपयो का सत्कार? रुपयो को तो बडा समझते हैं। कन्या बैठी है घर पर, उसको लेते नही है। रुपया लेंगे।

यहा तक मैंने सुना है अखबार मे भी आया है—दहेज कम आया इस कारण उस छोरी को मार दिया। यह मर जाय तो दूसरा ब्याह करेंगे जिससे दहेज अधिक आयेगा। कितनी रुपयो की गुलामी हो गयी। तिरस्कार करते हैं उस बहू का जिसके दहेज कम आया है। देवराणी, जेठानी, सास, ननद सब उसे

नग करने हैं। तुम्हारे बाप ने दिया क्या? घर का घर बिक जाय तो भले ही बिक जाय, पर हमे तो दो रुपया। इतनी गुलामी तुम्हारे भीतर, इस प्रथा को शुद्ध करो भाई। कन्या देखो, जिससे सदा उमर भर काम है। रुपया तो आते जाते रहते है। रुपया के लिए इतना तिरस्कार। इतना अपमान नारी जाति का। बातो मे कह दिया कि नारी जाति का तिरस्कार नही होना चाहिये, आदर होना चाहिये। विधवा ब्याह करो साहब। अब कुवारी को तो वर मिला ही नहीं, विधवा वर रोक लेगी तो क्या दशा होगी।

अरे भाई? अक्ल से काम लो। यो समाज का सुधार होता हैं क्या? शूरवीरता से करना चाहिये कि कुसुम कन्या हमें तो लेना है क्योंकि लडका है हमारे। व्याह करना है, इस वास्ते कन्या दान लेना है। दान भैया! रुपया पैसा का दान भी खराब जिसमे कन्या का दान बड़ा पाप है परन्तु करें क्या? लडका व्याहना है इसलिये कन्या दान लेना पडता है। हमारे को कन्या भगवान् देंगे तो हम भी कन्या दान करेंगे। ऐसे करो तो समाज कुछ ठीक हो। पर रुपयों की गुलामी से ऐसा नहीं होगा।

मनुष्य हो, भगवान् के अंश हो। रुपया आने जाने वाली चीज हैं। कृपा करो।

भगवन्नाम लेते जाओ। असली धन है।

कबीरा सब जग निरधना धनवन्ता नहीं कोय।
धनवन्ता सोई जानिये जाके रामनाम धन होय॥

नारायण, नारायण, नारायण

दिनांक १७ अगस्त, १६८२

॥ श्री हरि ॥

प्रवचन–७

श्रेष्ठ साधन शरणागति

सज्जनो ! जितने साधन हैं उन साधनो में सबसे सरल व श्रेष्ठ भगवान के चरणो की शरणागती है। सुगम भी है व श्रेष्ठभी है। परन्तु अपने मन मे जब बल का, विद्या का, बुद्धि का, वर्ण का, आश्रम का, चतुराई का कुल का, कुछ अभिमान भीतर होता है तो उस पुरुष के द्वारा शरणागति कठिन होती है। क्योकि अपने मे कुछ भी अभिमान है वो बाधक होता है, शरण होने नही देता। अधिक अभिमान के कारण बाधा लगती है। वो अभिमान अगर न रहे साथ-साथ अपने कल्याण की इच्छा पैदा हो जाय, कि मेरा उद्धार कैसे हो ? मेरा कल्याण कैसे हो ? मेरा सदा के लिये दुःख कैसे मिट जाय ? महान् आनन्द की प्राप्ति कैसे हो जाय। ये एक जोरदार लालसा जाग्रत हो जाय तो शरणागति बहुत सरल है।

जैसे मनुष्य सोता है तो नीद लेने के लिये परिश्रम करना नही पडता। ऐसे नही कि इतनी तकलीफ देखनी पडेगी, ऐसा धन्धा किया जायेगा, ऐसे परिश्रम करने पडेंगे तब नीद आयेगी। नींद तो कुछ न करने से आप से आप आ जाती है। वो तो मूढता है, मोह है। भगवान् के चरणो के शरण होके कुछ अभि

मान न रखे और कल्याण चाहता है उसके शरणागति स्वत हो जाती है।

अपना कल्याण चाहता है और अपने मे ऐसा बल नहीं दिखता, ऐसी योग्यता नही दीखती, ऐसा साधन नही दिखता कि जिससे मैं अपना उद्धार कर लू । ऐसी अवस्था मे हे नाथ ! हे प्रभु ! मैं आपके चरणो के शरण हू । सज्जनो ! ऐसा होने पर लोक और परलोक सब तरह का भार भगवान् स्वय अपने पर ले लेते हैं। भार तो भगवान् पर है ही। अपना अभिमान और पुरुषार्थ करते हुए भी होगा तो वही जो भगवान् करेंगे। पर बोझा हमारे सिर पर रहता है।

शरणागत हो जाते हैं तो हमारा भार उतर जाता है। भाइयो-बहिनो, ध्यान दो। हम जो अपनी चिन्ता करते हैं कि कैसे काम चलेगा। ये बिल्कुल फालतू निरर्थक मूर्खता भरा विचार है। काम तो चलाने वाला वो ही है। करने वाला कुछ और ही है वो विलक्षण है। उसके ऊपर भार है। अपनी चिता छोड दे। अर्जुन के कुछ चिन्ता रही। 'न योत्स्य इति गोविन्द मुक्त्वा तुष्णीं बभुव ह (गीता २/६) । ये सातवें श्लोक मे शरण होते हैं। नौ वे श्लोक मे कहते है—मैं युद्ध नहीं करूगा। तब भगवान् हसते हुए उपदेश आरम्भ करते हैं। भगवान् की अत्यधिक दयालुता है।

नहीं तो वहा अठारव अध्याय मे ६३ वें श्लोक मे कहते हैं- 'यथेच्छसि तथा कुरु' (गीता १८/६३) । वह बात यही कह सकते थे—युद्ध नहीं करेगा तो तेरी मर्जी। 'यथेच्छसि तथा कुरु'—तेरे चाह जसे कर। परतु भगवान् का एक विशेष दया

आती है। जीवो पर अत्यधिक दयालुता है। वे कहते हैं किसी तरह से ये जीव अपना कल्याण कर ले अपना उद्धार कर ले। सज्जनो ! आप लोगो के सामने जो कई-कई तरह की घटना आती है उसका अर्थ ये ही होता है कि भगवान् अपनी तरफ खिंचते है। आप बडा-२ सहारा लेते हैं–धन सम्पत्ति वैभव का, पुत्र परिवार का, बल विद्या योग्यता का, राज्य, सम्पत्ति आदि का। तो भगवान् उसको हटा देते हैं। किसी का भी आज दिन तक लौकिक बल भगवान् ने रहने नही दिया और रहने देगे नही। आप रुपयो पर चाहे जितना भरोसा कर ले, विश्वास कर लें। कितना ही झूठ-कपट बेइमानी कर ले ये रुपयो का सहारा रहेगा नही।

भगवान् पर जिम्मेवारी

समझदार आदमी क्यो पापो मे फसे ? भगवान् के शरण होने पर किसी बात की कमी रहेगी नही। सज्जनो ! लक्ष्मी माता पतिव्रता हैं। प्रभु के चरणो के दास बन जाओगे तो ये मैया बड़े प्यार से स्नेह से अपने गोद मे लेकर हृदय लगाकर दूध पिलावेगी। बहुत कृपा करेगी। आपके कमी नही रहने देगी। बालक की कमी मा के हृदय मे खटकती है। बालक जानता ही नही। शीतकाल आने वाला है ऐसा समझ के मा पहले से गर्म कपडा बनाती है। वो खेल मे जाता है खडा करके नाप लेती है। वो समझता है क्यो तग करती है। हम खेल खूब। मा देखती है अभी ठण्डी आ गई। जैसे उसको ख्याल रहता है उससे बहुत अधिक जीवनमात्र का भगवान् को ख्याल है। वो चाहे सदाचारी है, चाहे दुराचारी है। स्वर्ग में हैं—चाहे नरक मे, चौरासी लाख योनि मे है या कही भी है परन्तु भगवान् का

अष्ट है। जीव विमुख हुआ है भूला है। भगवान् विमुख नहीं हुए हैं। भूले नहीं है। सज्जनो ! थोड़ी कृपा करो।

हे नाथ ! हे नाथ ! ऐसे पुकार करके प्रभु के चरणों के शरण हो जाओ। भगवान् की आज्ञा से रात और दिन काम करो, परन्तु चिन्ता मत करो। चिन्ता भगवान् पर धर दो। उसकी आज्ञा पालन करना—तत्परता से उनकी शरण रहना। उसकी हाँ मे हाँ मिलाना। आज्ञा पालन मे बड़े तत्पर रहना। सब प्रभु की सम्पत्ति समझ करके सुचारू रूप से सुरक्षित रखना। सज्जनो पाप नहीं करना, चिन्ता नहीं करना। क्यो करें पाप ? क्यो करे चिन्ता ? जब भगवान् जैसे हमारे मालिक हैं।

मन तू क्यूं पछतावें रे,
सिर पर श्री गोपाल बेड़ा पार लगावें रे।

भगवान् हमारे मालिक है तू क्यो चिन्ता करता है। क्यो घबराता है। क्यो पश्चाताप करता है। चिन्ता दीनदयाल को मो मन सदा आनन्द। चिन्ता फिकर सब भगवान् के चरणों मे रख दो सज्जनो। आप निश्चिन्त हो जाओ। प्रभु आज्ञा पालन मे तत्परता से रहो। जिस वर्ण मे जिस आश्रम म जहाँ आप हैं—चाहे भाई हो चाहे बहिन हो वहा का काम बड़े उत्साह स सुचारू रूप से कर परन्तु चिन्ता हम क्यो करे ? कैसी बढ़िया बात है ?

काम धन्धा बड़ा सुन्दर होगा। चिन्ता करते काम करता है वा काम बढ़िया नहीं होता है। बुद्धि शोके नश्यति। शोक से बुद्धि नष्ट हो जाती है। प्रभु के चरणो का आश्रय लेने से बुद्धि

विकसित होती है। भगवान कहते हैं स्वयं 'तेषां सततयुक्तानां' जो नित्य निरन्तर मेरे मे लगे हुए हैं। प्रेम पूर्वक लगे हुए है। 'तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीती पूर्वकम्'। प्रेम पूर्वक मेरा भजन करते है निरन्तर मेरे मे लगे हैं। 'ददामि बुद्धियोग त येन मामुपयान्ति ते' (गीता १०/१०)। वह बुद्धियोग दूगा जिसस वे मेरे को प्राप्त हो जाय।

चिन्ता करके आप बुद्धि पैदा करोगे भूठ, कपट, बेइमानी, ठगी, धोखेबाजी, ऐसी बुद्धि करोगे जिससे नरक और चौरासी लाख योनि जाना पडे। ये अपनी चिन्ता से होता है। भगवान् के शरण होने से भगवान् वो बुद्धियोग देंगे जिसमे बेडा पार हो जाय। 'तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानज तम' नाशयाम्यात्म भावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता (गीता १०/११)। उनके ऊपर मैं कृपा करता हूँ। उनके अन्त करण मे रहने वाला अज्ञान समौह है उस अन्धकार को मैं देदीप्यमान दिपक के ज्ञान द्वारा दूर कर देता हूँ।

भगवान् अन्धकार दूर करे और बुद्धियोग दे कितनी विलक्षण बुद्धि होगी। कितना विलक्षण प्रकाश मिलेगा। लोक और परलोक दोनो मे करने के लिये आपको बडा भारी प्रकाश मिलेगा। सब तरह का काम करने के लिये आपको प्रकाश मिलेगा। मैंने कहा है,—गीता का विचार करके ठीक तरह से अनुभव करने लग जाय उसके अनुसार चलने लग जाय तो जिन कामो का गीता मे वर्णन नही है, ऐसे कामो मे भी आपकी बुद्धि तेज हो जायेगी। आपको याद होगा मैंने कहा—ब्याह शादी करोगे तो उसमे क्या करना चाहिये ? क्या नही करना चाहिये ? आपकी बुद्धि मे विकास होगा। व्यापार आदि करोगे

ना उसमे वुद्धि का विकास होगा। पापो से तो बच जाओगे और उन कामो मे ही आपको पुण्य मिल जायेगा। जीविका के कर्म हैं वे भगवद्भक्ति मे भर्ती हो जायेंग।

> यत प्रवृत्तिर्भूताना येन सर्वमिद ततम्।
> स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धि विन्दति मानव ॥
> (गीता १८/४६)

जिस परमात्मा से ससार व्याप्त है, जिनसे ससार पैदा हुआ है जिनसे सुरक्षित है ससार। 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य' अपने कर्मो से उस परमात्मा का पूजन करें। आज चिन्ता होती है कि लोगो का निर्वाह कैसे होगा ? आश्रितो का पालन कैसे होगा ? अर्जुन के भी चिन्ता थी कि युद्ध करेगे और वे मर जायेंगे पीछे स्त्री बच्चो की क्या दशा होगी ? अधर्म आकर दबा लेगा तो फिर बहुत ही अनर्थ हो जायेगा। अनर्थ की परम्परा लग जायेगी। ये अर्जुन ने बताई है। अर्जुन की चिन्ता होने के कारण।

जब भगवान् ने कह दिया तू एक मेरी शरण आ जा। चिन्ता मत कर। फिर चिन्ता नही की। 'भार' हृदय पर भार होता है वो भार 'भार' है। काम करना 'भार' नही होता। व्यवहार का परमार्थ का काम उत्साह से करता है। अर्जुन ने भी शरण होने पर युद्ध किया है बड़े सुचारू रूप से साङ्गोपाङ्ग ठीक रीति से। युद्ध मे अगर चूक जाय तो गला कट जाय। भगवान् के आश्रित होकर युद्ध किया तो भगवान् ने बचाया।

कर्ण की कथा

कर्ण के पास एक शक्ति थी वीरघातिनी। बात क्या थी ?

कर्ण जब जन्मा है तो जन्म के समय ही उसके शरीर के ऊपर एक कवच था। चमडी की तरह ही चमडी दिखे परन्तु कोई शस्त्र वस्त्र भेदन न कर सके। ऐसा स्वाभाविक कवच था। जन्म के समय कानो मे कुण्डल थे। उनका बडा प्रभाव पडता था। माता कुन्ती ने एक बक्से मे बन्द करके खूब अच्छी तरह सुरक्षित करके नदी मे बहा दिया। हस्तीनापुर मे वो जमुनाजी की धारा गई। अधीरथ नाम का एक सूत था उसको वो बक्सा मिला, खोला तो उसमे छोटा सा सुन्दर बालक। अपनी स्त्री को लाकर दे दिया कि भगवान् ने तेरे को बेटा दे दिया। राधा नाम था उसका। उसने खूब पालन-पोषण किया। कर्ण सूर्य भगवान् की उपासना मे लग गया। सूर्य को वह इष्टदेव समझता था। सूर्य तो समझते थे मेरा पुत्र है परन्तु ये समझते थे इष्टदेव।

इसके पास विलक्षण शक्ति थी। इन्द्र को इसका डर था। इन्द्र का पुत्र अर्जुन है। सूर्य का पुत्र कर्ण है। एक दिन उसने कर्ण से वो कवच माग लिया, कुण्डल माँग लिये। कर्ण दानी था। उसके लिये लोगो मे ये कहावत है। सुबह के समय कोई आता है तो कहते है भाई! कर्ण की वक्त है। दान देता भजन स्मरण किया करता। उसका वक्त दिया हुआ था समय दिया हुआ था। जब दान दिया करता तो कोई कुछ भी माँग ले तो ना नही कहता था। कर्ण के मरने पर भगवान् ने अर्जुन से कहा। आज इस भू-मण्डल से एक विशेष दानी चला गया। उसके जोडी का दान देने वाला नही है। इन्द्र ने जब माग लिया उनसे कवच। तो वो चमडी उतार कर दे दी।

श्रेष्ठ पुरुषो के लिये काई अदेय वस्तु नही है। त्वचा उतार

कर के दी। कुण्डल दे दिये कर्ण ने। उसमें उसकी रक्षा में बाधा पड़ी। मर गया नहीं तो मरता नहीं उनग। वैरी से किसी रा हो नहीं मरता। ऐसे वो कर्ण बड़ा धर्मात्मा पुण्यात्मा था। पाण्डवों के साथ इसका विरोध हो गया था। द्वेष हो गया था। जिसमें भी अर्जुन के साथ। इन्द्र ने प्रसन्न होकर कर्ण को एक ऐसी शक्ति दी कि वो जिस पर भी छोड दे तो जिन्दा नहीं बच सकता। वह शक्ति कर्ण ने अर्जुन को मारने के लिए सुरक्षित रख रखी थी।

एक दिन माता कुन्ति ने कर्ण से एकान्त मे कहा। देख कर्ण तू मेरा बेटा है। मैं तेरे से मांगती हूँ। कर्ण बिगडा तू मा कैसी ? जो मा अपने बच्चे को नदी मे बहा दे वो मां है ? ये काई मा का काम होता है, परन्तु आप मा हो। तो मागा क्या मागता हा। क्या मागना चाहती हो बोलो ' बेटा तेरे से पाच बेटा चाहती हू। इन पाडवो को मारना नहीं। कर्ण ने कह दिया कि माताजी। आपने पाच बेटा मागे। तो मैंने पाँच बेटा दिये। युधिष्ठर, भीम, नकुल, सहदेव को तो मारूंगा नहीं। अर्जुन के साथ मेरा है वैर। अर्जुन अगर मेरे को मार दे तो आपके पाच बेटे। मैं अर्जुन का मार दू तो मैं बेटा तुम्हारा। तुम्हारे पाच बेटे तैयार। मैं तुम्हारे पक्ष में आ जाऊंगा। एक बात को याद रखना। ये बात युधिष्ठिर महाराज से मत कहना। अगर यह दोनी तो ये पाण्डव सदा दुःखी रहेंगे ' ध्यान देना भाइयो ! कर्ण के मन मे कितना विलक्षण विचार है ? मै मर जाऊं बेशक दूसरो को दुःख न हो। पाण्डवो को कष्ट न हो। ऐसे ही कृष्ण भगवान् से कहा। कृष्ण भगवान् ने कहा तू कुन्ती का बेटा है। इसने कहा आप युधिष्ठिर को मत कहना।

युधिष्ठिर से कह दोगे तो मेर साथ युद्ध नही करेंगे। दुर्योधन के साथ करेंगे। दुर्योधन मेरे को नहीं छोडेगा मैं दुर्योधन को नहीं छोडूंगा। मेरे साथ युद्ध युधिष्ठिर करेंगे नही। इसमे पाण्डव दु ख पावेगे। इस वास्ते युधिष्ठिर का मत कहना। युधिष्ठिर से छिपी हुई बात रही। सब युद्ध समाप्त हो जाता है जब युधिष्ठिर महाराज अपने बडो को पानी देने लगे है। उस समय मा कुन्ती ने कहा बेटा कर्ण को भा पानी दे। उनको भी जल दो वो तुम्हारे बडे भाई है। युधिष्ठिर को बडा दु ख हुआ।

कहते हैं मा आज दिन तक मैं इस बात को जान नही सका। मेरे मन मे आती थी। जब कर्ण के चरणो की तरफ मेरी दृष्टि जाती तो मा याद आ जाती। कुन्ती मा याद आती। वो मां के चरणो के रोजाना नमस्कार करते। चरणो के दर्शन रोजाना करते थे। कर्ण के चरणो को देखते ही कु ती याद आ जाती थी। मैं इस बात को जान नही सका। क्या कारण है ? कर्ण को देखता हू तो मा याद आती है। आपके व कर्ण के चरण मिलते-जुलते थे। इस वास्ते मा की याद आ जाती थी। मैंने बडी गलती की उस कर्ण के साथ मने द्वेष रखा। मैंने कर्ण को मरवा दिया आपने ये बात प्रगट नही की। ऐसे पश्चाताप हुआ है। लोको मे एक कहावत है कि युधिष्ठिर ने श्राप दे दिया कि स्त्रियो के मन मे बात खटेगी नही। इतनी छिपा ली तैंने कितना विलक्षण उन लोगो का भाव। व्यास धर्मावतार युधिष्ठिर जी कितना भाव विचित्र रखते थे।

असली धन समय का सदुपयोग

सज्जनो ! अपने लिये पाप नहीं करते थे, अन्याय नहीं करते थे, बडे धर्म मे रहते थे,, अपनी मर्यादा मे रहते थे। यहा

के लोभ मे आकर अगर हम गडबडी कर लेंगे। तो गडबड़ी करने पर भी यहा धन हो जायेगा, ये कारण नही है। बिल्कुल ये नही है। कोल किरातो ने क्या कहा ? दिन और रात पाप करते हैं। पाप करत निसि बासर जाहीं। नहि पट कटि नहिं पेट अघाहीं ।। (मानस २/२५०/५)। कटि पट का तात्पय लज्जा निवारण के लिये तो पूरा कपडा नही है। पेट भरने के लिये अन्न नही है। रात दिन पाप करते हैं। पाप करने वाले सबके सब धनी बन जाय ये बिल्कुल गल्ती बात है। है नही। आप खूब दृष्टि पसारकर देख लें। पाप करो तो धन आने वाला आ जायेगा। पाप नही करो तो धन आने वाला आ जायेगा। पाप करते रहो तो धन जाने वाला चला जायेगा। पाप न करो तो भी जाने वाला चला जायेगा। धन का सम्बन्ध प्रारब्ध से हैं। अभी की हुई क्रिया से नहीं हैं।

जिसमे भी पाप क्रिया का फल धन नहीं है। पाप क्रिया का फल तो दण्ड हैं। चाहे नरक भोगो, चाहे चौरासी लाख योनि भोगो। इस वास्ते थोडा सा ख्याल रखो। रोगी आदमी थोडी सी जीभ वश मे रखता है तो नीरोग हो जाता है। जीह्वा के वश में हो कुपथ्य कर लेता है तो रोग बढ जाता है। ऐसा थोडा सा धैर्य रखकर के सयम करके आप अगर पापो से बच जाय तो बडा भारी लाभ होगा। लौकिक लाभ तो होगा वो होना है जितना ही होगा। लिख दिया विधाता सेख नहीं टलने का, कछु राई नहीं घटे ना तिल कहो बढ़ने का। राई तिल का फरक नहीं पडेगा, तो वो आयेगा। अपना काम कर्तव्य करना है। बडे उत्साह से, तत्परता से, न्याययुक्त काम करना है। ये तो मनुष्य का कर्त्तव्य है। ऐसे कर्त्तव्य का पालन नहीं करता

वो मनुष्य कहलाने का अधिकारी नही है। आलस, प्रमाद मे, खेल, तमाशो मे हसी-दिल्लगी मे, बीडी-सिगरेट मे तास चौपड मे नाटक-सिनेमा मे समय बरबाद कर देता है बहुत बडा भारी नुकसान करता है। असली धन पास मे उम्र है। उसका नाश कर देते हो। सज्जनो ! बडा टोटा लगता है बडा घाटा लगता है। अभी आपको पता नही है।

अपनी चीज नष्ट नही होती है विश्वास मनुष्य के नही होता है। सामने देख करके आदमी ललचा जाता है। ये रुपये ले लू। परन्तु लोभ और पाप आपके साथ मे रहता है। पैसे भी मरने पर यही रहते है। कमाते हैं पैसे वे भी पूरे आप खर्च कर नही सकते। अपने कुटुम्ब मे भी पूरे खर्च नही कर सकते। बचेंगे। आप लोग पैसे वाले हो। हम लोग बिल्कुल ऐसे फकीर है उनके भी लगोटी तुम्बी, बचती है मरते है जब। ये नही पहले सब खत्म हो जाय पीछे मरें ऐसा नही। निर्वाह की चीजें बचती है। उसके लिये पाप क्यो करें ? साथ ले जाने वाली पूजी को खराब क्यो करें ? काम उत्साह से करो। बडी मुस्तैदी से करो अच्छी तरह से। समय को खर्च मत होने दो। समय को बर्बाद मत होने दो। सावधानी से भजन, ध्यान, सत्सग, स्वाध्याय, अच्छी अच्छी पुस्तको का पढना, नाम जप करना, कीर्तन करना, इसमे लगाओ समय को। 'एक-एक श्वास जात लाख लाख हीरा को'। सन्तो ने कहा, बडा कीमती स्वास है। ये कीमती स्वास हमारे निरर्थक न चले जाय। ससार का काम धन्धा, उपकार का, सेवा का, घर का करो और भगवान् को याद रखो। भरोसा परमात्मा का रखो। झूठ कपट का भरोसा रखते हो। क्या ये कल्याण कर देगा ? ये उद्धार कर देगा

क्या ? सज्जनो ! कृपा करो ! मन मे आती है कि आपको अपने उद्धार की बात कौन सुनायेगा ? व सुनने को कब मिलेगी ?

केवल भगवान का सहारा

पैसा कमाने की व झूठ कपट की बात तो आपके जो हितैषी कहलाते हैं वे भी सिखा देगे। वकील लोग भी सिखा देंगे। पैसा देकर सीख लो बिना पैसा देकर सीख लो, लोगो को देखकर सीख लो, बड़ी पाठशाला चल रही है। परन्तु पापों से बचाकर आपका उद्धार कौन करेगा ? भगवान् करेंगे। सिवाय भगवान् के और कोई है ही नहीं।

उमा राम सम हित जग माहीं। गुरु पितु मातु बन्धु प्रभु नाहीं॥
(मानस ४/१२/१)

भगवान् के सिवाय भाइयो ! बहनों ! हमारा सच्चा हितैषी नही है। उसके चरणों के शरण हो जाओ बस। मन में हे नाथ ! मैं आपका हूँ। आप मेरे हैं। ऐसे चरणों के शरण हो जाओ। जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये'—(गीता ७/२९)। प्रभु के चरणो का आश्रय लेकर के यत्न करो। शरण भगवान की रखो भाई। बल, बुद्धि, विद्या, धन का नहीं। ये कच्चा सहारा है गोस्वामी जी कहते हैं—'और आस विश्वास भरोसो हरो जीव जड़ताई'। जीव मे अगर जड़ता है मूर्खता है भूल है, बड़ी भारी गल्ती है तो क्या है ? आपके सिवा अन्य का जो सहारा है आश्रय है। 'और आस विश्वास भरोसो'। भगवान के सिवा आशा रखना, विश्वास रखना, भरोसा रखना, ये हरेहु जीव जड़ताई'। ये जीव की जड़ता है।

एक भरोसो एक बल, एक आस विश्वास।
एक राम घनश्याम हित, चातक तुलसीदास॥

भगवान् का आश्रय लिया गोस्वामी जी महाराज ने। उनकी रामायण से कितनो का उद्धार हो रहा है और होगा और हुआ है जिसकी कोई गिनती नही कर सकता। उनमे इतनी विलक्षणता कहा से आ गई ? सज्जनो ! उन चरणो से आई। प्रभु के चरणो से। 'एक भरोसो एक बल एक आस विश्वास' उसी का ही बल, उसी की ही आशा, उसी का ही विश्वास है। एक राम घनश्याम हित, जैसे चातक होता है बद्दल की तरफ देखता है, ऐसे घनश्याम की तरफ। ऐसे चातक तुलसीदास। घनश्याम हमारे रामजी के चरणो के शरण हू। उसके लिये मैं चातक हूँ। और हमे लेना नही है।

सज्जनो ! प्रभु के चरणो के शरण हो जाओ। भगवान् ने मात्र जीवो को शरण ले रखा है। सज्जनो याद करो। सब जीवो को भगवान् ने शरण ले रखा है। केवल आपकी हा मे हा मिलाने की जरूरत है। भगवान् ने तो शरण ले रखा है। कहे क्या पता ? इतने भाई बहिन बैठे है ? मैं पूछू आपसे इतने भाई बहिन बैठे है। कोई एक भी भाई हिम्मत करके बतावे कि मैने जाकर के यहा जन्म लिया ह। है याद आपको। जन्म की बात याद नही। अभी जैसा आप विचार करते है कि सुख मिले व दुख ना मिले, ऐसा विचार भो करते है, उद्योग भी करते है, परिश्रम भी करते है, परन्तु क्या फिर भी मिल जाता है क्या ? दुख हम नही चाहते ता भी भेज देते है। दुख के भेजते समय भगवान् हमे पूछते ही नही, बोलते ही नही, और भेज देते है। क्या भेज देत है ? कि भगवान् समझते है, मानते है कि ये मेरे हैं। भगवान् कहते है कि य मेरे ह। सोलहवे अध्याय में आसुरी सम्पत्ति का वर्णन है। वहा भी कहते है, "तानह द्विषत

क्रूरान्संसारेषु नराधमान्" ऐसे द्वेष रखने वाले मनुष्यों में क्रूर, अधर्म, उनको मैं आसुरी योनि में गिराता हूँ। भगवान् को पूछें क्यों गिराते हैं महाराज ? तू पूछने वाला कौन ? दुष्ट से दुष्ट पापी से पापी उनको भी भगवान् अपना समझते हैं। अपनी तरफ से आसुरी योनि में गिराते हैं त्रास देते हैं शुद्ध बनाते हैं।

जैसे सुनार जब सोने को अपनाना चाहता है तो वो अग्नि में देकर खूब तपाता है जलाता है कि जिसमें उनकी विजातीय धातु जल जाय। ऐसे भगवान् किये हुये पापों को दूर करके जलाते हैं नष्ट करते हैं। बालक खेलता है तो खेलते खेलते कादा कीचड़ मैला लगा लेता है, मां स्नान कराती है। स्नान करते समय रोता है। मौका लगे तो भाग जायगा। मां हाथ पकड़ कर लाती है। जाने नहीं देती। हाथ से रगड़ कर मैल उतारती है। उसको साफ करती है। जल डाल देती है ऊपर से। तो छोरे का श्वास ऊपर चढ़ जाता है। परन्तु इसको दया नहीं आती। अरे भाई ! दया ही तो है भरी हुई। वो बालक नहीं समझता है। बच्चा है। ऐसे रगड़ देती है तो बच्चा समझता है अरे ! मां दुःख क्यों देती है ? तैंने मैल क्यों लगा लिया बता ? अब कौन सा धन्धा करने गया था। कौन सा आवश्यक काम था। जो लगा लिया मैल ऐसे आप झूठ कपट करके मैल लगा लेते हो। मैल भगवान् को सुहाता नहीं है, ये अपना प्यारा लाला है, बच्चा है इस वास्ते ज्यों कष्ट देते हैं। क्यों चिल्लाता है टीं टीं करता है कि भगवान् ने दुःख दे दिया। भगवान् के खजाने में दुःख है ही नहीं, तु दुःख कहां से लाया। उधार लाया कहां से ? है ही नहीं। वो साफ करना चाहते हैं। मैला देखना चाहते नहीं।

काशीजी मे एक विद्यार्थी रहता था। वो पढाई करता था। मामूली खर्चा मिलता था और अपने पढाई चलती थी। माता उसका प्रबन्ध करती थी। मा जब बीमार हुई मरने लगी तब कहा बेटा तू घबरा मत। कुल देवी है, शक्ति है, अपनी मा है। तुम्हारे कोई आपत्त हो तो ये माँ का मन्त्र जपो और मा को याद कर लेना। सदा की मा तो बेटा वो ही है। हम तो नकली है उसको याद कर लेना। मा मर गई अब वो पढाई करने लगा।

एक जगह ट्यूशन होता था जहाँ कुछ तनख्वाह मिल जाय। पढाने के लिये जगह खाली थी। कइयों ने दरख्वास्त दी। उसने भी पत्र लिखा कि मेरे को मिल जाय, नही मिली। दूसरे की नियुक्ति हो गई तो उसके हुआ दुःख। रात्रि मे जपता था माँ का मन्त्र। माला फेंक दी और रूठ करके सो गया। मेरी ट्यूशन मिलती थी जिसमे आपने बन्द कर दिया। अब खर्चा कहाँ से लाऊ और मेरी पढाई कैसे हो। सो गया नीद आ गई। नीद मे माँ उसको गोद मे लेती है। ऊपर हाथ फेरती है कि बेटा मैं तेरे को छोटी जगह पर नही देखना चाहती। ऐसा कहा नीद खुल गई। अब मन मे आवे। छोटी बडी जगह तो ठीक पर खर्चा नही। रोटी और पुस्तको का भी खर्चा नही। कैसे काम चलाऊ? कैसे पढू? अब कहती है छोटी जगह देखना नही चाहती। छोटी मोटी जगह क्या होती है। थोडे दिनो बाद परीक्षा हुई—परीक्षा मे बडे अच्छे नम्बर आये। जितना ट्यूशन मिलता था उतनी छात्रवृत्ति मिलने लग गई। कि भई लड़का बडा अच्छा है। इतने रुपये दे दिये जाय छात्रवृत्ति के। अब पढाई खोटी भी करनी नही पडी और नौकरी भी करनी नही पडी। इज्जत भी बढ गई पैसा भी आ गया।

अब किस तरह से भगवान् करते हैं तो हम जानते नहीं। उसके कुछ समझ मे नही आई बात। कि माँ कहती है मै तेरे को छोटी जगह देखना नही चाहती। क्या करेगी अब ? मा ता सब काम करती है। वो जगमाता है। भगवान् को 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव" ये तो हम अलग-अलग नाम कहते हैं। वो ही माता है वो ही पिता है। "माता धाता पितामह"। धाय भी वो ही है। दादा भी वो ही है। दादी भी वही है। सब कुछ हमारे "त्वमेव सर्व" भगवान् हैं हमारे। ऐसे भगवान् के शरण रहो।

भगवान् ने शरण ले रखा है, अपना रखा है आपको। सुख दु:ख भेजते हैं तो कोई सम्पत्ति नही लेते। क्यों भेज देते हैं कि अपना मानते ह। ये मेरे ह। इतना जब अपनापन भगवान् रखते हैं अपने तो चिन्ता क्या कर। हम तो भगवान् की आज्ञा पालन करना है। उनकी आज्ञा के अनुसार सुचारु रूप से काम धन्धा करना है। चिन्ता नही करना है। अब कैसे करेंगे। वे जाने। बड़ी बड़ी आफत आई भक्तो मे।

पाण्डवो मे कोई कम आई है क्या आफत। प्रह्लादजी के ऊपर त्रास कम आई है क्या। सुनते है कितना त्रास दी गई। इतने पर भी प्रह्लाद भगवान् को याद करता है। ऐसा नही कि आफत है तो छोड़ा। इसमे बहुत त्रास आती है छोड़ दो। ऐसा छोड़ा नही। वो तो सब भगवान् का ही भजन करता है। ऐसे प्रभु के चरणो के आश्रित रहने वालों की सदा विजय होती है। सदा परन्तु कब होगी ? कैसे होगी ? कुछ पता नहीं। लोक, परलोक मे भला जरूर है। इसमे सन्देह नहीं। यों तो भगवान और सन्तो की वाणी पढ़ो। अच्छे अच्छे महापुरुष हो

गये हैं कह गये हैं उनके वचनो पर विश्वास करके, उन चरणो के शरण हो जाओ। फिर कष्ट आयेगा, बेइज्जती होगी तो हमारी क्या होगी—उसकी होगी। द्रौपदी ने क्या कहा — जाएगी लाज तिहारी नाथ मेरो का बिगडेगो, कन्हैया मेरो का बिगडेगो, मेरा क्या बिगड़ेगा महाराज। "मो पति पाँच, पाँच के तुम पति, अब पत जाएगी तिहारी" य पत किसकी जायेगी। आप सबके पति मालिक हो। "सूर के स्वामी तुम आज मरोगे देखोगे द्रुपदा उघाडी" द्रौपदी उघाडी हो गई, तुम्हारे को शर्म नही आयगी। अरे जो मालिक होना है उसको शर्म आती है। लौकिक कहावत है कि बहू उघाडी फिरे तो ससुरे की फूट गई क्या। बडे है, मालिक है, क्या उनको शर्म नही आयेगी। नही आवे तो वे निशर्म है नही तो हम निशर्म ही सही। हमारी क्या शर्म है। हमारी कोई इज्जत अलग है क्या? ऐसे भगवान् के चरणो के शरण रहना बहुत बढिया उद्धार का उपाय है। गीता ने तो कहा है कि "मामेकं शरणं व्रज"। अनन्य भाव से मेरे शरण हो जा तू चिन्ता मत कर। धर्म का निर्णय न कर सके तो उस धर्म को मेरे पर छोड दें। सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज (गीता १८/६६)।

महाभारत युद्ध की घटना

तो कर्ण के पास शक्ति थी। कुण्डल और कवच की बात तो कह दी, युद्ध के समय घटोत्कच ने युद्ध किया। जो भीमसेन का हिडिम्बा से पैदा हुआ राक्षस था। पाण्डवो के पक्ष मे था। रात्रि मे इतना बडा भयकर युद्ध किया कि कौरवो को चकरा दिया एकदम। निराश हो गये जीने से, विजय तो दूर रही। दुर्योधन ने कहा कर्ण! इसको मारो किसी तरह से। उसी

शक्ति से मारो। तो करण ने कहा वो शक्ति मैंने अर्जुन के लिये रख छोडी है। कहते हैं रात्रि मे ये घटोत्कच पीस डालेगा पहले ही। फिर पीछे क्या काम आवेगी। करण को कहा तो करण ने शक्ति छोडी। वो चमचमाती हुई शक्ति जैसी। घटोत्कच ने अपना शरीर बढाया आकाश मे था वो। इतना बढाया कि कौरव सेना सब की सब दब जाय। कहते हैं भागो-भागो यहा से। वो शक्ति लगी और गिरा धडाम से। एक चौथाई सेना तो दब गई, मर गई। ऐसी शक्ति छोडी। घटोत्कच के मरने से दुख हुआ पाण्डवो को कि हमारा ऐसा वीर मर गया। भगवान् ऐसे पीताम्बर करके नाचने लगे और अर्जुन को उठाकर हृदय लगाते है। आज मेरा अर्जुन बच गया। मौज हो गई। पाण्डव पक्षी कहते हैं आज हमारे पक्ष का इतना बडा वीर मारा गया आपको खुशी आती है। भगवान् ने कहा कि मैं पाण्डवो का पक्षपाती नही हूँ। मै धर्म का पक्षपाती हूँ। ये राक्षस बनता तो राक्षसपना करता—मेरे को मारना पडता। ये तो ठीक ही हुआ एक साथ दो काम हो गया। करण के पास जब तक शक्ति थी तब तक मेरे को रात्रि मे नींद नहीं आती थी। सोचता था और जब जब करण आता सामने तब उसको भुला देता कि कहीं शक्ति न छोड दे। शक्ति को याद नहीं रहने देता। ऐसी मैं सावधानी रखता था। अब मौज हो गई आनन्द हो गया। मेरा अर्जुन बच गया।

करण की एक विलक्षण बात याद आ गई। ये युद्ध करता था उस समय एक सांप आया। बडा जहरीला था उसने कहा तू बाण मे मेरे को लगा दे। अर्जुन को मैं मार दूंगा। वो गोरा था, खाण्डीव वन दाह किया। उस समय अर्जुन ने गरणजर

बाघ दिया जिससे कोई जन्तु भीतर जा न सके। बाहर सब का सब अग्नि को जलाने दे दिया। अग्नि को अजीर्ण हो गया था। वो जलाते समय एक सर्पिणी अपने मुख मे बच्चे को लेकर ऊपर को जा रही थी। उस जाती हुई को अर्जुन ने काट दिया। सर्पिणी तो मर गई। वो बाहर गिर गया। वो कहता है मेरी मा को मार दिया उसको म मारूँ। तू मुझे ले ले। कर्ण ने कहा, 'कर्ण दूसरे की मदद नही लेता है। वो घुस कर बैठ गया तरकस मे। बाण लिया और कर्ण ने सधान किया। बाण अर्द्ध-चन्द्राकार भी होता है जिसमे गला कट जाता है। ऐसा बाण सधान किया। शल्य सारथी ये कृष्ण भगवान् के समान ही। वे बडे होशियार थे। वे कहते है कर्ण तेरा बाण है ठीक, निशाना बढिया नही है कारण कि ज्यो ही बाण सधान किया। सधान करते ही भगवान् ने देखा कि अब तो मौत आई तो जोर से ऐसा खुरे का झटका दिया जिससे घुटनी टिक गई। रथ नीचा हो गया। अर्जुन के वो बाण यहा लगा मुकुट मे। वो जलता हुआ खत्म हो गया। कहा शल्य ने कि थोडा नीचे कर दो, तो कहा कि कर्ण सधान एक बार ही करता है। दो बार बदलता नही। बोलो बाण चलाने मे-थोडी सी नोक ऐसे करनी पडती थी। सत्य पर कितनी निष्ठा है। एक बार सधान कर लिया। निशाना बना लिया। अब इतना नीचा करना भी असत्य मानते हैं।

आज झूठ कपट करती है, उन्ही भाइयो की ये सन्तान। अपने बडको ने क्या किया। मरना स्वीकार पर असत्य स्वीकार नही। 'नहिं असत्य सम पातक पुजा। गिरि सम होहिं कि कोटिक गुजा॥ (मानस २/२७/५)। ऐसे डटे रहे तो आज

फर्णा का भी नाम लेते हैं । ग्रादर से नाम लेते हैं । वो ग्रर्जुन क विपक्ष मे था । अरे पक्ष मे हो विपक्ष मे हो क्या बात है । सच्चे पुरुष सच्चे ही होते हैं अच्छे पुरुष ग्रच्छे ही होते हैं । किसी जगह जाय ठीक होते है ।

भाइयो, बहिनो ! भगवान् के चरणो के शरण रहो ग्रौर सच्चाई से लोगो मे व्यवहार करो ।

नारायण, नारायण, नारायण,

दिनाक १६ जुलाई, १६८२.

सुन्दर समाज का निर्माण

लेखक

स्वामी रामसुखदास